भारतीय जनसंघ

घोषणाएं व प्रस्ताव

1951-72

भाग 3

प्रतिरक्षा व वैदेशिक मामलों पर प्रस्ताव

12C
2068

भारतीय जनसंघ

घोषणाएं व प्रस्ताव

भाग 3

प्रतिरक्षा व वैदेशिक मामलों
पर
प्रस्ताव

भारतीय जनसंघ
केन्द्रीय कार्यालय
विट्ठलभाई पटेल भवन
नई दिल्ली-110001, भारतवर्ष

भारतीय जनसंघ

घोषणाएं व प्रस्ताव

भाग 3 { प्रतिरक्षा व वैदेशिक मामलों पर प्रस्ताव

मूल्य { साधारण जिल्द 13.00 15.00
पक्की जिल्द 16.00 20.00

प्रथम संस्करण : जुलाई 1973

प्रकाशक :
भारतीय जनसंघ
केन्द्रीय कार्यालय
विट्ठलभाई पटेल भवन
नई दिल्ली-110001, भारतवर्ष

मुद्रक :
रूपक प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा,
दिल्ली-110032, भारतवर्ष

प्रस्तावना

भारतीय जनसंघ गत 21 अक्तूबर 1972 को अपने जीवन के 21 वर्ष पूर्ण कर, तरुणाई में प्रविष्ट हो चुका है। भारत जैसे प्राचीन राष्ट्र के जीवन में दो दशक अधिक महत्त्व नहीं रखते, किन्तु जनसंघ के लिए यह कालखंड अत्यधिक मूल्यवान है, क्योंकि यह उसके जन्म और प्रारंभिक जीवन की कहानी प्रस्तुत करता है।

जब जनसंघ एक नये राजनीतिक दल के रूप में अस्तित्व में आया तब देश विभाजनोत्तर समस्याओं में उलझा हुआ था। कांग्रेस नेतृत्व का यह आशावाद कि पृथक पाकिस्तान की स्थापना से साम्प्रदायिक घृणा और संघर्ष का दीर्घकालीन अध्याय सदा के लिए समाप्त हो जायेगा, फलीभूत नहीं हुआ था। हिन्दू-मुस्लिम द्वन्द्व समाप्त होने के बजाय, विस्तृत होकर, भारत-पाक संघर्ष में बदल गया था। जम्मू-काश्मीर पर पाक आक्रमण कायम था। पूर्वी पाकिस्तान (अब बंगलादेश) में हिन्दुओं का योजनाबद्ध विनाश चल रहा था। पाकिस्तान के प्रति सरकार की नीति के संबंध में, जो एक दृष्टि से विभाजन के पूर्व की मुस्लिम तुष्टीकरण की नीति का ही विस्तार मात्र थी, व्यापक जन-असंतोष था। यहां तक कि स्वयं नेहरू मंत्रिमंडल में ही गहरे मतभेद थे, जो डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी के त्यागपत्र के साथ प्रकाश में आ गये।

यह नितांत स्वाभाविक था कि इस विशेष परिस्थिति में गठित राजनीतिक दल पाकिस्तान के खतरे के प्रति देश को सावधान और सन्नद्ध करने पर सर्वाधिक बल देता। किसी देश के लिए और विशेषतः भारत जैसे नव-स्वतंत्र और विभक्त राष्ट्र के लिए अपनी स्वतंत्रता और अखण्डता की रक्षा से बढ़कर और क्या कार्य हो सकता था? किन्तु जनसंघ नेतृत्व यह भली भांति जानता था कि किसी राष्ट्र की सुरक्षा के लिए सैन्य बल के साथ-साथ आर्थिक तथा औद्योगिक शक्ति का होना नितांत आवश्यक है। यही कारण है कि 21 अक्तूबर 1951 को स्वीकृत अपने प्रथम घोषणा-पत्र में जहां जनसंघ ने भारत को 'शक्तिशाली और सुसंगठित' बनाने का ध्येय सामने रखा, वहां उसकी 'सुसम्पन्नता' पर भी जोर दिया। घोषणा-पत्र में भारत को 'एक सामाजिक और आर्थिक जनतंत्र' बनाने की बात कही गई 'जिसमें व्यक्ति को समान अवसर और स्वतंत्रता हो'। समान अवसर का सिद्धांत दलित तथा उपेक्षित वर्गों के लिए कठिनाई का कारण न बन

जाय, इस दृष्टि से उनको 'आर्थिक और शैक्षणिक प्रगति के लिए विशेष सहायता का प्रतिपादन किया गया।

आर्थिक प्रश्नों पर जनसंघ का दृष्टिकोण प्रारम्भ से मतवादी न होकर व्यवहारवादी रहा है। पूर्ण राष्ट्रीयकरण और खुली छूट दोनों को अस्वीकृत करके जनसंघ ने एक मध्यम मार्ग का अवलम्बन किया। उसने प्रतिरक्षा उद्योगों के राष्ट्रीयकरण का समर्थन किया, किन्तु "अन्य उद्योगों को उत्पादन तथा उपभोक्ता दोनों के हितों का ध्यान रखते हुए राज्य के नियंत्रण के अधीन व्यक्तिगत साहस का अवसर प्रदान करने" की नीति अपनाई। आर्थिक उन्नति के लिए जनसंघ ने सन् 1951 में "उत्पादन में वृद्धि, वितरण में समानता तथा उपभोग में संयम" के जिस त्रिसूत्र का उच्चारण किया था वह ग्राज भी कितना सुसंगत, उपादेय तथा व्यावहारिक है, यह बताने की आवश्यकता नहीं है।

जमींदारी का उन्मूलन तथा कृषक को भूमि का स्वामित्व देने, श्रमिक को उद्योग के लाभ में साझीदार बनाने, थोड़े उद्योगपतियों को अपने हाथों में देश की आर्थिक शक्ति को केन्द्रित करने से रोकने, अनुचित लाभ की प्रवृत्ति पर अंकुश लगाने व विभिन्न वर्गों की आय में बहुत अंतर न रहे इस दृष्टि से कराधान करने के सुझाव देकर जनसंघ ने असंदिग्ध रूप से यह स्पष्ट कर दिया था कि वह यथास्थिति को बनाये रखने के लिए राजनीति के रंगमंच पर नहीं आया। वह परिवर्तन में विश्वास रखता है, किन्तु परिवर्तन भारतीय जीवन मूल्यों के अनुकूल ग्रौर लोकतांत्रिक तरीकों से होना चाहिए।

सन् 1951 से लेकर 1972 तक की जनसंघ की यात्रा अनेक उतार-चढ़ावों से परिपूर्ण रही है। उसने 5 चुनाव लड़े हैं और जय-पराजय के मीठे-कड़ुवे फलों का समान रूप से रसास्वादन करते हुए भारतीय राजनीति में अपने लिए एक स्थान बनाने में सफलता पाई है। इसी बीच में देश की राजनीति में भी गुणात्मक परिवर्तन हुए है। बालिग मताधिकार, शिक्षा के प्रसार, संचार-साधनों के विस्तार तथा प्रैस और रेडियो ने जन-जागृति को बढ़ाने में योगदान दिया है। आम आदमी अपने अधिकारों के प्रति अधिक सचेत हुग्रा है। सदियों से दलित तथा उपेक्षित वर्ग ग्रपनी सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए व्यग्र है। राष्ट्रीय समृद्धि में साझीदार बनने की जनसाधारण की इच्छा नितांत स्वाभाविक है। ऐसी स्थिति में किसी भी ऐसे राजनीतिक दल के लिए जिसने जन-कल्याण का लक्ष्य सामने रखा है, जनता की आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं को समझना और उनके साथ स्वयं को अधिकाधिक एकाकार करना आवश्यक है। भारतीय जनसंघ ने ऐसा ही किया है। जनसंघ की आर्थिक नीतियों तथा कार्यक्रमों का केन्द्र-बिन्दु वह 'दरिद्र' है जिसमें हमने 'नारायण' के दर्शन किये हैं और जिसे सुखी तथा सन्तुष्ट बनाने से बढ़कर और कोई कार्य नहीं हो सकता।

एक मध्यमवर्गीय दल के नाते जनसंघ को अतिदक्षिण तथा अतिवाम दोनों ओर के हमलों का सामना करना पड़ा है। आर्थिक क्षेत्र में खुली छूट के

हिमायतियों ने हमें कम्युनिस्टों से भी अधिक बुरा कहा है। दूसरी ओर कथित प्रगतिवादियों की दृष्टि में जनसंघ प्रतिक्रियावादी तथा निहित स्वार्थों का रक्षक है। ये दोनों प्रकार की आलोचनाएं सर्वथा निराधार और विद्वेषपूर्ण हैं।

जनसंघ आलोचकों का एक तीसरा वर्ग भी है जो उस पर हवा के साथ बहने और पुराने पथ से विचलित होने का आरोप लगाता है। उदाहरण के लिए गाजियाबाद में जनसंघ द्वारा शहरी सम्पत्ति की सीमा बांधने के संबंध में किये गये निर्णय को पेश किया जाता है। अधिकतम और अल्पतम आय के अनुपात को मर्यादित करने के प्रस्ताव को भी इसी श्रेणी में माना जाता है।

शहरी सम्पत्ति की सीमाबंदी का प्रश्न जनसंघ के जन्मकाल से उसके सामने रहा है। जब दल ने कृषि-भूमि की अधिकतम सीमा तय करने का फैसला किया था तभी यह बात बलपूर्वक कही गई थी कि शहरी सम्पत्ति की भी सीमा तय होनी चाहिए। उस समय दल का मत बना कि अभी उसके लिए उपयुक्त अवसर नहीं है। वैसे 'भारतीय संस्कृति और मर्यादा' के आधार पर प्राचीन भारत को आधुनिक रूप देने तथा समतायुक्त समाज की रचना करने के लिए कृत-संकल्प कोई दल सम्पत्ति, आमदनी तथा उपभोग के अधिकार को अमर्यादित नहीं मान सकता।

इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि भूमि तथा शहरी सम्पत्ति की सीमा के निर्धारण के पक्ष में जनसंघ के तर्क अन्य दलों से भिन्न हैं। हमें यह कभी भ्रम नहीं रहा कि जोत की हदबंदी के बाद भूमिहीनों में वितरित करने के लिए बड़ी मात्रा में भूमि मिलेगी और ग्रामीण बेरोजगारी दूर हो जायेगी। गत 25 वर्षों के अनुभव ने जनसंघ को सही सिद्ध किया है। हदबंदी समर्थन के हमारे अपने कारण थे, जिनमें सबसे प्रमुख कारण यह था कि अन्नोत्पादन की वृद्धि के लिए सघन खेती आवश्यक है और उसके लिए खेत ऐसा होना चाहिए जिसमें व्यक्तिगत रुचि ली जा सके और जिसकी अच्छी तरह देखभाल की जा सके। भारत की वर्तमान स्थिति में कृषि का विशाल पैमाने पर यंत्रीकरण अनुपयुक्त होगा, यह विचार भी जनसंघ के सामने था।

शहरी सम्पत्ति की सीमा निर्धारित करने के मूल में भी शहरी भूमि का अधिकतम तथा सर्वोत्तम उपयोग करने की भावना रही है। गाजियाबाद अधिवेशन में जनसंघ ने शहरी सम्पत्ति की सीमा बांधते समय भूमि तथा मकान की कीमत अलग-अलग आंकने का जो सुझाव दिया है, उसका व्यापक स्वागत हुआ है। नगरों में बड़े-बड़े बाग-बगीचों तथा तैरने के तालाबों से युक्त आलीशान मकानों का निर्माण, आज की स्थिति में वैभव का भोंडा प्रदर्शन है। जनसंघ का मत है कि निवास के लिए कोई भी मकान 1,000 वर्ग गज भूमि के अंतर्गत ही होना चाहिए।

गाजियाबाद में स्वीकृत आर्थिक प्रस्ताव में जब जनसंघ ने ग्रार्थिक विषमता को कम करने के लिए न्यूनतम व अधिकतम व्यय-योग्य आय का अनुपात

1 : 20 करने के सुझाव को समाविष्ट किया तो कुछ लोग हैरत में आ गये। उन्होंने यह फतवा दे दिया कि जनसघ वामपंथी हो रहा है। अनेक समाचारपत्रों ने इस आशय की टिप्पणियां लिखी। उनमें से कुछ ने जनसंघ को 'नई दिशा' अपनाने के लिए सराहा भी। प्रशंसा और निन्दा के इस शोरगुल में दोनों प्रकार के लोग यह बात भूल गये कि 1 : 20 के अंतर की बात जनसंघ ने पहली बार गाजियाबाद में नहीं कही। यह सुझाव सबसे पहले 1952 में दिल्ली में हुई केन्द्रीय कार्य समिति द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव में दिया गया था जिसे बाद में 1954 में इन्दौर में पारित दल के घोषणा-पत्र में समाविष्ट किया गया। 'आय की मर्यादा' में कहा गया था :

"जनसंघ समाज के विभिन्न वर्गों की आय के अंतर में कमी करने के लिए धन का समवितरण तथा सभी नागरिकों को जीवन-निर्वाह के न्यूनतम स्तर का आश्वासन देगा। वर्तमान परिस्थितियों में इस दृष्टि से अधिकतम आय 2,000 रु० प्रति मास तथा न्यूनतम आय 100 रु० प्रति मास निर्धारित कर यह प्रयत्न किया जाय कि न्यूनतम आय निरन्तर बढ़ती रहे जिससे दृश्यमान भविष्य में न्यूनतम और अधिकतम आय के अंतर का अनुपात 1 : 10 हो जाय।"

दो वर्ष बाद 1956 में दिल्ली अधिवेशन में इस प्रश्न पर पुनः चर्चा हुई और यह स्पष्ट किया गया कि इस संदर्भ में 'आय' का अर्थ 'व्यय-योग्य आय' है। यह भी कहा गया कि यदि कोई व्यक्ति प्रामाणिक परिश्रम अथवा कार्यकुशलता के बल पर अधिकतम से भी अधिक अर्जित करता है तो उस धन का व्यय करने के बजाय 'उसे दान, कर, अनिवार्य ऋण अथवा विनियोजन के रूप में विकास कार्य में लगाना' चाहिए। बाद में सभी आम चुनावों के अवसर पर जारी घोषणा-पत्रों में व्यय-योग्य आय की अधिकतम सीमा निर्धारित करने की बात को दोहराया गया। आलोचकों ने या तो उन्हें पढ़ा नहीं और यदि सरसरी तौर पर पढ़ा भी तो उसके महत्व को हृदयंगम नहीं किया।

अपनी आधारभूत मान्यताओं पर दृढ़ और अपने मौलिक चिंतन के प्रति प्रामाणिक रहकर जनसंघ ने वक्त के तकाजों को सुना है और उनके अनुरूप अपने को ढालने का प्रयास किया है। जैसा कि दल के नाम से ही स्पष्ट है, जनसंघ जनता का संघ है और आज बहुसंख्यक जनता स्वाधीनता के 25 वर्ष के पश्चात् और चार योजनाओं के बाद भी अभाव, अज्ञान और बीमारी से पीड़ित है। इस स्थिति में सुधार करना, हर व्यक्ति को अन्न, वस्त्र, निवास, शिक्षा तथा चिकित्सा की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सक्षम बनाना, तदनुसार माल तथा सेवाओं की वृद्धि का व्यापक कार्यक्रम अपनाना, उसके लिए भारतीय परिस्थितियों के अनुरूप एक विशेष प्रौद्योगिकी का विकास और अवलम्बन करना, जिससे उत्पादन के साथ उत्पादन में लगे हुए हाथ भी बढ़ सकें—ऐसे कार्य हैं जिन्हें राष्ट्रीय सुरक्षा के साथ-साथ सर्वोच्च प्राथमिकता मिलनी चाहिए। जनसंघ की स्वदेशी योजना इन्हीं उद्देश्यों, वरीयताओं तथा व्यूहनीति पर आधारित है।

सम्भवतः जनसंघ ही एकमेव प्रतिपक्ष है जिसने न केवल आर्थिक नियोजन में आमूल परिवर्तन की मांग की है, बल्कि एक वैकल्पिक योजना का खाका भी प्रस्तुत किया है। जनसंघ के आर्थिक चिन्तन से किसी का मतभेद तो हो सकता है, किन्तु कोई विचारशील व्यक्ति अब उसकी उपेक्षा करने की भूल नहीं कर सकता।

वस्तुतः यदि आज जनसंघ सत्ताधीशों तथा उनके कम्युनिस्ट और सम्प्रदायवादी साथियों के संयुक्त प्रहारों का केन्द्र बना हुआ है तो उसका कारण यही है कि ये तत्व इस तथ्य को अधिकाधिक समझने लगे हैं कि जनसंघ न तो किसी अन्य दल में से निकला हुआ असंतुष्ट लोगों का एक गुट है और न किसी वर्ग विशेष के स्वार्थों की रक्षा के लिए निर्मित एक 'लॉबी' है, बल्कि एक प्रभावी विकल्प है, जो राष्ट्रवाद, लोकतंत्र तथा सामाजिक न्याय की त्रिवेणी में भारतीय जनता को अवगाहन करने के लिए प्रेरित व संगठित कर सकता है।

मुझे खुशी है कि जनसंघ के सिद्धांतों, नीतियों और कार्यक्रमों संबंधी दस्तावेजों को, विषयानुसार संकलित करके, प्रकाशित किया जा रहा है। निस्संदेह यह दस्तावेज उन सबके लिए बहुत लाभदायक होंगे जिनकी भारत के सार्वजनिक जीवन में रुचि है।

मकर संक्रांति
14 जनवरी 1973

—अटल बिहारी वाजपेयी

प्राक्कथन

भारतीय जनसंघ की स्थापना 21 अक्तूबर 1951 को हुई। तब से जनसंघ ने प्रायः सभी आम और मध्यावधि चुनावों में भाग लिया है। विभिन्न विधायिकाओं में तथा उनके बाहर भी, उसके प्रतिनिधियों को अपने दल के दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने का अवसर मिला। उनके प्रस्तावों, संकल्पों और घोषणा-पत्रों के प्रति स्वभावतः जनता का व्यापक रूप से ध्यान गया और उन पर बहुधा सार्वजनिक-चर्चा भी हुई। अतः यह इच्छा बढ़ना भी स्वाभाविक है कि दल के विचारों की जानकारी प्राप्त हो और उसके मत को समझा जाय। यह आवश्यकता अनुभव की जाती रही है कि दल के कार्यकर्ताओं को ही नहीं बल्कि राजनीतिक कार्यकर्ताओं, लेखकों, शोधकर्ताओं और भारतीय सार्वजनिक मामलों के विद्यार्थियों को भी दल के दस्तावेज उपलब्ध हों। यह संकलन इस आवश्यकता की पूर्ति करने का ही एक प्रयास है।

'सिद्धान्त और नीतियां' के अतिरिक्त इसमें, दल के अखिल भारतीय घोषणा-पत्रों, केन्द्रीय कार्य समिति, भारतीय प्रतिनिधि सभा तथा सार्वदेशिक अधिवेशनों में पारित प्रस्तावों को ही सम्मिलित किया गया है। शोक प्रस्तावों को छोड़ दिया गया है।

जनवरी 1965 में विजयवाड़ा में जनसंघ के बारहवें सार्वदेशिक अधिवेशन में स्वीकृत दस्तावेज 'सिद्धान्त और नीतियां', समस्त घोषणा-पत्र और मई 1972 में भागलपुर में भारतीय प्रतिनिधि सभा द्वारा संशोधित दल के संविधान को प्रथम भाग में सम्मिलित किया गया था। द्वितीय भाग में 4 अध्यायों में संकलित आर्थिक विषयों पर प्रस्ताव थे। वर्तमान भाग में दो अध्याय हैं—एक 'प्रतिरक्षा' पर और दूसरा 'वैदेशिक मामलों' पर।

विषयों का वर्गीकरण साधारणतः केन्द्रीय मंत्रालयों के अनुसार किया गया है। कई प्रस्तावों में, दोनों ही अध्यायों से संबंधित विषयों पर चर्चा है। ऐसे प्रस्तावों को या तो विभक्त किया जा सकता था अथवा दो में से किसी एक अध्याय में जोड़ा जा सकता था। प्रस्तावों को विभक्त करने के बजाय, महत्वपूर्ण अनुच्छेदों पर उपशीर्षक लगाकर उनका उल्लेख अनुक्रमणिका में किया गया है ताकि विषयानुसार उनका सहज-संदर्भ उपलब्ध हो सके। कुछ प्रस्ताव-विषय ऐसे हैं जिनको एक अथवा दूसरे अध्याय में उचित रूप से सम्मिलित किया जा सकता था। ऐसे प्रस्तावों को उन अध्यायों में रखा गया है जिनमें उनका अपेक्षाकृत महत्व अधिक परिलक्षित हुआ।

वैदेशिक मामलों के अध्याय को अधिक मूल्यवान व उपयोगी बनाने के लिए, एक ऐसी परिशिष्ट इस भाग में जोड़ दी गई है जिसमें उन महत्वपूर्ण संधियों व समझौतों के पाठ अथवा पाठांश दिये गये हैं जो भारत ने दूसरे देशों के साथ किये हैं और जिनका उल्लेख प्रस्तावों में हुआ है।

हमें खेद है कि कई संधियों व समझौतों के अधिकृत हिन्दी पाठ संसदीय पुस्तकालय अथवा भारत सरकार के विदेश मंत्रालय से भी उपलब्ध नहीं हो सके। ऐसी स्थिति में, अंग्रेजी पाठ का हिन्दी अनुवाद दिया गया है।

प्रस्तावों को तिथि-क्रमानुसार अंकित किया गया है। प्रथम दो अंक वर्ष के हैं और बाद के दो अंक उस वर्ष की प्रस्ताव संख्या को सूचित करते हैं। उदाहरण-स्वरूप 62.16 का अर्थ 1962 में पारित 16वां और 72.03 का अर्थ 1972 में पारित 3रा प्रस्ताव समझा जाना चाहिए। (देखें क्रमशः पृष्ठ 5 व पृष्ठ 16)। प्रत्येक प्रस्ताव के अन्त में तिथि, स्थान और प्रस्ताव पारित होने के प्रसंग का उल्लेख है। के०का०स०, भा०प्र०स० और सा०अ० संक्षिप्तों का अभिप्राय क्रमशः केन्द्रीय कार्य समिति, भारतीय प्रतिनिधि सभा और सार्वदेशिक अधिवेशन से है। प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में उसके प्रस्तावों का सार दिया गया है।

आशा है, यह संकलन उन सबके लिए उपयोगी सिद्ध होगा जो भारत के सार्वजनिक जीवन में रुचि रखते हैं।

—संकलनकर्ता

विषय-अनुक्रम

	पृष्ठ
प्रस्तावना	(iii)
प्राक्कथन	(ix)
1. प्रतिरक्षा	1-16
प्रस्ताव सं०	
62.16 युद्धवीर	5
62.17 चीनी आक्रमण	5
64.13 परमाणविक प्रतिरोधक आवश्यक	7
65.24 युद्धवीर	8
65.25 पाकिस्तान द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध आचार संहिता का हनन	8
66.06 पिंडी-पीकिंग गठजोड़	9
68.04 अणु-अस्त्र प्रसारबंदी संधि से सावधान	10
71.08 राष्ट्रीय सुरक्षा	12
72.01 बंगलादेश युद्ध	15
72.03 प्रतिरक्षा कर्मचारियों के वेतनमान	16
2. वैदेशिक मामले	17-167
प्रस्ताव सं०	
52.09 विदेश नीति	21
52.13 दक्षिणी अफ्रीका की रंगभेद नीति	22
52.14 विदेशी बस्तियां	22
52.26 पूर्वी बंगाल से भारी निष्क्रमण	22
53.03 विदेशी बस्तियां	24
53.04 भारत-पाक वार्ता	25
53.09 भारत-पाक संबंध	25
53.15 चीन की आक्रमणकारी नीति के बारे में चेतावनी	26

प्रस्ताव सं०		पृष्ठ
53.16	पाकिस्तान को सैनिक सहायता	27
53.17	विदेशी बस्तियां	28
54.08	पाकिस्तान को सैनिक सहायता	29
54.10	विदेशी बस्तियां	31
54.18	पूर्वी बंगाल द्वारा पाक सांप्रदायिकता का विरोध	32
54.19	विदेशी बस्तियां	32
55.08	विदेश नीति	33
55.09	फ्रांसीसी बस्तियों की मुक्ति	34
55.10	गोवा मुक्ति आंदोलन	35
55.16	पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यक	35
55.23	पूर्वी बंगाल से भारी निष्क्रमण	37
55.25	श्रीलंका स्थित भारतवंशी	39
55.26	वर्मा सरकार का रवैया	39
55.31	पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यक	39
56.04	पूर्वी बंगाल से भारी निष्क्रमण	40
56.07	पूर्वी बंगाल के विस्थापितों की समस्या	40
56.10	सैनिक सहायता से पाकिस्तानी खतरे में वृद्धि	42
56.11	श्रीलंका में तमिल भाषा	43
56.18	स्वेज संकट	43
56.25	स्वेज व हंगरी के संकट	44
56.28	गोवानी स्वतंत्रता सेनानियों की रिहाई	45
57.03	काश्मीर का एकीकरण	45
57.12	पूर्वी बंगाल के विस्थापितों की समस्या	46
57.18	संयुक्त राष्ट्रसंघ में काश्मीर	48
57.19	श्रीलंका व बर्मा में भारतवंशी	49
57.20	विस्थापित व पुनर्वास कार्य	50
57.23	अयथार्थवादी विदेश नीति	51
58.07	विदेश नीति	52
58.09	शक्तिगुटों के कूटचक्र	53
58.10	भारत-पाक संबंध	54
58.17	श्रीलंका स्थित भारतवंशी	56
58.18	नेहरू-नून समझौता	56

प्रस्ताव सं०		पृष्ठ
58.19	पाकिस्तान में सैनिक अधिनायकवाद	57
58.22	श्रीलंका में जातिवादी दंगे	58
58.26	पाकिस्तान के प्रति दृढ़ व यथार्थवादी नीति	59
58.27	'राज्य विहीन' समुद्रपार भारतवंशी	61
59.02	पाकिस्तान को सैनिक सहायता	62
59.06	तिब्बत की स्वतंत्रता	63
59.10	भारत में चीनी घुसपैठ	65
59.12	तुष्टीकरण की नीति	66
59.13	चीनी आक्रमण की समाप्ति	67
59.15	भारत-पाक संबंध	68
60.03	वांछनीय शिखर-सम्मेलन	70
60.04	चीनी आक्रमण की समाप्ति	72
60.06	पाकिस्तान से समझौता	75
60.10	नेहरू-चाऊ वार्ता	76
60.13	शिखर-सम्मेलन की असफलता	77
60.14	भारत-चीन अधिकारी वार्ता	77
60.20	भावी हमले की चीनी तैयारी	78
61.02	भारत-चीन वार्ता की असफलता	80
61.03	भारत-पाक परस्परावलंबन की मान्यता	80
61.09	अधिक प्रभावी संयुक्त राष्ट्रसंघ	82
62.03	चीन की बढ़ती शत्रुता	84
62.04	पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यक	84
62.05	भारत-नेपाल संबंध	85
62.10	चीन का बढ़ता आक्रमण	86
62.14	चीन का भारी आक्रमण	87
62.18	भारत-पाक वार्ता	89
62.21	विदेश नीति का पुनरेक्षण व पुनर्निर्धारण	90
63.01	कोलम्बो प्रस्ताव	91
63.02	विशाल व प्रभावशाली प्रतिरोधक	93
63.05	बाली द्वीप में ज्वालामुखी पीड़ित	94
63.11	चीनी आक्रमण की समाप्ति	94
63.13	काश्मीर पर वार्ता नहीं	95
63.18	पाकिस्तान के प्रति 'जैसे को तैसा' की नीति	96

प्रस्ताव सं० पृष्ठ
63.22 पाकिस्तान के प्रति भारतीय नीति का पुनर्मूल्यांकन 96
63.24 विदेश नीति का पुनरेक्षण व पुनर्निर्धारण ··· 98
63.26 बर्मा में भारतवंशियों की दुर्दशा ··· ··· 100
63.27 समुद्रपार भारतवंशियों की दुर्दशा ··· ··· 101

64.01 विभाजन का अन्त व पाकिस्तान की मुक्ति ··· 101
64.03 चीनी फंदे से सावधान ··· ··· 104
64.04 काश्मीर समस्या ··· ··· 105
64.06 पूर्वी बंगाल के विस्थापितों की समस्या ··· 108
64.08 समुद्रपार भारतवंशियों की दुर्दशा ··· ··· 111
64.11 अनुच्छेद 370 की समाप्ति ··· ··· 113
64.14 बर्मा से उजड़े भारतीय ··· ··· 114
64.16 श्रीलंका स्थित भारतवंशी ··· ··· 115

65.01 विदेश नीति पर वक्तव्य ··· ··· 116
65.13 विदेशों में अब्दुल्ला की गतिविधियां··· ··· 119
65.14 कच्छ समझौता रद्द करो ··· ··· 121
65.19 कच्छ समझौता विरोधी विराट प्रदर्शन ··· 123
65.26 भारत-पाक युद्ध ··· ··· 124

66.01 ताशकन्द घोषणा ··· ··· 126
66.04 बर्मा स्थित भारतवंशियों की संपत्ति ··· 128
66.15 पाकिस्तान फिर युद्ध की ओर ··· ··· 129
66.17 मॉरीशस का स्वतंत्रता संग्राम ··· ··· 131

67.09 अरब-इसराइल युद्ध ··· ··· 132
67.13 चीन के साथ दौत्य संबंधों का विच्छेद ··· 133
67.20 प्रतिरक्षा व विदेश नीतियों के लिए संयुक्त समिति 134
67.26 गोवा स्वतंत्रता सेनानियों की रिहाई ··· 136

68.03 ब्रिटिश पारपत्रधारी भारतवंशी ··· ··· 136
68.14 रूसी रवैया ··· ··· 137

69.07 विदेश नीति का पुनरेक्षण व पुनर्निर्धारण ··· 140

70.04 पूर्वी बंगाल के अल्संख्यक ··· ··· 145
70.09 विदेश नीति के सार व स्तर में गिरावट ··· 147

प्रस्ताव सं० पृष्ठ
71.02 स्वाधीन बंगलादेश को मान्यता ··· ··· 148
71.05 भारत-रूस संधि ··· ··· ··· 152
71.06 पाकिस्तान के अन्तर्गत बंगलादेश नहीं ··· 154

72.02 सेना की वापसी ··· ··· ··· 156
72.04 समग्र-समझौते का आग्रह ··· ··· 157
72.07 जय, बंगलादेश ! ··· ··· ··· 158
72.11 भारत-पाक शिखर वार्ता ··· ··· 159
72.13 शिमला में शर्मनाक समर्पण ··· ··· 161
72.19 शिमला समझौते के बाद ··· ··· 164
72.20 विदेशी गुप्तचर ··· ··· ··· 166

परिशिष्ट ··· ··· ··· 169–222

परिशिष्ट-क संधियां आदि ··· ··· ··· 171–214
1. भारत-भूटान संधि ··· ··· 8 अगस्त 1949 171
2. भारत-नेपाल संधि ··· ··· 31 जुलाई 1950 174
3. भारत-सिक्किम संधि ··· ··· 5 दिसंबर 1950 176
4. भारत-बर्मा संधि ··· ··· 7 जुलाई 1951 180
5. प्रथम भारत-श्रीलंका समझौता ··· 13 फरवरी 1954 181
6. तृतीय भारत-श्रीलंका समझौता ··· 30 अक्तूबर 1964 183
7. भारत-चीन (पंचशील) समझौता ··· 29 अप्रैल 1954 185
8. इण्टर-डोमीनियन समझौता ··· ··· 14 दिसंबर 1948 190
9. नेहरू-लियाकत समझौता ··· ··· 8 अप्रैल 1950 195
10. भारत-पाकिस्तान समझौता ··· ··· 10 सितम्बर 1958 200
11. नेहरू-नून समझौता ··· ··· 12 सितंबर 1958 202
12. भारत-पाकिस्तान समझौता ··· ··· 11 जनवरी 1960 203
13. भारत-पाक संयुक्त विज्ञप्ति ··· ··· 2 अगस्त 1962 204
14. ताशकंद घोषणा ··· ··· 10 जनवरी 1966 205
15. शिमला समझौता ··· ··· 2 जुलाई 1972 207
16. नियंत्रण रेखा ब्यौरा ··· ··· 12 दिसम्बर 1972 209
17. भारत-रूस संधि ··· ··· 9 अगस्त 1971 210

परिशिष्ट-ख प्रतिरक्षा व वैदेशिक मामलों पर प्रस्तावों की तिथिक्रमानुसार सूची ··· ··· 215–222

अनुक्रमणिका ··· ··· ··· 223–232

अध्याय 1

प्रतिरक्षा

राष्ट्रीय मामलों में प्रतिरक्षा के अद्वितीय महत्व के बारे में आज कोई शंका नहीं करता। परंतु एक समय था जबकि भारत सरकार की योजना में, प्रतिरक्षा का स्थान बहुत पीछे था (54.08)। ऐसी उदासीनता की स्थिति में से सरकार को झकझोर कर सचेत करने के लिए, पड़ौसी देश चीन के एक बड़े आक्रमण की आवश्यकता पड़ी।

परंतु, अपने आरंभिक काल से ही भारतीय जनसंघ ने प्रतिरक्षा के महत्व को अनुभव कर एक "राष्ट्रीय प्रतिरक्षा कार्यक्रम प्रस्तुत करने" पर बल दिया है (53.16)। भारत पर 1962 के चीनी और 1965 के पाकिस्तानी आक्रमणों से बहुत पूर्व, जनसंघ ने "भयंकरतम स्थिति का सामना करने के लिए, शस्त्रास्त्रों से सज्जित होने" की आवश्यकता पर बल दिया था और इस तैयारी के लिए मितव्ययिता का आग्रह करते हुए सरकार को आश्वस्त किया था कि "इसमें जरा भी संदेह नहीं कि जनता भी अपनी कमर कसेगी, अपनी प्रतिरक्षा शक्ति को मजबूत बनाने के लिए श्रेष्ठतम प्रयास करेगी और ऐसे प्रयत्न करेगी जिससे दक्षिणी एशिया में शक्ति संतुलन न बिगड़ने पाये" (53.16)।

जब जनसंघ ने पहली बार यह आवाहन दिया था कि भारत को आणविक आयुध बनाना चाहिए (64.13) तब सब ओर आश्चर्य और उपहास की लहर दौड़ गई थी। किंतु जनसंघ अपने आवाहन पर डटा रहा और जनमत को बनाने में जुटा रहा। आज यह एक राष्ट्रीय मांग बन गई है। लंदन के इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ स्ट्रैटेजिक स्टडीज सरीखे शंकालू विदेशी प्रेक्षकों की राय में भी देश में व्याप्त जनमत के कारण आणविक अस्त्रों का निर्माण अब "अवश्यंभावी" हो गया है। इस दशक में देश में जो एक वातावरण बना है उससे प्रभावित होकर भारत सरकार ने भारी विदेशी दबावों के बावजूद "अणु-अस्त्र प्रसारबंदी संधि" पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया है। इस वातावरण को बनाने में जनसंघ अपने महत्वपूर्ण योगदान का दावा भली प्रकार कर सकता है।

जनसंघ की प्रतिरक्षा नीति का मुख्य आधार 'आत्म-निर्भरता' है। वह चाहता है कि परंपरानुगत एवं आणविक—दोनों ही क्षेत्रों में राष्ट्र अपनी स्वतंत्र प्रतिरोधक-शक्ति को खड़ा करे। यद्यपि जनसंघ पूर्ण निश्शस्त्रीकरण का समर्थन करता है तथापि आंशिक निश्शस्त्रीकरण को शांति की दिशा में वह एक सही पग नहीं मानता। "अणु-अस्त्र प्रसारबंदी संधि" संबंधी अपने प्रस्ताव में उसने यह बात स्पष्ट कर दी है (68.04) कि आंशिक निश्शस्त्रीकरण से बड़ी शक्तियों को तो अधिक शस्त्र जमा करने का प्रोत्साहन मिलेगा जबकि छोटे देशों की उन पर निर्भरता और अधिक बढ़ जायेगी।

जनसंघ की प्रतिरक्षा-नीति का दूसरा महत्वपूर्ण खंभा यह है कि वह प्रतिरक्षा और आर्थिक नियोजन दोनों में पूर्ण समन्वय चाहता है। उसका मत है कि ऐसे समन्वित नियोजन के बिना राष्ट्र न तो अपनी प्रतिरक्षा कर पायेगा और न आर्थिक विकास। भारत का अपना अनुभव ही इसे सिद्ध करने को पर्याप्त है। देर से ही क्यों न सही, भारत सरकार ने भी अब इस दृष्टिकोण को अंशतः स्वीकार कर लिया दिखता है। 1974-75 के वर्ष से प्रतिरक्षा योजना और आर्थिक योजना एक साथ प्रारंभ हुआ करेंगी और दोनों की कालावधि भी समान होगी।

जनसंघ ने सेना के जवानों की आर्थिक दिशा की ओर देश और सरकार का ध्यान बलपूर्वक खींचा है। जनसंघ की मांग रही है कि जवानों के वेतन-मानों में पर्याप्त सुधार

किया जाय; अपंग व सेवा-निवृत्त सैनिकों को रोजगार उपलब्ध कराया जाय और सर्वसाधारण नागरिकों के लिए सैनिक प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाय। युवा वर्ग के लिए उसने अपरिहार्य सैनिक प्रशिक्षण पर आग्रह किया है।(53.16; 62.17, 66.06 तथा 71.08)।

62.16. युद्धवीर

भारत की स्वतंत्रता तथा अखंडता की रक्षा के लिए जिन साहसी सपूतों ने आक्रमणकारी चीन के विरुद्ध लड़ते हुए वीरगति प्राप्त की है, भारतीय जनसंघ उनके प्रति अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता है। संख्या-बल तथा शस्त्र-सज्जा की दृष्टि से आक्रमणकारी की तुलना में न्यून होते हुए भी हमारे बहादुर जवानों ने जो अद्‌भुत पराक्रम दिखाया है वह इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा और भावी पीढ़ियां उससे सदैव प्रेरणा ग्रहण करती रहेंगी। जनसंघ इस अवसर पर भारत की प्रतिरक्षा सेनाओं का अभिनन्दन करता है और उन्हें विश्वास दिलाता है कि मातृभूमि की रक्षा के पवित्र कार्य में सम्पूर्ण देश उनके पीछे है।

[30 दिसम्बर 1962; भोपाल, दसवां सा०अ०]

62.17. चीनी आक्रमण

युद्ध व युद्ध-विराम—20 अक्टूबर 1962 के दिन उत्तरी पूर्वी सीमांत और लद्दाख में कम्यूनिस्ट चीन ने जिस भारी पैमाने पर भारत पर खुला आक्रमण किया है, उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उसका इरादा बल-प्रयोग से सीमा विवाद को सुलझाना मात्र नहीं, अपितु अपनी पुरानी और कम्युनिस्ट विस्तारवादी योजना की पूर्ति के लिए हिमालय के दक्षिण में अपने अड्डे बनाना, छोटे पड़ौसी देशों पर धाक जमाना और उनकी दृष्टि में भारत को नीचे गिराना है। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कम्युनिस्ट चीन, युद्ध और युद्ध-विराम दोनों का क्रमानुसार उपयोग कर रहा है। आवश्यक है कि उसके आक्रमण का सामना करने के लिए हम उसके उद्देश्य और रणनीति को समझकर अपने युद्ध के लक्ष्यों को निर्धारित करें और उनकी पूर्ति के लिए जुट जायें।

युद्ध लक्ष्य—अपनी सैन्य-सामर्थ्य के आधार पर चीन को भारत से हटाये बिना हम अपनी खोई हुई भूमि और प्रतिष्ठा को प्राप्त नहीं कर सकते। उत्तरी सीमाओं की स्थायी सुरक्षा और शांति के लिए भी यह आवश्यक है कि तिब्बत एक स्वतंत्र राज्य के रूप में पुनः स्थापित हो। स्पष्ट है कि इन उद्देश्यों की पूर्ति चीन के हाथ में हर मामले की पहल छोड़ने तथा भारत द्वारा केवल प्रतिकारात्मक और सुरक्षात्मक पग उठाने से नहीं होगी।

चीन को आक्रमणकारी घोषित करने के बाद उसके साथ दौत्य-संबंध बनाये रखना अथवा किसी भी प्रकार की समझौता-वार्ता करना और सीमा प्रश्न को विश्वन्यायालय में लेजाने की बात करना सर्वथा विसंगत है। इससे यह धारणा होती है कि हम युद्ध को युद्ध मानकर उसका सामना करने के लिए तैयार नहीं हैं। इससे

आक्रमणकारी को बढ़ावा मिलता है, जनता के मन में भ्रम उत्पन्न होता है और हमारी नीतियों में स्पष्टता नहीं आ पाती। चीन के एकतरफा युद्ध-विराम को स्वीकार कर और उसके प्रपंचपूर्ण तथा धमकी भरे प्रस्तावों के संबंध में स्पष्टीकरण के नाम पर वार्ता चलाकर सरकार ने युद्ध के प्रयत्नों को कमजोर किया है। 8 सितम्बर 1962 को सीमा रेखा तक चीनियों के वापस जाने पर उस वार्ता की तैयारी का यही अर्थ निकाला जा सकता है कि भारत उस तिथि से पूर्व के आक्रमण के प्रति नरम रुख अपनाने को तैयार है। भारत को यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि जब तक भारत की भूमि पर चीन का आक्रमण विद्यमान है, वह किसी प्रकार की मध्यस्थता अथवा समझौता-वार्ता को स्वीकार नहीं करेगा। चीन के हाथों भारत काफी धोखा खा चुका है। अब उसके इरादों, सैनिक तैयारी और शांति-प्रचार के संबंध में किसी प्रकार का भ्रम नहीं रहना चाहिए।

युद्ध सिद्धता—भारतीय जनसंघ बलपूर्वक मांग करता है कि सम्पूर्ण युद्ध की तैयारी करने के लिए निम्नलिखित पग उठाये जायें :

(1) थल, वायु तथा जल सेना को संख्या तथा क्षमता दोनों दृष्टियों से चीन का मुकाबला करने योग्य बनाया जाय।

(2) इसके लिए सभी मित्र देशों से व्यापक पैमाने पर शस्त्रास्त्र प्राप्त करना जारी रहे। तात्कालिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए थल सेना की संख्या बढ़ाकर 20 लाख करनी चाहिए। इसके लिए आपातकालीन प्रशिक्षण की व्यवस्था हो जिससे शीतकाल समाप्त होते ही चीन के आक्रमण का सामना करने में भारत समर्थ हो सके।

(3) दीर्घकालीन दृष्टि से सम्पूर्ण देश में युवकों का अपरिहार्य सार्वजनिक सैनिक प्रशिक्षण प्रारम्भ किया जाय जिससे प्रति वर्ष 21 वर्ष आयु के लगभग 45 लाख युवकों का प्रशिक्षण हो सके।

(4) चीन की वायु सेना को दृष्टि में रखते हुए वायु सेना का विस्तार किया जाय। भारत को कम से कम 5,000 सैनिक विमान प्राप्त कर लेना चाहिए। साथ ही हवाई हमले से बचाव के लिए राडार व विमानभेदी तोपों आदि की समुचित व्यवस्था की जाये।

(5) सभी प्रकार के (आणविक एवं अन्य) अस्त्र-शस्त्रों, विमानों तथा उनके अंगों के पूर्ण निर्माण के लिए तात्कालीन तथा दीर्घकालीन प्रतिरक्षा उद्योगों की स्थापना की जाय। सुरक्षा की दृष्टि से इन उद्योगों को भूमि के नीचे तथा सीमाओं से दूर स्थापित किया जाये। संदिग्ध निष्ठा वाले व्यक्तियों को प्रतिरक्षा उद्योगों तथा प्रतिरक्षा एवं सेना संबंधी कार्य में कोई स्थान न दिया जाये।

(6) नागरिक प्रतिरक्षा व्यवस्था को विस्तृत एवं सुदृढ़ किया जाये और प्रत्येक असंदिग्ध व निष्ठावान नागरिक को हथियार रखने की छूट दी जाये।

[30 दिसम्बर 1962; भोपाल, दसवां सा०अ०]

64.13. परमाणविक प्रतिरोधक आवश्यक

केन्द्रीय कार्य समिति इस बात पर गहरा दुःख प्रकट करती है कि परमाणु आयुध वाले देशों की श्रेणी में चीन के शामिल हो जाने के बाद, भारत की सुरक्षा के लिए जो खतरा पैदा हुआ है, सरकार उसकी गंभीरता को समझने में विफल रही है। सरकार इस संबंध में कितनी उदासीन है और कितने अनमने ढंग से इस पर विचार करती है, इसका कुछ अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि इतने महत्वपूर्ण मसले को केन्द्रीय मंत्रिमण्डल के सामने भी नहीं रखा गया जिससे वह इस पर विचार करके अपनी राय दे सके। भारतीय जनसंघ का सदैव से यह मत रहा है कि देश को दृढ़ निश्चय के साथ अपनी सैनिक शक्ति का इतना विकास करना चाहिए जिससे देश की स्वतंत्रता और अखण्डता के प्रति किसी भी चुनौती को विफल किया जा सके और इस निश्चय में किसी दिखावटी शांतिवादिता को बाधक नहीं बनने दिया जाना चाहिए। पिछले दो वर्षों से भारत का चीन से एक प्रकार का अघोषित युद्ध चल रहा है। इस बात का कभी से पता था कि चीन बड़े ज़ोर-शोर से अपने परमाणु बम का परीक्षात्मक विस्फोट करने की तैयारी कर रहा है। चीन की इस सफलता का भारत-चीन विवाद पर कितना गंभीर असर पड़ेगा और चीन द्वारा परमाणु बम का विस्फोट करने का, दूसरे एशियाई देशों पर क्या असर पड़ेगा, भारतीय अधिकारियों को इसकी कल्पना सहज ही कर लेनी चाहिए थी और इस बदलती स्थिति के अनुरूप उन्हें अपनी नीति निर्धारित करनी चाहिए थी।

परमाणविक प्रतिरोधक की लागत—अपनी शिथिलता और आत्म-तुष्टि की भावनावश भारत सरकार ने न सिर्फ इस मामले में कुछ करने से इनकार किया बल्कि उसने जनता की इस बढ़ती मांग को दबाने के उद्देश्य से कि भारत को अपने परमाणु बम का निर्माण करना चाहिए—आर्थिक भय दिखाना शुरू कर दिया। कहा गया कि भारतीय अर्थतंत्र परमाणु बम बनाने का बोझ सहन नहीं कर सकता। जनसंघ इस मत से बुनियादी तौर पर असहमत है। जब देश की रक्षा का सवाल हो तब कोई भी मूल्य अधिक नहीं। इस विशेष विषय को लेकर हाल में ही परमाणु शक्ति आयोग के अध्यक्ष ने जो वक्तव्य दिया है, उससे भी स्पष्ट हो गया है कि परमाणु बम न बनाने की नीति के पक्ष में, कम से कम खर्च की बात को तर्क के रूप में पेश नहीं किया जा सकता।

इस तर्क से तो किसी को रत्ती भर भी संतोष नहीं हो सकता कि चीन की परमाणु धमकी को उसके विरुद्ध विश्वमत तैयार करके रोका जा सकता है। काहिरा सम्मेलन में भारत को हाल में ही जो अनुभव हुआ और यह वास्तविकता कि एक भी एशियाई देश, चीन के परमाणु परीक्षण की निन्दा करने में भारत का साथ देने को राजी नहीं हुआ—इससे हमारी आंखें खुल जानी चाहिए। लेकिन, ऐसा जान पड़ता है कि कांग्रेसी शासकों में आत्म-प्रवंचना का अभ्यास करते जाने

की अनंत क्षमता है। देश को सबसे अधिक चिन्ता इस बात से है कि इस मामले में सरकार ने जिस महान अंतर्राष्ट्रीय नैतिकता की चर्चा आरंभ कर दी है उससे देश की आजादी और सुरक्षा के लिए खतरा पैदा हो गया है। वर्तमान विश्व के कटु सत्यों के संदर्भ में और चीन की प्रकट विस्तारवादी आकांक्षाओं को देखते हुए परमाणु बम न बनाने की भारत सरकार की वर्तमान नीति आत्मघाती ही सिद्ध होगी।

अतः कार्य समिति इसे नितान्त आवश्यक समझती है कि अपने परमाणु बम बनाने के सभी प्रयत्न किये जाने चाहिए। वह भारत सरकार से अनुरोध करती है कि अपनी नीति में इस आवश्यकता के अनुरूप परिवर्तन करे।

[4 दिसम्बर 1964; पटना, के०का०स०]

65.24. युद्धवीर

पाकिस्तान के साथ युद्ध में भारत की सेनाओं ने शूरता और रणनीति-कुशलता का श्रेष्ठ परिचय दिया है। शत्रु को भारी क्षति पहुंचाकर उन्होंने विजय प्राप्त की है। हम उनका अभिनन्दन करते हैं। इस विजयशाली अभियान में जो जवान मृत्यु से जुझते हुए अपने कर्तव्य की पूर्ति में वीरगति को प्राप्त हुए उनके प्रति भारतीय जनसंघ अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है। अपने जीवन की बाजी लगाकर उन्होंने देश के गौरव की रक्षा की है। उनकी स्मृति देशवासियों को सदैव ही पराक्रम और विजय की प्रेरणा देती रहेगी।

[27 सितम्बर 1965; दिल्ली, के०का०स०]

65.25. पाकिस्तान द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध आचार संहिता का हनन

पाकिस्तान ने युद्ध की आचार संहिता तथा अन्तर्राष्ट्रीय नियमों और व्यवहार का उल्लंघन कर अस्पताल और जेलों सहित असैनिक नागरिक क्षेत्रों पर जो अन्धाधुन्ध बम-वर्षा तथा गोलाबारी की है उसकी भारतीय जनसंघ घोर भर्त्सना करता है। गुजरात के मुख्यमंत्री श्री बलवंत भाई मेहता के विमान को गिराने तथा युद्ध-विराम की घोषणा के बाद अमृतसर नगर पर बमबारी करने की घटनाएं विशेष उल्लेखनीय हैं। भारत शासन का कर्तव्य है कि पाकिस्तान के इन अमानवीय कृत्यों से विश्व जनमत को पूरी तरह अवगत कराये।

भारतीय जनसंघ दिवंगत आत्माओं के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हुआ शोकसंतप्त परिजनों के साथ संवेदना प्रकट करता है। युद्ध की सफलता में उनके धैर्य और दृढ़ता का भारी योगदान है।

[27 सितम्बर 1965; दिल्ली, के०का०स०]

66.06. पिंडी-पीकिंग गठजोड़

पाकिस्तान के साथ संघर्ष में भारतीय सेनाओं ने जिस बहादुरी, धैर्य और रणकुशलता का परिचय दिया उससे उनकी और देश की प्रतिष्ठा बढ़ी है। भारतीय जनसंघ सैनिकों का अभिनंदन करता है तथा युद्धक्षेत्र में वीरगति पाने वालों को अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

ताशकंद घोषणा—युद्धकाल में शासन और जनता को प्रतिरक्षा के महत्त्व की व देश की सभी नीतियों का निर्धारण प्रतिरक्षा के दृष्टिकोण से करने की आवश्यकता की अनुभूति हुई थी। ताशकन्द घोषणा के परिणामस्वरूप न केवल हमारी सेनाएं पीछे हटी हैं बल्कि शासकीय नीतियों के निर्धारण में प्रतिरक्षा का स्थान फिर से पीछे धकेला जा रहा है। ताशकंद घोषणा राष्ट्र के हितों के प्रति गहरा विश्वासघात थी। युद्ध के मैदान में प्राप्त विजय को कूटनीति की मेज पर गंवा दिया गया।

पाकिस्तानी रवैया—हाजीपीर, करगिल तथा टिथवाल की सामरिक महत्त्व की चौकियों से भारतीय फौजों के वापस होते ही पाकिस्तान अपने असली रंग में आगया है। भारत के विरुद्ध चीन और पाकिस्तान का गठबंधन अधिक दृढ़ हुआ है। चीन पाकिस्तान को सब प्रकार के हथियार दे रहा है। उसकी सहायता से पाकिस्तान संभवतः अणु-अस्त्रों का भी निर्माण कर सकेगा। दुनिया के दूसरे देशों से भी पाकिस्तान हथियार ले रहा है। ईरान और तुर्की के द्वारा उसके पास पश्चिमी देशों के हथियार पहुंचे हैं। अमरीका में भी पाकिस्तान की लॉबी, सैन्य सहायता पुनः आरंभ करवाने के लिए सचेष्ट है। नागा और मिजो विद्रोहियों को पाकिस्तान सब प्रकार की मदद कर रहा है। दूसरी ओर चीन और पाकिस्तान दोनों के पंचमांगी तत्त्व देश में अराजकता और तोड़-फोड़ की कार्यवाहियां कर रहे हैं। स्पष्टतः एक बड़े आक्रमण की तैयारी की जा रही है। इस खतरे के प्रति हम गफलत में नहीं रह सकते।

प्रतिरक्षा सेनाओं का विस्तार व सुधार—पिछली लड़ाई में हमारे सैनिकों ने योग्यता और वीरता का अच्छा परिचय दिया है, किन्तु तीनों दिशाओं में आसन्न संकट तथा देश की भौगोलिक स्थिति एवं उसकी सीमाओं की रचना और विस्तार को ध्यान में रखते हुए हमें अपनी सेना की संख्या और सज्जा में शीघ्र भारी वृद्धि व उन्नति करनी होगी। भारतीय जनसंघ पुनः बलपूर्वक मांग करता है कि :

(1) थल सेना की संख्या बढ़ाकर 20 लाख की जाय।

(2) वायु सेना को कम से कम तिगुना किया जाय।

(3) जल सेना को पनडुब्बी तथा नये लड़ाकू जहाजों से सुसज्जित किया जाय।

(4) अणु तथा प्रक्षेपास्त्रों का निर्माण किया जाय। तथा देश के भीतर शस्त्र तथा अन्य सैन्य-सामग्री बनाने की गति तीव्र की जाय व सैनिक आवश्यकताओं की दृष्टि से देश को शीघ्र ही आत्मनिर्भर बनाया जाय।

(5) 20 से लेकर 23 वर्ष की आयु के लिए अनिवार्य सैनिक शिक्षा की व्यवस्था हो।

(6) नागरिक सुरक्षा का काम जारी रखा जाय और सीमावर्ती क्षेत्रों में असंदिग्ध निष्ठा वाले नागरिकों को शस्त्र तथा सैनिक शिक्षा दी जाय।

(7) भारत की विदेश नीति का संचालन भी प्रतिरक्षा के उद्देश्य की पूर्ति के लिए होना चाहिए। चीन और पाकिस्तान दोनों के विरुद्ध हमें मित्र संचय करना चाहिए।

यह खेद का विषय है कि पाकिस्तान और कम्युनिस्ट चीन के अवसरवादी गठबंधन की खतरनाक संभावनाओं को उन क्षेत्रों में भी कम करके देखा जा रहा है, जो यह जानते हैं कि कम्युनिस्ट चीन के नये उपनिवेशवाद से—जो प्रत्यक्ष आक्रमण तथा आन्तरिक तोड़-फोड़ के दोहरे हथियार का उपयोग करता है—एशिया तथा अफ्रीका के स्वतंत्र देशों को सबसे बड़ा खतरा है। भारत को उन्हीं देशों पर निर्भर रहना होगा जो पीकिंग-पिंडी षड्यंत्र के विरुद्ध हमारा साथ दे सकें।

विश्व में एक तथाकथित इस्लामी गुट के निर्माण के प्रयत्नों तथा उसमें पाकिस्तान की रुचि के प्रति भी भारत को सजग रहना है।

स्वाधीन पूर्वी बंगाल व पख्तूनिस्तान—भारतीय जनसंघ का यह सुविचारित मत है कि :

(1) राष्ट्रवादी चीन के साथ भारत को इस आधार पर दौत्य संबंध स्थापित करने चाहिए कि वह सुरक्षा परिषद् में काश्मीर के प्रश्न पर भारत के न्यायपूर्ण पक्ष का समर्थन करेगा।

(2) अरब देशों तथा पश्चिमी एशिया के अन्य राष्ट्रों के साथ भारत के संबंधों का निर्धारण भी समसहयोग के आधार पर होना चाहिए।

(3) भारत को तिब्बत और सिक्यांग की स्वतंत्रता का समर्थन करना चाहिए और दलाई लामा की सरकार को मान्यता देनी चाहिए।

(4) पूर्वी बंगाल और पख्तूनिस्तान में पश्चिमी पाकिस्तान की तानाशाही से छुटकारा पाने के आंदोलनों को प्रोत्साहन देना चाहिए।

(5) कम्युनिस्ट चीन के राष्ट्रसंघ में प्रवेश का समर्थन बंद कर देना चाहिए और भारत को सुरक्षा परिषद् का स्थायी सदस्य बनने का यत्न करना चाहिए।

(6) दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों के साथ घनिष्ठ सांस्कृतिक तथा आर्थिक संबंध विकसित करने चाहिए।

[1 मई 1966; जालंधर, तेरहवां सा०अ०]

68.04. अणु-अस्त्र प्रसारबंदी संधि से सावधान

अणु-अस्त्र प्रसारबंदी संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए भारत पर सोवियत

रूस और अमरीका के दबाव बढ़ रहे हैं। इन दबावों के कारण संधि को उसके वर्तमान स्वरूप में स्वीकार न करने का भारत सरकार का निश्चय कुछ ढीला हुआ दिखाई देता है। 1954 से भारत इस बात पर बल देता रहा है कि परमाणु अस्त्रों को न केवल फैलने से रोकना है बल्कि उसके वर्तमान भंडार को भी कम करना है। यह नहीं हो सकता कि नये देश परमाणु अस्त्र न बनाने की संधि से स्वयं को बांध लें, किन्तु आणविक शक्तियां अधिकाधिक विध्वंसक परमाणु अस्त्र बनाने और उन्हें फेंकने की प्रणाली को निरंतर विकसित करने की संहारक प्रक्रिया में लगी रहें। संयुक्त राष्ट्र संघ की जनरल असेम्बली ने अपने 20वें अधिवेशन में एक प्रस्ताव स्वीकार कर यह कहा था कि अणु-अस्त्र प्रसारबंदी संधि में आणविक शक्तियों और गैर-आणविक शक्तियों के पारस्परिक दायित्वों के मध्य एक स्वीकृत संतुलन का समावेश होना चाहिए, जिसका अर्थ यह था कि महाशक्तियां नहीं चाहतीं कि नये देश 'परमाणु क्लब' के सदस्य बनें, तो उन्हें अस्त्रों की दौड़ को रोकने की जिम्मेदारी स्वीकार करनी चाहिए। महाशक्तियां इस जिम्मेदारी को उठाने में सर्वथा विफल रही हैं—यह एक पीड़ादायक तथ्य है।

गैर-आणविक देश ऐसी संधि को स्वीकार नहीं कर सकते जो एक ओर तो आणविक शक्तियों को परमाणु अस्त्रों का अंबार लगाते रहने की छूट देती है और दूसरी ओर गैर-आणविक देशों को सदैव के लिए आत्मरक्षा के मामले में परमुखापेक्षी बनाये रखना चाहती है। प्रस्तावित संधि में गैर-आणविक देशों के लिए आणविक हमलों के विरुद्ध जिस गारंटी की व्यवस्था की गई है वह सर्वथा अपर्याप्त, असंतोषजनक और अमान्य है। सुरक्षा परिषद को बीच में लाकर, ऐसी गारंटी को महाशक्तियों के निषेधाधिकार का विषय बनाया जा रहा है जो विश्व पर न केवल उनके प्रभुत्व को और अधिक मजबूत बनाने में कारणीभूत होगा अपितु, गैर-आणविक देशों को पूर्णतया उनकी दया पर छोड़ देगा। आणविक युद्ध में सबसे महत्वपूर्ण तथ्य समय का है। सुरक्षा परिषद की बैठक बुलाने और आणविक आक्रमण का प्रतिकार करने का निर्णय करने के पूर्व ही आक्रांत देश मटियामेट हो चुकेगा। अमरीका तथा सोवियत रूस द्वारा अलग-अलग संयुक्त रूप से दी गई गारंटी भी गुटनिरपेक्ष देशों के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध नहीं होगी।

परमाणविक प्रतिरोधक आवश्यक—जहां तक भारत का संबंध है, जबसे कम्युनिस्ट चीन ने परमाणु अस्त्रों का निर्माण प्रारम्भ किया है—और सभी इस बात को स्वीकार करते हैं कि आणविक प्रगति के मामले में पीकिंग सभी अनुमानों को पार कर गया है—आकस्मिक आणविक आक्रमण का खतरा भारत के लिए एक बौद्धिक रुचि का विषय न होकर जीवन-मरण का प्रश्न बन गया है। भारत को किसी संभावित आणविक आक्रमण से न केवल अपनी रक्षा का प्रबंध करना है, बल्कि ऐसी व्यवस्था भी करनी है जिससे किसी को हमारे ऊपर आणविक आक्रमण करने का साहस ही न हो। यह मानते हुए भी कि चीन का खतरा मुख्यतः परंपरा-

गत हथियारों के क्षेत्र में है, भारत को स्वतंत्र परमाणविक प्रतिरोधक शक्ति का विकास करना होगा।

दक्षिणी-पूर्वी एशिया में शक्ति संतुलन—एक दृष्टि से परमाणु अस्त्रों का स्वरूप 'राजनैतिक' भी है, क्योंकि उनके होने मात्र से ही, और उनका बिना उपयोग किये ही, अनेक उद्देश्य पूरे हो जाते हैं। कम्युनिष्ट चीन द्वारा परमाणु अस्त्र बनाये जाने से दक्षिणी-पूर्वी एशिया शक्ति का संतुलन उसके पक्ष में चला गया है और छोटे-छोटे देशों पर उसका दबाव अधिक अनुभव होने लगा है। भारत और चीन के बीच बढ़ती हुई 'शक्ति की खाई' को पाटने और इस क्षेत्र में शक्ति के संतुलन को पुनः कायम करने के लिए यह आवश्यक है कि भारत परमाणु बम न बनाने के निर्णय पर पुनर्विचार करे। इससे राष्ट्र का मनोबल उठेगा और शत्रुता पर आमादा पड़ोसी देशों के दृष्टिकोण में परिवर्तन भी आयेगा।

भारतीय जनसंघ भारत सरकार को चेतावनी देना अपना कर्तव्य समझता है कि वह किसी दबाव में आकर प्रस्तावित संधि पर हस्ताक्षर करने की नासमझी न दिखाये। यदि सरकार आज परमाणु बम बनाने का निर्णय लेने का साहस तथा विवेक जुटाने की स्थिति में नहीं तो भी उसे किसी दबाव में आकर भारत का आणविक बनने का मार्ग बन्द नहीं करना चाहिए। भारतीय जनता इस मामले में किसी प्रकार की दुर्बलता सहन नहीं करेगी।

[22 मार्च 1968, भोपाल, के०का०स०]

71.08. राष्ट्रीय सुरक्षा

देश भीषण संकट के दौर से गुजर रहा है। पाकिस्तान ने 1 करोड़ विस्थापित भारत में ढकेल दिये हैं। पूर्व ओर पश्चिम दोनों ओर पाक सेनाएं आक्रमण के लिए सिद्ध खड़ी हैं। प्रतिदिन भारत की थल और नभ दोनों ही सीमाओं का अतिक्रमण किया जा रहा है। हमारे रास्ते, पुल और रेलगाड़ियों को उड़ाने के लिए सीमावर्ती प्रदेशों में विध्वंसकारियों के जत्थे भेजे जा रहे हैं। इस प्रकार भारत पर अघोषित युद्ध लादकर जनरल याहिया खां धमकी देता रहा है कि यदि मुक्तिवाहिनी बंगलादेश के क्षेत्र को मुक्त करने में सफल हो जायेगी तो भारत के साथ पूरा युद्ध लड़ा जायेगा।

आज ऐसी स्थिति से सामना है कि जिसे सुलझाने में अनमने अथवा विलम्ब के ढंग से काम नहीं चलेगा। प्रतिनिधि सभा को अत्यन्त खेद है कि इस परिस्थिति से निबटने की भारत सरकार की तैयारी उपस्थित चुनौती के निराकरण की आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं है। मुक्तिवाहिनी की सीमित सहायता देने की वर्तमान सरकारी नीति, अकारण ही बंगलादेश की यातना को लंबा कर रही है और आने वाले शरणार्थियों की संख्या में वृद्धि कर रही है।

स्वाधीन बंगलादेश को मान्यता—गत अप्रैल में ही भारत ने बंगलादेश को मान्यता दी होती और सभी प्रकार की सैनिक सहायता भी प्रदान की होती तो

पाकिस्तानी शिकंजे से बंगलादेश कभी का मुक्त हो चुका होता। आज शरणार्थियों का जो भारी बोझ उठाना पड़ रहा है उससे भी भारत बच जाता। उस समय उपयुक्त कार्यवाही न करके भारत सरकार ठीक समय पर उचित पग न उठाने की महान भूल की दोषी है।

अब भी हमारा मत है कि बंगलादेश की सरकार को मान्यता देकर शीघ्रातिशीघ्र उसे अपनी भूमि मुक्त कराने के लिए सहायता देना भारत और बंगलादेश दोनों के लिए हितकर होगा। भारतीय प्रतिनिधि सभा मांग करती है कि बंगलादेश को मान्यता देने के साथ ही उससे सुरक्षा संधि भी की जाय ताकि विस्थापितों के शीघ्र वापस लौटने, उनकी सम्पत्ति उन्हें वापिस दिलाने तथा बंगलादेश की स्वतंत्रता और भारत की अखंडता व सुरक्षा की भली भांति निश्चिन्तता हो जाय।

इसी सप्ताह जनरल याहिया खां ने 'युद्ध के कगार तक' पहुंच चुकने की शरारतपूर्ण बात कही है। साफ है कि मुक्तिवाहिनी द्वारा बड़े प्रमाण में बंगलादेश की भूमि मुक्त हो जाने के कारण पकिस्तान बौखला उठा है। इससे पश्चिमी मोर्चे पर बड़े परिमाण में लड़ाई भड़क उठना प्रायः निश्चित है। भारतीय जनसंघ चाहता है कि शत्रु को उसकी पसन्द के अनुसार समय और स्थान पर आकस्मिक आक्रमण करने का अवसर न दिया जाय। उसकी ओर से होने वाले किसी भी दुस्साहस का पहले से ही सफलतापूर्वक निराकरण करना चाहिए।

मुक्तिवाहिनी की सफलताओं का प्रभाव अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी दृष्टिगोचर हो रहा है। पाकिस्तान को वर्तमान कठिनाई से उबारने के लिए सुरक्षा परिषद् द्वारा हस्तक्षेप कराने के प्रयास प्रारंभ हो गये हैं। बंगलादेश के मुक्ति संग्राम में बाधा डालने वाले सब प्रयासों का, भारत सरकार को दृढ़ता से सामना करना चाहिए।

चीन के साथ सहज स्थिति—भारत की सीमाओं पर विद्यमान परिस्थिति के संबंध में चीन द्वारा संयुक्त राष्ट्रसंघ में अपनाये गये कठोर भारत विरोधी रुख की ओर भी यह प्रतिनिधि सभा गंभीरता से देखती है। हाल तक भारत के विदेश मंत्री चीन-भारत संबंधों में सुधार होने के जोरदार वक्तव्य देते रहे हैं। कल ही उन्होंने लोकसभा में एकतरफा तौर पर पीकिंग में राजदूत भेजने की सहमति प्रकट की है। प्रधानमंत्री भी अपनी विदेश यात्रा के दौरान यहां तक कह गई कि चीन के साथ संबंध सामान्य करने के लिए अक्साईचिह्न को भी नजरअन्दाज किया जा सकता है। स्थिति आंकलन और समस्या की ओर देखने का यह अधकचरापन संयुक्त राष्ट्रसंघ में हुई पीकिंग के प्रतिनिधि की घोषणा से और अधिक उजागर हो गया है। प्रतिनिधि सभा सरकार को सचेत करती है कि देश की उत्तरी सीमा पर जागरूकता में किसी प्रकार की ढिलाई न की जाय।

प्रतिनिधि सभा मुक्तिवाहिनी की सफलताओं पर उसका अभिनन्दन करती है। पाकिस्तानी अतिक्रमण का वीरतापूर्वक सामना करने वाले सीमा सुरक्षा दल के सिपाहियों, हवाबाजों, नौ सैनिकों और सेना के जवानों को यह सभा बधाई देती

है। देश की सुरक्षा और बंगलादेश की मुक्ति के लिए जनसंघ अपनी पूरी सहायता का सरकार को आश्वासन देता है। देश के सभी नागरिकों से और विशेषतः जनसंघ के कार्यकर्ताओं से हमारी अपील है कि सरकारी प्रयत्नों के साथ सार्वजनिक प्रयास भी जोड़े जायें। प्रतिनिधि सभा 12 दिसम्बर से 'रक्तदान सप्ताह' मनाने का निश्चय करती है।

प्रतिरक्षा में जनसहयोग—यह खेद की बात है कि प्रतिरक्षात्मक कार्यों में जनता का सहयोग प्राप्त करने के लिए सरकार ने अब तक लगभग कुछ नहीं किया है। सही तो यह है कि सत्ताधारी पार्टी वर्तमान संकट काल का उपयोग अपने संकुचित दलीय स्वार्थों की पूर्ति की दृष्टि से ही बहुधा करती दिखाई दी है। राष्ट्रीय और प्रान्तीय दोनों ही स्तरों पर नागरिक सुरक्षा के कार्यों में विरोधी दलों को सहभागी बनाने में साफ हिचकिचाहट झलकती है और जहां किसी प्रकार का सहयोग मांगा भी जाता है तो वह उद्देश्यहीन होता है। इस संबंध में मुख्य जिम्मेदारी केन्द्रीय सरकार की है क्योंकि वर्तमान परिस्थिति की गंभीरता को समझकर सरकार के जागरूक होने का सबूत जनता के सामने अभी दिया जाना बाकी है। समय की मांग है कि एक दल के रूपान्तर जैसा व्यवहार करने का रवैया छोड़कर एक राष्ट्रीय सरकार के नाते केन्द्रीय सरकार व्यवहार करे।

प्रतिरक्षा में कामचलाऊपन – जनसंघ का सदा यह मत रहा है कि देश की आर्थिक, राजनीतिक और वैदेशिक नीतियों का निर्धारण करते समय राष्ट्रीय सुरक्षा को सबसे महत्वपूर्ण माना जाना चाहिए। दुर्भाग्य की बात है कि राष्ट्रीय सुरक्षा की समस्याओं की ओर देखने का सत्ताधारी पार्टी का दृष्टिकोण कामचलाऊ मनोवृत्ति से ग्रसित है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद प्रथम 15 वर्षों में देश की प्रतिरक्षा की अपराधपूर्ण उपेक्षा की गई। 1962 में हुआ चीनी हमला, उदासीनता से हमें झकझोर देने और प्रतिरक्षा की ओर अधिक ध्यान देने के लिए एक प्रकार से परोक्ष वरदान सिद्ध हुआ है। फिर भी दीर्घकालीन दृष्टि से राष्ट्रीय प्रतिरक्षा की समस्याओं को सुलझाने की आवश्यकता बनी ही हुई है।

इन बातों को ध्यान में रखते हुए और भारत-पाक सीमा पर उभर रही परिस्थितियों का तुरन्त सामना करने के लिए भारतीय प्रतिनिधि सभा मांग करती है कि :

(1) भारत को अविलम्ब रीति से आणविकीकरण का निर्णय करना चाहिए।

(2) भारत की वर्तमान प्रतिरक्षा शक्ति को दुगना बढ़ाना चाहिए।

(3) हिन्द महासागर में विदेशी नौसेनाओं की उपस्थिति को गंभीरता से देखना चाहिए तथा भारत की सुरक्षा और दक्षिणी एशिया की शांति के लिए भारतीय नौसेना को हिन्द महासागर में सबसे बड़ी ताकत के रूप में खड़ा करना चाहिए।

(4) राष्ट्रसंघ का और विशेषतः सुरक्षा परिषद् का वर्तमान ढांचा पुराना हो चुका है। 1945 में गठित इस अन्तर्राष्ट्रीय संगठन का पुनर्गठन इस तथ्य को ध्यान में रखकर अब किया जाना चाहिए कि उस समय के पश्चात् एशिया और अफ्रीका का आविर्भाव हो चुका है। इस दिशा में पहले पग के रूप में सुरक्षा परिषद में भारत को स्थायी सदस्य का स्थान दिया जाय।

(5) प्रतिरक्षा विभाग के जवानों को जिस प्रकार की भारी जिम्मेवारियों का वहन करना पड़ता है उसके अनुरूप उनके वेतनमान, भत्ते तथा अन्य सुविधाओं का पुनर्विचार करने के लिए एक विशेष वेतन आयोग का गठन करना चाहिए।

(6) सीमावर्ती क्षेत्रों में युद्ध-जोखिम बीमा की योजना शीघ्र लागू की जानी चाहिए।

(7) सीमावर्ती प्रदेशों से घुसपैठियों का सफाया करने के लिए कड़ी कार्यवाही की जानी चाहिए और तोड़फोड़ के जुर्म के लिए कठोर दण्ड दिया जाना चाहिए। देश भर में पाक-परस्त तत्वों पर कड़ी नजर रखी जाय तथा शत्रु से साजबाज रखने वालों को कड़े से कड़ा दण्ड दिया जाय।

(8) शरणार्थियों को 6 मास के भीतर वापिस भेजने का सरकार का वचन अब 8 मास पुराना हो चुका है। इसलिए शरणार्थियों को उनकी भूमि में वापिस भेजने की समय-सीमा पुनः शीघ्र घोषित की जानी चाहिए।

(9) केन्द्रीय नागरिक परिषद् और उसकी प्रादेशिक शाखाओं का पुनर्गठन इस ढंग से किया जाना चाहिए कि वह सही प्रतिनिधित्व कर सके।

[27 नवम्बर 1971; गाजियाबाद, भा०प्रा०स०]

72.01. बंगलादेश युद्ध

केन्द्रीय कार्य समिति उन जवानों तथा सेनाधिकारियों की स्मृति में अपनी अश्रुपूर्ण श्रद्धांजलि समर्पित करती है, जिन्होंने भारत की सुरक्षा और बंगलादेश की स्वाधीनता के लिए अपने जीवन की आहुति दी है। उनका पौरुष तथा पराक्रम भारतीय इतिहास का एक स्वर्णिम पृष्ठ है।

युद्धोत्तर पुनर्वास—आहतों के परिवारों का उचित पुनर्वास, घायल जवानों के लिए उपयुक्त रोजगार का प्रबंध तथा उनके बच्चों के लिए संतोषपूर्ण शिक्षा-व्यवस्था राज्य का प्रथम दायित्व है।

भारतीय जनसंघ इन समाचारों पर चिंतित है कि पाकिस्तान द्वारा बंदी बनाये गये भारतीय सैनिकों को मारा तथा अपंग बनाया जा रहा है। इस संबंध में जो भय है उसकी पुष्टि इस तथ्य से भी होती है कि जबकि 2,163 भारतीय जवान लापता हैं, पाकिस्तान के अनुसार उनकी संख्या केवल 600 है। केन्द्रीय कार्य समिति सरकार से मांग करती है कि रेडक्रॉस तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय संगठनों की सहायता लेकर इस बारे में सभी तथ्यों का पता लगाये और अपराधियों को दण्ड दिलाये।

इस युद्ध में शहरी लोगों, विशेषतः सीमावर्ती क्षेत्रों के नागरिकों को भी अपने जीवन तथा संपत्ति की क्षति उठानी पड़ी है। अनेक नागरिक युद्ध के दौरान घायल हुए हैं। उनके पुनर्वास तथा उनकी क्षतिपूर्ति का प्रबंध भी राज्य को करना चाहिए।

यद्यपि अब बंगलादेश स्वाधीन हो चुका है और आधे से अधिक विस्थापित अपने घरों को वापस भी जा चुके हैं, सरकार अभी भी अतिरिक्त कर वसूल करती जा रही है और कुछ नये कर भी लगाने का विचार कर रही है। जनसंघ का यह निश्चित मत है कि बंगलादेश के पुनर्निर्माण के लिए धन, जो विशेषज्ञों के अनुसार कम से कम 600 करोड़ रु० होगा, सारा पाकिस्तान से वसूल किया जाना चाहिए। पाकिस्तान के साथ किसी भी समझौते में इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमें उपयुक्त युद्ध-क्षतिपूर्ति की मांग करनी चाहिए।

[27 जनवरी 1972; भोपाल, के०का०स०]

72.03. प्रतिरक्षा कर्मचारियों के वेतनमान

प्रतिरक्षा कर्मचारियों के कर्तव्य में जो उत्तरदायित्व और जोखिम निहित है उनके अनुरूप उनके वेतनमानों के पुनर्निर्धारण किये जाने की भारतीय जनसंघ की केन्द्रीय कार्य समिति मांग करती है।

जनसंघ की केन्द्रीय कार्य समिति अनुभव करती है कि सशस्त्र सेना के जवानों का वेतनमान, उनकी जिम्मेवारियों और अपने को जोखिम में डालकर काम करने की स्थितियों के अनुरूप नहीं है। इतना ही नहीं बल्कि यह वेतन उसी योग्यता के असैनिक पदों के वेतनमान के बराबर भी नहीं है। मातृभूमि के इन बहादुर रक्षकों के लिए, जिन्होंने देश को गौरव प्रदान कराया है, हमें कम से कम इतना तो अवश्य करना चाहिए कि उन्हें इस अन्याय से मुक्ति दिलाये।

अतः कार्य समिति सरकार से अनुरोध करती है कि वह सेना के हर स्तर के पदों के लिए सेना मुख्यालय की वेतन पुनरीक्षण संबंधी सिफारिशों को स्वीकार कर ले। इसके साथ ही कार्य समिति सिफारिश करती है कि पाकिस्तान के साथ युद्ध में सैनिकों की सेवाओं को ध्यान में रखते हुए उन्हें युद्ध बोनस के रूप में विशेष पुरस्कार दिया जाय।

[27 जनवरी 1972; भोपाल, के०का०स०]

अध्याय 2

वैदेशिक मामले

यदि प्रतिरक्षा नीति का समन्वय आर्थिक नियोजन के साथ होना चाहिए तो विदेशी नीति का निर्धारण प्रतिरक्षा की आवश्यकताओं के अनुरूप होना आवश्यक है। भारतीय जनसंघ की यह एक आधारभूत मान्यता है(66.06, 67.20)। अतः आरम्भ से ही जनसंघ की विदेश नीति संबंधी समस्त घोषणाओं के मूल में राष्ट्रीय हितों की आवश्यकता रही है और बलपूर्वक उस रवैये को उसने अमान्य किया है जो श्री नेहरू के समय से भारत सरकार की विदेश नीति की एक विशेषता रहा है और जिसके अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर ऊंची कल्पनाओं के उपदेश सबको सुनाये जाते रहे हैं।

जनसंघ का यह मत रहा है कि अमरीका और रूस दोनों ही महाशक्तियों के गुटों से निर्पेक्ष रहना भारत के जागृत राष्ट्रीय हितों के लिए अधिकतम पोषक रहेगा (52.09)। किन्तु एक विशेष परिस्थिति के लिए उसने गुट-निर्पेक्षता को उपयुक्त नीति के रूप में माना है और जैसा कि कांग्रेस सरकार उसे एक सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत करती रही है, वैसा जनसंघ ने उसे कभी नहीं माना। शक्तिगुटों के राजनीतिक झमेलों से दूर रहने का आग्रह भी जनसंघ करता रहा है (53.16) और सरकार को सदा यह चेतावनी देता रहा है कि राष्ट्रीय हितों से सम्बद्ध प्रश्नों के अलावा अन्य पचड़ों में वह न पड़े(59.12)।

रूसी पक्ष से चीन के अलग होने के बाद, विश्व में शक्ति-संतुलन में जो परिवर्तन आये हैं उनको जनसंघ ने बड़े ध्यान से देखा है। उसने बताया कि अबविश्व द्विध्रुवीय नहीं रह गया है और विश्व के अनेक ध्रुव वाले उभरते चित्र में, भारत को अपना एक स्वतंत्र ध्रुव बनाने का प्रयास करना चाहिए (63.02)।

साम्राज्यवाद का जनसंघ कट्टर विरोधी है (54.18)। स्वेज नहर पर आंग्ल-फ्रांसीसी कार्यवाही की उसने भर्त्सना की (56.25); और उस पर मिश्र के अधिकार करने का उसने समर्थन किया (56.18)। उपनिवेशवाद और रंग-भेद के विरोध में तो जनसंघ का स्वर बड़ा सशक्त रहा है (52.09, 52.13)। उसकी मांग रही है कि सभी विदेशी सैनिकों को वापिस बुलाया जाय और सभी सैनिक गठबंधनों को रद्द किया जाय क्योंकि इन दोनों ही बातों से "अन्तर्राष्ट्रीय तनावों में वृद्धि" होती है (58.09)। जहां 'सीमित प्रभुसत्ता' के रूसी प्रचार का तथा हंगरी (1956) और चेकोस्लोवाकिया (1968) पर रूसी आक्रमणों का जनसंघ ने विरोध किया वहां लैबनान और जॉर्डन में आंग्ल-अमरीकी हस्तक्षेप को भी 'शर्मनाक' कहकर उसने निन्दा की है (58.09)।

जनसंघ का सदा यह मत रहा है कि रूस और अमरीका दोनों ही महाशक्तियां विश्व में अपना-अपना प्रभाव-क्षेत्र निर्माण करने तथा भारत में अपने षड्यंत्रों का जाल बिछाने की दृष्टि से या तो परस्पर प्रतिस्पर्धी हैं या सहयोगी (58.09)। वह अनुभव करता है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ का वर्तमान ढांचा समयातीत हो चुका है और यह भी कि भारत को सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता मिलनी चाहिए (71.08)।

चीन के प्रति जनसंघ की नीति प्रारंभ से ही बहुत स्पष्ट रही है। वह 'भारत और चीन के बीच मैत्री' का तो इच्छुक है किन्तु तुष्टीकरण अथवा समर्पण के मूल्य पर नहीं(59.10)। राष्ट्र के नाम उसका आवाहन है कि 'चीन के साथ शक्ति-संतुलन स्थापित करना ही उसके भावी आक्रमणों को रोकने की एकमेव गारंटी है' (60.14)। 1962 के सीमा-युद्ध के संबंध में जनसंघ ने इस बात पर बल दिया कि भारत सरकार से जवाबतलबी की जाय कि वह चीन

के इरादों को समझने तथा देश को इस संबंध में तैयार करने में क्यों असफल रही (62.14)? जबकि जनसंघ 1953 से ही चीनी इरादों के बारे में भारत सरकार को सचेत करता आ रहा था (53.15)। चीन से कूटनीतिक संबंध विच्छेद कर लेने की मांग जनसंघ ने दो बार उठाई—पहली 1962 में (62.03) और फिर 1967 में जबकि लाल रक्षकों ने दो युवा भारतीय कूटनीतिज्ञों पर हमला किया था। ताईवान के संबंध में जनसंघ ने उसको कूटनीतिक मान्यता देने का समर्थन किया है बशर्ते की वह काश्मीर और उत्तरी सीमा संबंधी भारत की मान्यता को स्वीकार करे (66.06)।

जनसंघ की पाकिस्तान संबंधी नीति भी बहुत सीधी और स्पष्ट है। उसके साथ हमारी अनेक समस्याएं उलझी पड़ी हैं। अतः जनसंघ का आग्रह रहा है कि पाकिस्तान के साथ "जैसे को तैसा" नीति को अपनाया जाय (63.18); और सब समस्याओं को एक बार में हल किया जाय न कि थोड़ा-थोड़ा करके और न ही तुष्टीकरण को अपनाया जाय। बंगलादेश की समस्या का विस्फोट होते ही जनसंघ ने भारतीय हस्तक्षेप के पक्ष में जनमत को प्रभावी ढंग से जागृत एवं संगठित किया। बड़े प्रारंभ में ही जनसंघ ने पूर्वी बंगाल के साथ 'नरम सीमा' की मांग उठाई थी (52.26) और अब 18 वर्षों बाद वह बात भविष्यवाणी सिद्ध हो गई।

जनसंघ उन समस्त देशों के पुनरेकीकरण में विश्वास करता है जिनका साम्राज्यवाद ने विभाजन कर दिया है। वह कोरिया, जर्मनी और वियतनाम के पुनरेकीकरण का समर्थन करता रहा है। जनसंघ इसराइल को मान्यता देने के पक्ष में है किंतु साथ ही उससे आग्रह करता है कि वह स्वयं को एक यूरोपीय शक्ति की बजाय अफ्रेशियाई राष्ट्र मानकर व्यवहार करें (67 09)।

जनसंघ की यह विशेषता रही है कि राष्ट्र पर आनेवाली भावी विपत्तियों का काफी पहले से सही विश्लेषण कर राष्ट्र को सचेत करता रहा है। 1962 के चीन के आक्रमण की भविष्यवाणी उसने 1953 में ही कर दी थी। 1965 के पाकिस्तानी आक्रमण के बारे में उसने यथेष्ठ पूर्व-चेतावनी दे दी थी। 1966 के ताशकंद समझौते रूपी विश्वासघात और 1972 के शिमला-समर्पण के अवश्यंभावी दुष्परिणामों के बारे में उसने जो भविष्यवाणियां कीं वे सही निकली हैं। सरकार की भूल तथा अदूरदर्शी नीतियों की निर्भीक आलोचना करते हुए भी, जब भी राष्ट्र पर संकट की घड़ियां आई (जैसा कि 1962 और 1965 में) तब तब जनसंघ सरकार को मुक्त-हृदय से सहयोग देने में सबसे आगे रहा है। पाकिस्तान से 1971 के युद्ध छिड़ने के पूर्व ही उसने सरकार को पूर्ण सहयोग देने के अपने निश्चय की घोषणा कर दी थी (71.08)।

52.09. विदेश नीति

विदेश नीति का लक्ष्य—केन्द्रीय कार्य समिति ने देश की विदेश नीति पर विचार किया है। कार्य समिति के विचार से भारत की विदेश नीति का लक्ष्य यह होना चाहिए कि शक्तिगुटों में शामिल होने से बचते हुए अधिक से अधिक जितने देशों से संभव हो मैत्री की जाय और उनका समर्थन प्राप्त किया जाय जिससे देश अपने बिखरे अर्थतंत्र का पुनर्निर्माण कर सके और अपनी भावी योजनाओं को सफलता के साथ क्रियान्वित करने के साथ-साथ विश्वशांति बनाये रखने के प्रयत्न कर सके और दुनिया भर के लोगों में सद्भाव बढ़ा सके। भारत की आत्मा मूलतः तानाशाही के विरुद्ध है। अतः उसे विश्व में सच्ची स्वतंत्रता और लोकतंत्र के विकास का समर्थन करना चाहिए। उसकी सहानुभूति स्वभावतः उन सब देशों के साथ है जो औपनिवेशिक नियंत्रण के खिलाफ संघर्ष कर रहे हैं।

भारत शांति का समर्थक है, किन्तु शांति के प्रति उसका आग्रह उस सीमा को पार न कर जाय कि राष्ट्रीय अपमान की नौबत आये और स्वयं का अस्तित्व ही मिट जाय। नेहरू-लियाकत समझौते के बावजूद पाकिस्तान सरकार अपने यहां हिंदुओं के साथ जैसा बर्ताव कर रही है और पूर्वी बंगाल से बचेखुचे अल्पसंख्यकों को जिस तरह निकाला जा रहा है उससे ऐसी स्थिति पैदा हो गई है जो न केवल पाकिस्तान के लाखों लोगों की शांति और सुख के लिए खतरा पैदा कर रही है बल्कि स्वयं हमारे देश की शांति, सुरक्षा और स्थायित्व को खतरे में डाल रही है।

विदेशी बस्तियां—जहां तक भारत में विदेशी बस्तियों का प्रश्न है, भारत सरकार ने ऐसी दुर्बल और दब्बू नीति अपनायी है कि उससे फ्रांसीसी और पुर्तगाली सरकार को भारत के प्रति चुनौती भरा रवैया अपनाने का मौका मिला है। यह भारत सरकार का कर्तव्य है कि वह सबसे पहले इन बस्तियों में रहने वाले भारतीयों को मुक्त कराने का प्रयत्न करे।

समुद्रपार भारतवंशियों की दुर्दशा—विदेशों, जैसे दक्षिणी अफ्रीका और श्रीलंका में भारतवंशियों के साथ जैसा व्यवहार हो रहा है उसकी ओर भारत सरकार और भारत की जनता का अविलंब ध्यान जाना चाहिए। भारत से बाहर भारतीयों के अधिकारों की जिस तरह उपेक्षा हो रही है और सरकार के विरोधों की जिस तरह कोई चिन्ता नहीं की जाती उससे पता चलता है कि विदेशों में भारत की प्रतिष्ठा कितनी गिर गई है।

[14 जून 1952; दिल्ली, के०का०स०]

52.13. दक्षिणी अफ्रीका की रंगभेद नीति

दक्षिणी अफ्रीका की मलान सरकार की रंगभेद की नीति सम्मान, समता व राष्ट्रसंघ द्वारा सम्मत जनाधिकारों के प्रतिकूल है तथा एशियाई और अफ्रीकी राष्ट्रों के मान को ठेस पहुंचाने वाली है। प्रत्येक स्वाभिमानी व्यक्ति और जाति के लिए स्वाभाविक है कि इस नीति का विरोध करे। यह संतोष का विषय है कि दक्षिणी अफ्रीका में भारतीय एवं अफ्रीकी जन, शांतिपूर्ण ढंग से अपने अधिकारों की रक्षा के लिए आंदोलन कर रहे हैं। जनसंघ उनके आंदोलन का समर्थन करता है तथा उसकी सफलता चाहता है। जनसंघ भारत सरकार से अनुरोध करता है कि वह राष्ट्रमण्डलीय सरकारों को इस बात के लिए प्रेरित करे कि वे अपने प्रभाव का उपयोग कर दक्षिणी अफ्रीकी शासन को बाध्य करें कि वह अपनी इस मानवता विरोधी नीति का परित्याग करे।

[31 दिसम्बर 1952; कानपुर, पहला सा०अ०]

52.14. विदेशी बस्तियां

जनसंघ का यह स्पष्ट मत है कि भारत में अब फ्रांस और पुर्तगाल के आधीन बस्तियों का रहना सर्वथा अनुचित है। स्वतंत्र भारत के नैसर्गिक विकास और उसकी उद्गत जागृत राष्ट्र चेतना के यह प्रतिकूल है। इन बस्तियों के लोग भारत में विलय चाहते हैं परन्तु खेद है कि अंग्रेजों के अनुभव से लाभ न उठाकर, इन अशक्त यूरोपीय देशों के शासक, राष्ट्रीय शक्तियों का बर्बर रूप से दमन कर रहे हैं। भारत इस दमन-चक्र को मूक भाव से देख नहीं सकेगा। प्रबल लोक-मांग के अतिरिक्त भारत की सुरक्षा की दृष्टि से भी इन सागरतटीय बस्तियों का अस्तित्व देश के लिए संकट का कारण हो सकता है। अतः जनसंघ भारत सरकार से अनुरोध करता है कि इन बस्तियों के भारत में विलय के लिए सक्रिय पग उठाये।

[31 दिसम्बर 1952; कानपुर, पहला सा०अ०]

52.26. पूर्वी बंगाल से भारी निष्क्रमण

पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं की दिनों दिन बिगड़ती हुई दशा के कारण भारत की जनता को गंभीर चिंता हो रही है। यह चिंता तब से और बढ़ गई है जब से यह स्पष्ट हुआ है कि पाकिस्तान की नीति यह है कि दृढ़ मानस के लोगों को वहां से निकालकर दुर्बलों को अत्याचार और बलात्कार के भय से इस्लाम ग्रहण करने के लिए बाध्य किया जाय। इस दिशा में सबल उद्योग वहां आरंभ हो गये हैं।

पाकिस्तानी संविधान— पाकिस्तान के संविधान निर्माण के विषय में वहां की सिद्धांत समिति की रिपोर्ट में इसी नीति का परिपाक दिखाई देता है। तदनुसार कोई गैर-मुस्लिम पाकिस्तान का प्रधान नहीं हो सकता। बौद्ध, हरिजन और इतर हिन्दू, इस प्रकार तीन वर्गों में हिन्दुओं को बांटकर दुर्बल बनाया गया

है। अल्पसंख्यकों को संयुक्त चुनावों का अधिकार भी नहीं दिया गया। यह लोकतंत्र की विडंबना है कि बहुसंख्यक अपने लिए अलग चुनाव की व्यवस्था करें, जिससे वे सदा के लिए एक राजनैतिक बहुपक्ष के रूप में दूसरों पर शासन कर सकें। इतना ही नहीं मुस्लिम धर्माधिकारियों के बोर्ड बनाये जायेंगे जो यह देखेंगे कि कोई कानून कुरान और शरिअत के विरुद्ध न हो। परन्तु अल्पसंख्यकों के धर्म और संस्कृति की रक्षा का कोई समान प्रबन्ध नहीं। उनके अधिकारों की चर्चा भी निर्देशात्मक भाग में की गई है, जनाधिकारों संबंधी आदेशात्मक भाग में नहीं। इस सबका परिणाम स्पष्ट रूप से एक ही निकलता है कि हिन्दुओं का धर्म, उनकी समाज व्यवस्था, उनकी आर्थिक तथा राजनैतिक स्थिति, कुछ भी सुरक्षित नहीं है। वे पूर्णतया दास बनाये जायेंगे और वह दासता तभी छूट सकेगी जब वे इस्लाम धर्म ग्रहण कर नागरिकता प्राप्त करेंगे। यह इस्लामी लोकतंत्र भले ही हो परन्तु मानवता के विरुद्ध एक भयंकर बलात्कार और असभ्य मध्यकालीन धर्मान्धता का नग्न रूप है।

भारत शांत भाव से यह सब कुछ होते नहीं देख सकता, क्योंकि पाकिस्तान के हिन्दुओं की सुरक्षा का उत्तरदायित्व उसने लिया था। पाकिस्तानवासी हिन्दुओं ने विभाजन नहीं मांगा था, उन पर उनकी इच्छा के विरुद्ध यह ठूंसा गया था और विभाजन के समय भारत के नेताओं ने—जिसमें महात्मा गांधी, सरदार पटेल और नेहरू प्रमुख थे—यह स्पष्ट वचन दिया था कि उनके हितों पर निरंतर दृष्टि रखना और उनकी रक्षा करना भारत के जन और शासन का कर्तव्य होगा।

साथ ही जिस प्रकार पूर्वी बंगाल से हिन्दुओं को निकाला जा रहा है और उन्हें भारत में आकर शरण लेनी पड़ रही है, यदि यह जारी रहा तो इन प्रायः 1 करोड़ जनों को जो लुट-पिट कर आयेंगे, यहां फिर से बसाना, काम दिलाना, और समृद्ध बनाना भारत के आर्थिक सामर्थ्य से सर्वथा बाहर है। यह भारत की कमर तोड़ देगा। यह भी हम भूल नहीं सकते कि भारत के विभाजन का मौलिक आधार यह था कि दोनों विभाजित भागों के शासक अपने-अपने अल्पसंख्यक वर्गों को बराबरी के अधिकार देंगे और संतुष्ट रखेंगे। पाकिस्तान ने इस आधारभूत मान्यता को जानबूझ कर और लगातार ठुकराया है। अतः भारत का यह अधिकार ही नहीं अपितु कर्तव्य हो गया है कि पाकिस्तान के अल्पसंख्यकों की रक्षा का भार संभाले।

अतः जनसंघ भारत शासन से अनुरोध करता है कि यह पूर्ण बलपूर्वक पाकिस्तानी शासन पर दबाव डाले और मांग करता है कि वहां सब प्रकार का माल भेजना बंद किया जाय और उससे व्यापार संबंध विच्छेद कर दिये जायें। इसके अतिरिक्त वे सब उपाय अपनाये जायें जो कि इस समस्या के स्थायी हल के लिए आवश्यक हैं।

पूर्वी व पश्चिमी बंगालों के बीच पारपत्र प्रणाली—यह समस्या न

साम्प्रदायिक है न प्रांतीय, अपितु राजनैतिक और राष्ट्रीय है और यह अखिल भारतीय आधार पर ही सुलझायी जानी चाहिए। पश्चिमी बंगाल के सभी प्रगतिशील दलों ने संयुक्त रूप से इस समस्या के विषय में जो निर्णय किया है, उसका यह अधिवेशन स्वागत करता है।

यह अधिवेशन सरकार द्वारा पूर्वी बंगाल और भारत के बीच पारपत्र प्रणाली के आरम्भ की निंदा करता है। यह 1950 के दिल्ली समझौते को पूर्णतया भंग करता है, जिसमें स्पष्ट रूप से यह घोषणा की गई थी कि दोनों बंगाल के मध्य मुक्त आवागवन पर कोई प्रतिबंध नहीं होगा।

गत अक्तूबर में पारपत्र प्रणाली के लागू होने के समय से निर्वासितों की संख्या घट गई है, यहां तक कि इससे प्रधानमंत्री सहित सरकारी क्षेत्रों में एक मिथ्या आत्मसंतोष का भाव उत्पन्न हो गया है। वे समझते हैं कि निर्वासितों की समस्या प्रायः समाप्त हो गई है। यह अधिवेशन अपना स्पष्ट मत प्रकट करता है कि पारपत्र प्रणाली ने लाखों असहाय जनों पर एक लौह आवरण डाल दिया है। इसमें अधिकांश अज्ञान, असुरक्षा तथा अत्याचार से त्रस्त हैं और वे वहां घिर कर पाकिस्तान के प्रतिगामी तत्वों के सम्मुख जिन्हें पाक अधिकारियों का समर्थन प्राप्त है, आत्मसमर्पण करने को बाध्य हो जायेंगे और संभवतः धर्म परिवर्तन कर इस्लाम स्वीकार कर लेंगे। यदि पूर्वी पाकिस्तान में शांति दिखाई देती है तो वह श्मशान की शांति है, जीवन की शांति नहीं।

अतः यह अधिवेशन मांग करता है कि पारपत्र प्रणाली तोड़ दी जाय और लौह आवरण हटा दिया जाय।

[31 दिसम्बर 1952; कानपुर, पहला सा०अ०]

53.03. विदेशी बस्तियां

स्वतंत्र भारत में पुर्तगाली और फ्रांसीसी बस्तियों का बने रहना हमारे देश की सुरक्षा और अखंडता को चुनौती है। वे भारत विरोधी प्रचार और अन्य गतिविधियों के केन्द्र बन गई हैं। इन बस्तियों के भारत में विलयन की स्थानीय जनता द्वारा की जा रही मांग को, किराये के सैनिकों की सहायता से आतंक का साम्राज्य निर्माण कर दबाया जा रहा है। यह ऐसी स्थिति है कि इस ओर शीघ्र देश का ध्यान जाना चाहिए।

भारत सरकार द्वारा पुर्तगाल में भारतीय वाणिज्य दूतावास को विरोध स्वरूप बन्द किये जाने का केन्द्रीय कार्य समिति स्वागत करती है, लेकिन इसके साथ ही यह आवश्यक समझती है कि स्थिति की गंभीरता को देखते हुए भारत सरकार और भी कड़े कदम उठाये। यह खेद की बात है कि दुनिया भर में उपनिवेशवाद के विरुद्ध आवाज उठाने वाली भारत सरकार, स्वतः की भूमि पर से ही उपनिवेशवाद को मिटाने में असफल रही है। कार्य समिति सरकार को विश्वास दिलाती है कि भारत से उपनिवेशवाद के बचे-खुचे अवशिष्टों का सफाया

करने के लिए वह जो भी कदम उठायेगी भारतीय जनसंघ उसका पूरा समर्थन करेगा।

[4 जुलाई 1953; दिल्ली, के०का०स०]

53.04. भारत-पाक वार्ता

भारतीय जनसंघ की केन्द्रीय कार्य समिति भारत और पाकिस्तान के बीच विभिन्न विवादों के निबटारे के लिए दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों की प्रस्तावित वार्ता के प्रति पूर्ण जागरूक है। जनसंघ का यह निश्चित मत है कि भारत को यथासंभव अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों के शांतिपूर्ण समाधान के लिए सदा तैयार रहना चाहिए। लेकिन कार्य समिति यह मांग करती है कि प्रधानमंत्री को इन मामलों पर बातचीत शुरू करने के पूर्व, एक राष्ट्रीय नीति निर्धारित करने के लिए अन्य दलों को विश्वास में लेना चाहिए।

[4 जुलाई 1953; दिल्ली, के०का०स०]

53.09. भारत-पाक संबंध

भारत से मैत्री एवं सद्भावपूर्ण संबंध बनाने की दिशा में पाकिस्तान की ओर से जो प्रयास पिछले समय से आरम्भ हुआ है उसका भारतीय प्रतिनिधि सभा स्वागत करती है। किन्तु सभा का यह मत है कि भारत-पाक संबंधों में कटुता उत्पन्न होने के लिए गत 6 वर्षों में पाकिस्तान का सांप्रदायिक और भारत विरोधी व्यवहार मुख्य कारण रहा है। उसके फलस्वरूप भारत की जनता में पाकिस्तान के प्रति जो गहरा संदेह घर कर गया है, वह तभी दूर हो सकता है जब पाकिस्तान की ओर से मैत्री एवं सद्भाव न केवल शब्दों द्वारा अथवा संधियों के रूप में ही व्यक्त किया जाय अपितु वह व्यवहार और आचरण में भी वस्तुतः आये। दो सरकारों में की गई संधि मात्र से ही उन देशों में मैत्री स्थापित नहीं हो सकती। उसके लिए उन देशों की जनता के मन से संदेह दूर होने चाहिए तथा पारस्परिक विश्वास और सद्भावना आनी चाहिए।

भारत-पाक समस्याएं— अतएव यह आवश्यक है कि पाकिस्तान अपने हृदय-परिवर्तन का परिचय प्रत्यक्ष व्यवहार में दे और सर्वप्रथम पूर्वी पाकिस्तान की समस्या को शीघ्रातिशीघ्र सुलझाये। वहां जो हिन्दू आज दीनहीन व दरिद्र होकर पड़े हैं और जिन्हें अपने जीवन, मान, धन और धर्म की रक्षा तक का भरोसा नहीं है उन्हें गौरवपूर्ण स्वतंत्र जीवन का अधिकार प्राप्त होना चाहिए। इसी प्रकार साम्प्रदायिक विद्वेष की ज्वाला में झुलसकर जिन हिन्दुओं को पूर्वी बंगाल छोड़कर भारत आना पड़ा है उन्हें वापस पूर्वी बंगाल में उनके घरों में बसाने, उनकी सम्पत्ति तथा धन्धे वापस दिलाने की उचित एवं आवश्यक व्यवस्था करना पाकिस्तान का दायित्व है। इस दायित्व की पूर्ति के बिना भारत-पाक मैत्री की कल्पना असंभव है। इसी प्रकार निर्वासितों की सम्पत्ति की क्षति-

पूर्ति, अपहृत महिलाओं की वापसी तथा जम्मू का 2/5 भाग जो बलपूर्वक पाकिस्तान के कब्जे में है उसकी वापसी आदि के प्रश्न हैं, जिनका पाकिस्तान द्वारा सुलझाव भारत-पाक मैत्री के लिए आवश्यक है। पूर्वी बंगाल के बीच पारपत्र को हटाना भी मैत्रीपूर्ण वातावरण तैयार करने के लिए आवश्यक है।

इस सभा का यह मत है कि पाकिस्तान में गत 6 वर्षों में दिखाई देने वाले भारत-विरोधी एवं तज्जन्य प्रवृत्तियों का कारण वह आधार है जो पाकिस्तान के नेताओं ने अपने राज्य निर्माण के लिए चुना। भारत ने धर्म-निरपेक्षता के आधार पर अपने संविधान का निर्माण किया, फलस्वरूप यहां हिन्दू-इतरों का जीवन हिन्दुओं के ही समान सुरक्षित है और उन्हें सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में समान अधिकार प्राप्त हैं। किन्तु पाकिस्तान एक इस्लामिक राज्य बनाया गया है। फलतः इस्लाम को न मानने वालों को वहां सामाजिक, राजनैनिक और आर्थिक—किसी भी क्षेत्र में न तो समानता प्राप्त है और न सम्मानपूर्ण जीवन का विश्वास बचा रह गया है।

अतः यह प्रतिनिधि सभा भारत-पाक संबंधों की नवीन दिशा का स्वागत करते हुए भारत सरकार से यह आग्रह करती है कि जहां वह उपरोक्त समस्याओं को तुरंत हल करने के लिए पाकिस्तान पर दबाव डालेगी, वहां वह पाकिस्तान पर इस बात के लिए भी जोर दे कि वहां का भावी संविधान भारत के समान धर्म-निरपेक्षता के आधार पर बनाया जाय और उसमें सम्मिलित निर्वाचन भीरहे, जिससे वहां के अल्पसंख्यक भी उसी प्रकार सुरक्षा तथा आत्मविश्वास के साथ समान रूप से रह सकें जिस प्रकार वे भारत में रह रहे हैं।

[15 अगस्त 1953; इलाहाबाद, भा०प्र०स०]

53.15. चीन की आक्रमणकारी नीति के बारे में चेतावनी

खतरनाक चीनी सैनिक अड्डे—इस तथ्य को दृष्टिगत करते हुए कि कम्युनिस्ट चीन भारत की उत्तरी सीमाओं पर अत्यधिक आक्रमणकारी रूप धारण करता जा रहा है, उसकी फौजों ने तिब्बत को रोंदा और वहां की युगों पुरानी स्वाधीनता को समाप्त कर दिया, सिक्यांग में भारतीय वाणिज्य दूत का कार्यालय बंद कर दिया और अब ऐसे सैनिक अड्डे कायम किये जा रहे हैं जहां से उत्तर भारत पर आसानी से हमला किया जा सकता है, कैलाश और मानसरोवर जाने वाले भारतीय तीर्थयात्रियों को और तिब्बत से व्यापार करने वाले भारतीय व्यापारियों को तंग और अपमानित किया जा रहा है।

चीनी नक्शों में भारतीय भूभाग—यह ध्यान देने की बात है कि ऐसे नक्शे जारी किये जा रहे हैं जिनमें उत्तर व पूर्वी भारत के भागों को चीन का क्षेत्र दिखाया जाता है। अतएव जनसंघ का मत है कि भारत सरकार को पीकिंग में अपने प्रतिनिधियों को आदेश देना चाहिए कि वे **चीन की इस हमलावर नीति का** जोरदार शब्दों में विरोध करें। इस बात की घोषणा भी बड़े असंदिग्ध शब्दों में की जानी चाहिए कि भारत और तिब्बत की सीमा के रूप में मैकमोहन रेखा निश्चित एवं स्थायी है और वहां कोई छेड़छाड़ नहीं होनी चाहिए। यह भी मांग की जाय कि तिब्बत जाने वाले भारतीय तीर्थयात्रियों और व्यापारियों के साथ छेड़छाड़ बंद हो और सिक्यांग में भारतीय वाणिज्य दूत के कार्यालय को फिर से खोलने की अनुमति दी जाय।

[20 दिसम्बर 1953; दिल्ली, के०का०स०]

53.16. पाकिस्तान को सैनिक सहायता

अमरीका-पाकिस्तान संधि भारत और समूचे दक्षिणी एशिया की सुरक्षा के लिए जबर्दस्त खतरा है। इससे शीतयुद्ध इस क्षेत्र की देहरी तक आ जायेगा और इस क्षेत्र की इच्छाशक्ति एवं साधन—जिनका सामान्य जनता के रहन-सहन का स्तर ऊंचा करने के लिए आर्थिक एवं औद्योगिक विकास में लगाया जाना आवश्यक है—शस्त्रास्त्रों की होड़ पर लगाये जाने लगेंगे जो कि विनाशकारी होगा, क्योंकि इससे किसी भी समय खुला युद्ध छिड़ सकता है।

पाकिस्तान प्रारंभ से ही भारत के प्रति दुश्मन जैसा व्यवहार करता आया है। काश्मीर पर उसका आक्रमण जारी है। उसने धर्मप्रधान इस्लामी राज्य की स्थापना का फैसला किया, जिसका अर्थ है कि पाकिस्तान में रहने वाले 1 करोड़ गैरमुसलमान नागरिकों की तरह नहीं बल्कि गुलामों की तरह रहेंगे और उनके जीवन, धर्म एवं सम्मान को वहां कोई संरक्षण प्राप्त नहीं होगा। यह सब बातें ऐसी हैं कि जब इनको पाकिस्तान के नेताओं की ओर से भारत के विरुद्ध जिहाद की बार-बार दी जाने वाली धमकियों के संदर्भ में देखा जाता है तब भारत के विरुद्ध पाकिस्तान के हमलावर इरादों के बारे में जरा भी संदेह नहीं रह जाता। ऐसी परिस्थिति में और भारत की इस स्पष्ट चेतावनी के बावजूद कि यह देश ऐसे किसी कार्य को अमैत्रीपूर्ण मानेगा, संयुक्त राज्य अमरीका ने पाकिस्तान को सैनिक सहायता देना स्वीकार किया है।

अन्तर्राष्ट्रीय झमेलों में अनावश्यक उलझाव—प्रधानमंत्री ने स्थिति की गंभीरता को स्वीकार किया है। लेकिन, जनता के समक्ष यह तथ्य भी स्पष्ट हो जाना चाहिए कि इसकी जिम्मेदारी हमारे विदेश मंत्रालय पर है, जिसने हमारी विदेश नीति का संचालन गलत ढंग से किया। संयुक्त राज्य अमरीका समेत कई देशों ने हमसे मित्रता करने की कोशिशें की लेकिन हमारी सरकार ने ऐसी नीतियां अपनायीं कि उन सबको झिड़कियां मिलीं और हम उनकी सहानुभूति एवं सद्भावना खो बैठे। भारत ने यद्यपि दोनों शक्तिगुटों से दूर रहने का फैसला किया हमारी सरकार अन्तर्राष्ट्रीय झमेलों में अनावश्यक रूप से उलझी जिसके कारण यह गंभीर स्थिति पैदा हुई। हमारी विदेश नीति का ऐसा नवीनीकरण हो कि अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं पर ऊंची कल्पनाओं के उपदेश सबको सुनने की बजाय वह

केवल राष्ट्रीय हितों की दृष्टि से परिचालित हो, वर्तमान उलझाव कम हों और भारत के लिए तटस्थ रह सकना संभव हो।

भारत लोकतंत्र और विश्वशांति के लिए कृतसंकल्प है। अमरीका भी यही कहता है। अमरीका को समझना चाहिए कि उसके वर्तमान कदम एशिया में इन उद्देश्यों को विफल बनाने के लिए सबसे बड़े कारण सिद्ध होंगे। अपने दुश्मनों का हित करने के लिए अमरीका शायद इससे बड़ा और कोई काम नहीं कर सकता और अमरीकी राजनेता यदि इन वास्तविकताओं को देखने से इनकार करते हैं तो यह निश्चय ही बड़े खेद की बात होगी।

आम सैनिक प्रशिक्षण—घटनाक्रम बड़ी तेजी से चल रहा है और भारत को इस दौड़ में पिछड़ना नहीं चाहिए। हमें भयंकरतम स्थिति का सामना करने के लिए शस्त्रास्त्रों से सज्जित होना चाहिए। आम सैनिक प्रशिक्षण के जनसंघ के प्रस्ताव को अविलम्ब स्वीकार किया जाना चाहिए। सरकारी खर्चों में कटौती करके मितव्ययिता बरती जानी चाहिए और इसमें संदेह नहीं कि जनता भी अपनी कमर कसेगी, अपनी प्रतिरक्षा शक्ति को मजबूत बनाने के लिए श्रेष्ठतम प्रयास करेगी और ऐसे प्रयत्न करेगी जिससे दक्षिणी एशिया में शक्ति संतुलन बिगड़ने न पाये।

राष्ट्रीय प्रतिरक्षा कार्यक्रम—जनसंघ महसूस करता है कि घरेलू मोर्चे पर राष्ट्रवादी तत्वों का दमन करने की अविवेकपूर्ण नीति से भारी अहित हुआ है। राष्ट्र पर महान संकट के समय जिन शक्तियों का सहारा लिया जा सकता था उन्हें केवल इसलिए दबाया गया कि उन तत्वों को खुश किया जा सके जिनकी राष्ट्र-निष्ठा संदिग्ध है और जिनकी विदेशों से गुप्त सांठ-गांठ है। जनसंघ सरकार से अनुरोध करता है कि बढ़ते संकट को देखते हुए इस आत्मघाती नीति को बदला जाय। वह सरकार का आवाहन करता है कि दलगत और व्यक्तिगत प्रतिष्ठा की सीमाओं से ऊपर उठें, सब राष्ट्रवादी दलों का विश्वास प्राप्त करे और उनके नेताओं के साथ परामर्श करके एक राष्ट्रीय प्रतिरक्षा कार्यक्रम प्रस्तुत करें। जनसंघ इस संबंध में सरकार को अपने पूर्ण सहयोग का आश्वासन देता है।

समिति देश भर में अपनी शाखाओं से अनुरोध करती है कि वे जनता को स्थिति की गंभीरता से अवगत कराये और जनता की भावनाओं को इतना जगाये जिससे सरकार इस संबंध में न तो शिथिलता बरतने पाये और न उसमें दुर्बलता आये। 27 नवम्बर 1953 से 3 जनवरी 1954 तक के सप्ताह को 'राष्ट्र सुरक्षा सप्ताह' के रूप में मनाया जाना चाहिए।

[20 दिसम्बर 1953; दिल्ली, के०का०स०]

53.17. विदेशी बस्तियां

भारत की पवित्र भूमि पर कुछ बस्तियों का अब भी विदेशी अधिकार में रहना, इस देश की प्रभुसत्ता के साथ जबर्दस्त विसंगति है। और यह मध्ययुगीन उपनिवेशवाद का ऐसा अवशेष है जो कालगति के विरुद्ध है। भारत, जो दुनिया भर

में उपनिवेषवाद की समाप्ति का समर्थक है, उसे अपनी ही धरती पर कदापि सहन नहीं कर सकता। इन बस्तियों की जनता ने अपनी स्वतंत्रता के लिए जो संघर्ष किये उनका बड़ी निर्ममता से दमन किया गया। गोवा में हाल का भारी सैनिक जमाव इस बात का संकेत है कि घटनाक्रम किस दिशा में चल रहा है। इस कदम का पापाचारी स्वरूप तब और भी स्पष्ट हो जाता है जब यह विचार आता है कि पुर्तगाल जैसे छोटे देश ने सैन्य बल का प्रदर्शन इसलिए किया क्योंकि उसे संयुक्त राज्य अमरीका से शस्त्रास्त्र और धन दोनों की मदद मिली।

इस बात को देखते हुए कि अमरीका ने पाकिस्तान के साथ भी सैनिक समझौता करने का फैसला किया है, यह असंभव नहीं कि भारत भूमि पर स्थित इन बस्तियों का उपयोग सैनिक अड्डों के रूप में किया जाय। पाकिस्तान के दो पाटों के बीच में दबा और अपनी समुद्रतटीय बस्तियों में विदेशी अड्डों से घिरा भारत अपने ही घर में बंदी हो जायेगा। यह ऐसी स्थिति है जिसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। जनसंघ सरकार से अनुरोध करता है कि वह समय रहते ही इन बस्तियों को समाप्त करने के लिए साहसपूर्ण कदम उठाये।

[20 दिसम्बर 1953; दिल्ली, के०का०स]

54.08. पाकिस्तान को सैनिक सहायता

पाक-अमरीकी सैनिक समझौता भारत तथा समूचे दक्षिणी एशिया की सुरक्षा के लिए गंभीरतम संकट उपस्थित करता है। इस समझौते से शीतयुद्ध अविलम्ब इन क्षेत्रों में आ जायेगा और उनकी शक्ति तथा साधन-स्रोतों को आर्थिक तथा औद्योगिक विकास से—जो सर्वसाधारण के जीवनस्तर को ऊपर उठाने के लिए आवश्यक है—विमुख करके शस्त्रास्त्रों की ऐसी होड़ में लगा देगा जो किसी भी दिन सशस्त्र युद्ध में परिणत होकर इस क्षेत्र के लिए घातक होगा।

पाकिस्तान आरंभ से ही भारत के प्रति शत्रु जैसा व्यवहार कर रहा है। काश्मीर पर उसका आक्रमण जो आज भी कायम है और एक मजहबी इस्लामी राज्य कायम करने का उसका निर्णय—जहां 1 करोड़ हिन्दू तथा अन्य गैर-मुस्लिम, नागरिक के नाते नहीं बल्कि शासित के रूप में रहेंगे तथा जिनका जीवन, धन, धर्म तथा सम्मान कुछ भी सुरक्षित नहीं रहेगा—ऐसे तथ्य हैं जो, पाकिस्तान के उत्तरदायी राजनीतिज्ञों द्वारा भारत के विरुद्ध निरन्तर लगाये जाने वाले जिहाद के नारों तथा पाकिस्तान के प्रधानमंत्री के इस कथन के साथ देखने पर कि अमरीकी सैनिक सहायता से काश्मीर-समस्या शीघ्र सुलझ जायेगी, पाकिस्तान के आक्रमण-कारी मंसूबों को बिलकुल स्पष्ट कर देते हैं। ऐसी स्थिति में तथा इस चेतावनी के बावजूद कि भारत इस कार्यवाही को अमैत्रीपूर्ण मानेगा, अमरीका ने पाकिस्तान को सैनिक सहायता देना ठीक समझा है।

अन्तर्राष्ट्रीय झमेलों में अनावश्यक उलझाव—प्रधानमंत्री ने स्थिति की गंभीरता को स्वीकार किया है। किन्तु देश को यह भली भांति समझ लेना चाहिए

कि इसका उत्तरदायित्व मुख्यतः हमारे विदेश विभाग पर है, जिसने हमारी विदेश नीति को कार्यान्वित करने में घोर अकुशलता से काम लिया। अनेक देशों ने हमारी मित्रता प्राप्त करने का प्रयत्न किया किन्तु हमारी सरकार की नीतियों ने उन्हें हमसे विमुख कर दिया और जो सद्भावना हमें प्राप्त थी, उससे वंचित कर दिया। भारत ने दोनों शक्तिगुटों से अलग रहने का निर्णय किया था, किन्तु हमारी सरकार अनावश्यक रूप से अन्तर्राष्ट्रीय झमेलों में उलझी जिसका परिणाम वर्तमान गंभीर स्थिति के रूप में हमारे सामने है। जनसंघ भारत सरकार से मांग करता है कि वह अपनी विदेश नीति का पुनर्निर्धारण करे, जिसमें औरों को आदर्शवादी उपदेश देने की अपेक्षा राष्ट्रीय हित का ही ध्यान रखा जाय, हमारे उलझाव कम हों और भारत का तटस्थ बना रहना संभव हो सके।

भारत लोकतंत्र तथा विश्वशान्ति का पक्षपाती है। अमरीका भी इन्हीं उद्देश्यों का पक्षपाती होने का दावा करता है। अमरीका को समझ लेना चाहिए कि उसका वर्तमान रवैया इन्हीं उद्देश्यों को एशिया में पराजित करने का प्रबल कारण होगा। अपने शत्रुओं को सहायता देने के लिए वह इससे अधिक और कुछ नहीं कर सकता था और यदि अमरीकी राजनीति वास्तविकता के प्रति इतनी अन्धी प्रमाणित होती है तो वह वस्तुतः बड़े खेद की बात होगी।

आम सैनिक प्रशिक्षण—घटनाचक्र तीव्र गति से चल रहा है और भारत को चुप नहीं बैठना चाहिए। हमें हथियारबंद होना चाहिए और बुरी से बुरी स्थिति का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए। स्थिति की गंभीरता की यह मांग है कि आम सैनिक प्रशिक्षण देने के जनसंघ के प्रस्ताव को अविलम्ब अमल में लाया जाय। सरकार को खर्च में कमी करनी चाहिए और बचत के उपायों को अपनाना चाहिए। जहां तक जनता का प्रश्न है वह निश्चय ही अपनी कमर कसेगी और राष्ट्रीय सुरक्षा को दृढ़ करने के लिए शक्ति भर प्रयत्न करेगी, जिससे दक्षिणी एशिया में शक्ति-संतुलन बिगड़ने न पाये। जनसंघ यह अनुभव करता है कि भारत की प्रतिरक्षा को सुदृढ़ करना देश की आर्थिक तथा औद्योगिक समृद्धि के कार्यक्रम के प्रतिकूल नहीं है। प्रतिरक्षा तथा आर्थिक नियोजन दोनों में पूर्ण समन्वय होना चाहिए। राष्ट्र को समृद्धिशाली बनाने से प्रथम उसका जीवित रहना आवश्यक है।

राष्ट्रीय प्रतिरक्षा कार्यक्रम—नैतिक तथा आत्मिक शक्ति का महत्त्व स्वीकार करने में जनसंघ किसी से पीछे नहीं है। किन्तु वह देशवासियों को शुतुर-मुर्ग की भांति वस्तुस्थिति से आंखें मूंदने के इस विश्वास के विरुद्ध है जिसे अनेक मंचों से व्यक्त किया जा रहा है कि भारत को अपनी प्रतिरक्षा शक्ति को दृढ़ करने की आवश्यकता नहीं है। यह चेतावनी देना वह अपना कर्तव्य समझता है कि कटु सत्यों से परिपूर्ण इस विश्व में एक निश्शस्त्र राष्ट्र अपनी सुरक्षा को खतरा पैदा करने वाले किसी भी बर्बर आक्रमणकारी का सफलता से सामना नहीं कर सकता। काश्मीर की रक्षा के लिए हमने शस्त्रों का उपयोग किया और महात्मा गांधी ने भी उसका विरोध नहीं किया—इतना यह बताने के लिए पर्याप्त है कि स्वतः

की सद्भावना मात्र से शेष संसार सद्भावनापूर्ण नहीं हो जाता।

जनसंघ यह अनुभव करता है कि देश के भीतर राष्ट्रीय तत्त्वों को—जिन पर कि भीषणतम राष्ट्रीय संकट के समय निर्भर रहा जा सकता है—संदेहास्पद निष्ठा रखने वाले तथा विदेशों से गुप्त रीति से संबंध रखने वाले लोगों को खुश करने मात्र के लिए, दबाने की अदूरदर्शी नीति से महान क्षति हुई है। जनसंघ सरकार से यह अपील करता है कि वह बढ़ते हुए संकट को देखते हुए इस आत्म-घातक नीति को छोड़कर और दल तथा सम्मान की प्रतिष्ठा से ऊपर उठकर, सभी राष्ट्रवादी दलों को विश्वास में ले तथा उनके नेताओं के साथ विचार-विनिमय द्वारा एक राष्ट्रीय प्रतिरक्षा कार्यक्रम तैयार करे। इस उद्देश्य की पूर्ति में जनसंघ अपने पूर्ण सहयोग का आश्वासन देता है।

प्रधानमंत्री ने यह दावा किया है कि उनकी विदेश नीति एक राष्ट्रीय नीति है। किन्तु जिस नीति के निर्धारण में राष्ट्रवादी दलों के साथ परामर्श तक नहीं किया जाता उसे राष्ट्रीय नीति के नाम से सम्बोधित नहीं किया जा सकता। राष्ट्रीय संकट के इस काल में राष्ट्रवादी दलों द्वारा बढ़ाये गये स्वेच्छापूर्ण सहयोग के हाथ के प्रति प्रधानमंत्री ने अब तक जो उपेक्षाभाव अपनाया है, उससे कहीं अधिक अच्छे प्रत्युत्तर की आशा उनसे की जाती थी।

[25 जनवरी 1954; बंबई, दूसरा सा०अ०]

54.10. विदेशी बस्तियां

भारत की भूमि पर मध्ययुगीन उपनिवेशवाद की अवशिष्ट विदेशी बस्तियों का अस्तित्व भारत की सार्वभौमसत्ता के विपरीत है। भारत, जो कि संपूर्ण विश्व के उपनिवेशवाद की समाप्ति चाहता है इन्हें अपनी ही भूमि पर सहन नहीं कर सकता। इन क्षेत्रों के बस्तियों के स्वातंत्र्य-संघर्ष को बुरी तरह कुचला गया है। हाल ही में गोवा में सेना का केन्द्रीकरण इस बात का सूचक है कि घटनाएं किधर जा रही हैं। इस पग के पीछे की दुर्भावनाएं स्पष्ट हो जाती हैं। पुर्तगाल जैसे छोटे से देश द्वारा यह सैन्य शक्ति का प्रदर्शन अमरीका से प्राप्त धन और शस्त्रों की सहायता से संभव हुआ है।

यह ध्यान में रखते हुए कि अमरीका पाकिस्तान से सैनिक समझौता कर रहा है, इन बस्तियों का उपयोग भारत की भूमि पर सैनिक अड्डों के लिए किया जा सकता है। पाकिस्तान के दो पाटों के बीच फंसा तथा समुद्रतटवर्ती इन विदेशी अड्डों से घिरा भारत अपने ही घरों में मानो बंदी बन जायेगा, यह तथ्य अकल्प-नीय नहीं है। जनसंघ सरकार से आग्रह करता है कि समय रहते, प्रभावी मार्ग अपनाकर इन बस्तियों को समाप्त करे।

[25 जनवरी 1954; बंबई, दूसरा सा०अ०]

54.18. पूर्वी बंगाल द्वारा पाक सांप्रदायिकता का विरोध

उपनिवेशवाद की समाप्ति—सन्तोष का विषय है कि उपनिवेशवाद, फिर वह कहीं भी और किसी भी रूप में क्यों न हो, को समाप्त करने की नीति का जिस पर भारत ने निरंतर बल दिया है, विश्व का अधिकांश बहुमत समर्थन कर रहा है। तब यह नवस्वतंत्र राष्ट्र बिना किसी बाह्य हस्तक्षेप के अपने भाग्य का निर्माण करने के लिए पूर्णतः स्वतंत्र होंगे और पश्चिमी साम्राज्यवाद के कुशासन तथा शोषण से उत्पन्न विनाश को मिटाकर, सर्वसाधारण व्यक्ति का जीवनस्तर ऊपर उठा सकेंगे जिससे कि वह अन्तर्राष्ट्रीय लालच अथवा अनुपयुक्त विदेशी विचारधाराओं के नारों के शिकार न हो सके। इस संबंध में भारतीय जनसंघ दक्षिणी एशियाई प्रधानमंत्रियों के कोलम्बो सम्मेलन में हुए निर्णयों का स्वागत करता है।

केन्द्रीय कार्य समिति का यह मत है कि यदि दक्षिणी एशिया को विकसित होने का अवसर दिया गया तो वह एक ऐसी राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक व्यवस्था का निर्माण कर सकता है जो विश्व के दो शक्तिगुटों के सैद्धांतिक संघर्ष के बीच अंतिम हल के रूप में काम दे सके।

यह समिति एशिया तथा अफ्रीका के उन सभी लोगों को जो अपनी स्वतंत्रता के लिए यूरोपीय साम्राज्यवाद से लोहा ले रहे हैं, भारतीय जनता के पूर्ण समर्थन का आश्वासन देती है। भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम से जो शक्तियां उन्मुक्त हुई हैं उनकी परिणति सभी पराधीन राष्ट्रों की स्वतंत्रता तथा समानता के ऐसे युग के विहान में होनी चाहिए जिसमें जाति तथा वर्ण के भेदों का कोई स्थान न होगा।

पूर्वी बंगाल और पाकिस्तानी नीतियां—अमरीका-पाक सैनिक गठबंधन की निंदा करते हुए यह समिति इस बात पर संतोष व्यक्त करती है कि पूर्वी बंगाल की जनता ने असंदिग्ध रूप से इस गठबंधन तथा पाकिस्तान सरकार की सम्प्रदायवादी नीतियों के विरुद्ध अपना मत प्रकट कर दिया है। समिति पूर्वी बंगाल के नेताओं की हाल की घोषणाओं का स्वागत करती है। यह प्रसन्नता का विषय है कि राजनीतिक विभाजन के बावजूद भारत को 'एक तथा अखंड' मानने के जनसंघ की घोषणा का समर्थन विभाजन की अप्राकृतिक दीवारों के उस पार से भी किया गया है। समिति आशा करती है कि भारत के दोनों भागों की जनता तथा पार्टियां एकात्मता की इस भावना को और सुदृढ़ करती रहेंगी।

[8 मई 1954; दिल्ली, के०का०स०]

54.19. विदेशी बस्तियां

भारतीय जनसंघ की केन्द्रीय कार्य समिति भारत स्थित फ्रांसीसी तथा पुर्तगाली बस्तियों के निवासियों द्वारा मातृभूमि भारत में मिलने के लिए आरम्भ किये गये वीरतापूर्ण संघर्ष का अभिनंदन करती है और उन्हें अपने पूर्ण समर्थन

का आश्वासन देती है। यह दुःख की बात है कि यह विदेशी बस्तियाँ स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी भारत के मानचित्र पर कलंक के रूप में विद्यमान हैं।

स्वतंत्र भारत की भूमि पर विदेशियों का यह प्रभुत्व न केवल हमारी सार्वभौम सत्ता के लिए चुनौती है, अपितु हमारी सुरक्षा के लिए भी संकट का कारण है। यदि स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद भारत सरकार इन विदेशी बस्तियों के प्रति दृढ़ता की नीति अपनाती तो आज वहां के निवासियों को अपने जन्मसिद्ध अधिकार के लिए संघर्ष, उत्पीड़न तथा दमन का सामना न करना पड़ता।

समिति का यह निश्चित मत है कि विदेशी बस्तियां भारत का अभिन्न अंग हैं और उन्हें भारत में मिलाने के लिए किसी जनमत संग्रह की आवश्यकता नहीं है। विलय आंदोलन को दबाने के लिए फ्रांसीसी तथा पुर्तगाली साम्राज्यवादी जिस दमनपूर्ण नीति का अवलंबन कर रहे हैं, यह समिति उसकी तीव्र भर्त्सना करती है। भारत की सीमा में घुसकर भारतीय नागरिकों तथा भारतीय पुलिस पर आक्रमण तथा भारतीय ध्वज का अपमान—यह ऐसी घटनाएं हैं जिनकी प्रतिक्रिया होना सम्भव है और उसके लिए विदेशी साम्राज्यवाद ही उत्तरदायी होगा।

कार्य समिति की यह दृढ़ सम्मति है कि इन बस्तियों के भविष्य के संबंध में पुर्तगाली व फ्रांसीसी सरकारों से अविलम्ब सत्ता हस्तान्तरण के आधार पर ही वार्ता हो सकती है। समिति को यह आशा है कि भारत तथा फ्रांस के बीच इस संबंध में जो वार्ता होने वाली है उसका परिणाम फ्रांसीसी बस्तियों के भारत में अविलम्ब विलय के रूप में ही होगा।

वार्ता की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि फ्रांस दमन-नीति का परित्याग करे और बस्तियों का शासन वहां के जन नेताओं को जिन्हें आंदोलन काल में अनुचित रीति से पदच्युत कर दिया गया है, अविलम्ब सौंप दें जिससे सत्ता हस्तांतरण के लिए मार्ग प्रशस्त हो सके।

कार्य समिति पुर्तगाली बस्तियों के भारत में शामिल होने के प्रश्न पर पुर्तगाल सरकार द्वारा अपनाई गई तानाशाही तथा प्रतिक्रियावादी नीति की निंदा करती है और भारत सरकार से मांग करती है कि वह पुर्तगाली बस्तियों के भारत में विलय के लिए प्रभावी व सक्रिय पग उठाये।

[8 मई 1954; दिल्ली, के०का०स०]

55.08. विदेश नीति

पिछले कुछ दिनों से भारत सरकार की विदेश नीति की सफलता को जैसा बढ़ा-चढ़ाकर कहा गया है, उससे जनता में एक अयथार्थवादी दृष्टिकोण उत्पन्न होकर घरेलू समस्याओं की ओर से ध्यान हटता जा रहा है। तटस्थता और शांतिपूर्ण सहअस्तित्व हमारी विदेश नीति के उद्घोषित सिद्धांत हैं, किन्तु व्यवहार में ऐसी धारणा होती है कि भारत धीरे-धीरे अधिनायकवादी गुट में जा रहा है और

इसकी प्रतिक्रिया दूसरे गुट पर भी हो रही है। इस स्थिति का लाभ उठाकर कम्युनिस्ट अपनी कार्यवाहियों को बढ़ा रहे हैं तथा उनकी कार्यवाहियों को रोकने का दावा करते हुए अमरीका भी अपना प्रभाव-क्षेत्र बढ़ाने में संलग्न है। फलतः भारत दोनों शक्तियों का अखाड़ा बनता जा रहा है, जो उसके राष्ट्रीय हितों और आवश्यकताओं के लिए घातक है।

पंचशील के आधार पर सहअस्तित्व की नीति में बहुत कुछ सत्य है और यह सिद्धांत भारत के लिए नया भी नहीं। किन्तु हम भूल जाते हैं कि जो देश अपनी सीमा में विभिन्न विचारधाराओं के अस्तित्व को ही सहन नहीं करते उनकी श्रद्धा उन देशों के साथ सच्चे सहअस्तित्व या सहजीवन में नहीं हो सकती जो उनसे भिन्न विचारधारा या राजनीतिक व्यवस्था में विश्वास रखते हैं।

भारत की शांति और तटस्थता बहुत कुछ अपने पड़ौसी पाकिस्तान के रुख पर निर्भर है। पाकिस्तान भारत के प्रति शत्रुभाव लेकर चलता रहा है और आज भी काश्मीर पर उसके आक्रमण के फलस्वरूप दोनों देशों के बीच युद्ध की स्थिति विद्यमान है। उसके साथ सहअस्तित्व का सिद्धांत कैसे लागू हो सकेगा? वास्तव में तो भारत और पाकिस्तान के बीच स्थायी शांति की बहुत कम संभावना है क्योंकि भारत का विभाजन कोरिया, हिन्दचीन तथा जर्मनी के विभाजन के समान ही अस्वाभाविक है।

विदेश नीति की सफलता—भारतीय विदेश नीति की सफलता का निर्णय हमारे राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा और उनसे प्रत्यक्ष संबंध रखने वाली समस्याओं को ठीक प्रकार से सुलझाने की हमारी क्षमता से ही होगा। जनसंघ का मत है कि भारत की विदेश नीति का इस भांति संचालन किया जाय कि हमारे अधिकाधिक मित्र बनें तथा हम भारत की अखंडता, गोवा की मुक्ति एवं समुद्रपार भारतीयों के हितों की रक्षा के लिए विश्व में प्रबल जनमत तैयार कर सकें।

भारत को दोनों विरोधी गुटों से अलग रखते हुए हमें शीघ्रातिशीघ्र अपनी आंतरिक सामर्थ्य बढ़ाने की ओर भी ध्यान देना चाहिए, जिसके बिना तटस्थता का कोई अर्थ नहीं रहता।

दक्षिणीपूर्वी एशिया के देशों की ओर, जिनके साथ हमारे प्राचीन सांस्कृतिक संबंध हैं, हमें विशेष ध्यान देना चाहिए। इन देशों को सांस्कृतिक शिष्टमंडल भेजने चाहिए जिससे कि पुराने संबंध फिर दृढ़ हो सकें। इस दृष्टि से जनसंघ एशियाई-अफ्रीकी सम्मेलन का स्वागत करता है और कम्बोडिया तथा लाओस से दौत्य-संबंध स्थापित करने को सही दिशा में एक कदम मानता है।

[1 जनवरी 1955; जोधपुर, तीसरा सा०अ०]

55.09. फ्रांसीसी बस्तियों की मुक्ति

भारत स्थित फ्रांसीसी बस्तियों के निवासियों ने स्वतंत्रता के लिए जो वीरतापूर्ण संघर्ष किया उसके लिए भारतीय जनसंघ उनका हार्दिक अभिनंदन

करता है और उनकी सफलता को अखण्ड भारत के निर्माण की दिशा में एक चरण मानता है। जनसंघ को विश्वास है कि यह प्रयत्न तब तक जारी रहेगा जब तक इन बस्तियों का भारत के साथ पूर्णरूपेण एकीकरण नहीं हो जाता। जनसंघ भारत सरकार तथा इन बस्तियों के निवासियों से अपील करता है कि वे पृथकतावादी मनोवृत्तियों के प्रति जागरूक रहें, अन्यथा उनके सब किये-कराये पर पानी फिर जाने का भय है।

[1 जनवरी 1955; जोधपुर; तीसरा सा०अ०]

55.10. गोवा मुक्ति आंदोलन

भारत को स्वतंत्र हुए 7 वर्ष बीत चुके, किन्तु पुर्तगाली बस्तियों की भारतीय जनता, जो उपनिवेशवाद की जंजीरों से मुक्त होने के लिए गत अनेक वर्षों से सतत संघर्षरत है, आज भी मातृभूमि भारत में मिलने के लिए तड़प रही है। यह स्थिति स्वतंत्र भारत की सरकार के लिए अत्यंत लज्जाजनक है।

इस प्रश्न की ओर देखने का भारत सरकार का दृष्टिकोण मूलतः अशुद्ध है। गोवा-मुक्ति के अखिल भारतीय प्रश्न को केवल गोवावासियों तक सीमित रखकर भारत सरकार ने न केवल राष्ट्रीय एकात्मता की भावना को ठेस पहुंचाई है, वरन उसके परिणामस्वरूप मुक्ति आंदोलन को भी गहरी क्षति हुई है।

स्थिति दिन पर दिन भीषण होती जा रही है। सालाज़ार शासन के राक्षसी अत्याचारों से जनता त्रस्त है। युद्ध की धमकियां तथा पुर्तगाली फौज द्वारा भारतीय सीमा का आये दिन उल्लंघन भारत के लिए चुनौती है।

भारतीय जनसंघ की मांग है कि भारत सरकार भारतीय भूमि को विदेशी दासता से मुक्त करने के लिए अविलम्ब निर्णायक कदम उठाये। जनसंघ इस संबंध में शासन को पूर्ण सहयोग का आश्वासन देता है।

यह अधिवेशन पुर्तगाली बस्तियों की मुक्ति के लिए जनसंघ द्वारा परिचालित जनांदोलन के संबंध में संतोष व्यक्त करता है और उसे तीव्रतर करने का आदेश देता है।

[1 जनवरी 1955; जोधपुर, तीसरा सा०अ०]

55.16. पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यक

पूर्वी बंगाल से भागकर भारी संख्या में हिंदुओं के भारत आने पर केन्द्रीय कार्य समिति गहरी चिंता व्यक्त करती है। अपने अस्तित्व के इन साढ़े सात वर्षों में पाकिस्तान ने न केवल अपने यहां के अल्पसंख्यकों के जीवन, सम्मान और संपत्ति की सुरक्षा करने में अपनी असमर्थता का परिचय दिया है, बल्कि वह उनके आर्थिक जीवन का भी जानबूझ कर गला घोंटने का दोषी है ताकि उनको पाकिस्तान से निकाल बाहर किया जा सके। विभाजन की प्रक्रिया का एक अंतर्निहित बुनियादी सिद्धांत यह था कि अल्पसंख्यकों को पर्याप्त संरक्षण दिया जायेगा। पाकिस्तान

इस सिद्धांत का लगातार उल्लंघन करता आ रहा है। परिणामस्वरूप विभाजन का समूचा आधार ही हिल गया है।

इसके अतिरिक्त, पूर्वी बंगाल से भारी संख्या में लोगों के भागकर आने का दुष्प्रभाव सामान्यतः भारत के और खास कर पश्चिमी बंगाल के आर्थिक ढांचे पर पड़ रहा है। आंतरिक सुरक्षा और सामाजिक संतुलन भी अस्त व्यस्त हो गया है। हम पूर्वी बंगाल के अपने उन बेसहारा भाइयों के प्रति, जो देश के विभाजन के कारण दमन और अत्याचार सहने को बाध्य हैं, अपने नैतिक दायित्व से मुंह नहीं मोड़ सकते क्योंकि उन पर विभाजन उनकी इच्छा के विपरीत थोपा गया था।

इन तमाम बातों को देखते हुए कार्य समिति का मत है कि विभाजन को समाप्त समझा जाय और भारत सरकार उत्तरोत्तर बिगड़ती स्थिति पर काबू पाने के लिए शीघ्र प्रभावशाली एवं साहसिक कदम उठाये। पूर्वी बंगाल को भारत के समीप लाये बिना इस समस्या का हल नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह न केवल बंगाल के बल्कि समूचे भारत के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन के लिए खतरा बन रही है और इससे समूचे विश्व की शांति के लिए भी खतरा बढ़ रहा है।

कराची समझौता—पाकिस्तान के साथ किये जाने वाले कागजी समझौते समस्या का हल नहीं, क्योंकि पाकिस्तान सरकार ने इन समझौतों को कभी कोई महत्व नहीं दिया। अतः, जनसंघ को अब इस बारे में ही गहरा संदेह है कि भारत के पुनर्वास मंत्री श्री मेहरचन्द खन्ना और उनके समकक्ष पाकिस्तानी अधिकारी के बीच हाल में ही कराची में जो समझौता हुआ उसका कोई ठोस एवं स्थायी परिणाम निकलेगा। यदि पाकिस्तान सरकार इस समझौते के प्रति ईमानदार हो, जो कि संदिग्ध है, तो भी पश्चिमी पाकिस्तान के सरकारी अधिकारियों के पक्षपातपूर्ण रवैये के कारण, जो कि पूर्वी बंगाल की सरकार को चलाते हैं, इस समझौते का टूटना निश्चित है।

फिर भी, भारत सरकार यदि चाहती है कि इस समझौते को निभाने के लिए ईमानदारी से एक मौका दिया जाय तो उसे इसकी सफलता के लिए आवश्यक मनोवैज्ञानिक वातावरण तैयार करने के उद्देश्य से निम्नलिखित कदम उठाने चाहिए :

(1) पूर्वी बंगाल के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक जीवन से संबद्ध जो प्रतिष्ठित व्यक्ति भारत आ गये हैं उन्हें पूर्वी बंगाल में अपने घरों को लौट आने को राजी किया जाय। इस संबंध में कांग्रेस के उन नेताओं को जो आज पश्चिमी बंगाल में सत्ता में हैं, पहल करनी चाहिए। उनके इस कार्य से पूर्वी बंगाल में विद्यमान हिंदुओं में आत्मविश्वास जागेगा।

(2) श्री मेहरचन्द खन्ना स्वयं पूर्वी बंगाल जायें और वहां तब तक रहें जबतक समझौते की क्रियान्विति पूर्ण नहीं हो जाती। उनकी वहां की उपस्थिति से

समझौते के प्रति पाकिस्तानी अधिकारियों की उदासीनता एवं विरोध को घटाने में काफी मदद मिलेगी।

[15 अप्रैल 1955; गोकांक, के०का०स०]

55.23. पूर्वी बंगाल से भारी निष्क्रमण

कांग्रेसी नेताओं द्वारा किये गये भारत के अदूरदर्शी तथा दुर्भाग्यपूर्ण विभाजन के समय से ही पाकिस्तान से हिंदुओं का निष्क्रमण निरंतर जारी है। जहां तक पश्चिमी पाकिस्तान के प्रदेशों का संबंध है, वहां के समस्त हिंदुओं को, जिन में सिख भी शामिल हैं, पाशविक अत्याचारों के कारण भारत आने के लिए विवश होना पड़ा, जिसके फलस्वरूप प्रायः जनसंख्या का अदल-बदल ही हो गया और आज वहां से निर्वासित किये जाने के लिए बड़ी संख्या में हिंदू हैं ही नहीं। किन्तु पूर्व बंगाल के संबंध में स्थिति इससे भिन्न है। इस क्षेत्र में जनसंख्या का अदल-बदल होने के बजाय, वहां एकतरफा ही निष्क्रमण हुआ है। पूर्वी बंगाल से हिंदू आ रहे हैं, किन्तु पूर्वांचल (प० बंगाल, आसाम, बिहार तथा उड़ीसा) से मुसलमान पाकिस्तान जा नहीं रहे। अकेले पश्चिमी बंगाल में रहने वाले मुसलमानों की संख्या ही 50 लाख है।

पूर्वी बंगाल से हिंदुओं का निष्क्रमण 1947 से ही जारी है। किन्तु कभी वह विशाल रूप धारण कर लेता है, जैसा कि 1950 में हुआ जबकि हिंदुओं के विरुद्ध घृणा तथा हिंसा भड़काने के संगठित प्रयत्नों के फलस्वरूप 50 हजार हिंदू—आबाल-वृद्ध-बनिता—मौत के घाट उतार दिये गये और 50 लाख हिंदुओं को दाने-दाने के लिए मोहताज करके निर्वासित कर दिया गया। कभी-कभी हिंदुओं का निष्क्रमण मंद गति से होता है, किन्तु यह किसी न किसी रूप में जारी अवश्य रहता है। एक वर्ष पूर्व, 1954 के वसंत में, जब मुस्लिम लीग पूर्वी बंगाल के आम चुनाव में पूर्णतया परास्त हो गई और फजलुलहक मंत्रिमंडल का निर्माण हुआ, उस समय यह आशा हुई थी कि निष्क्रमण कम हो जायेगा। किन्तु हक मंत्रिमंडल की बरखास्तगी तथा लोकप्रिय सरकार के स्थान पर सैनिक शासन की स्थापना से यह आशा मिट्टी में मिल गई और हिंदुओं का निष्क्रमण फिर काफी बढ़ गया।

इस बार निष्क्रमण का प्रभाव केवल शिक्षित समुदाय पर न होकर, किसानों तथा कारीगरों पर भी हुआ जो साधारणतया राजनीति में रुचि नहीं रखते और जिनका संबंध अपनी भूमि से अटूट होता है। यह विशाल निष्क्रमण आज भी भीषण रूप में जारी है। उसके कारण स्पष्ट हैं। पूर्वी बंगाल के सभी वर्गों के हिन्दू इस संबंध में पूर्णतया एकमत हैं कि जब तक पाकिस्तान एक इस्लामी राज्य के रूप में विद्यमान तथा शासित है, तब तक हिन्दुओं के लिए वहां सम्मानपूर्वक जीवन बिताने की कोई आशा नहीं हो सकती। उनकी शिकायतों पर अधिकारी ध्यान नहीं देते, उनका आर्थिक जीवन अवरुद्ध किया जाता है। उनके सांस्कृतिक

तथा शैक्षणिक जीवन को विकृत करने के यत्न जारी हैं। कांग्रेस शासन द्वारा इन कटु सत्यों पर पर्दा डालने के प्रयत्नों के बावजूद, पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं की वर्तमान दुर्दशा की वास्तविकता को केन्द्रीय सरकार के विदेश उपमंत्री ने भी स्वीकार किया है।

जनसंघ अनुभव करता है कि पाकिस्तान से निर्वासित विस्थापितों की समस्या का स्थायी हल तभी संभव है जब अप्राकृतिक विभाजन का अन्त कर दिया जाय और बेघरबार हिन्दुओं को पुनः उनके घरों में बसा दिया जाय। किन्तु यह होने तक इन निर्वासितों के प्रति भारत सरकार को अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए, क्योंकि उनकी वर्तमान दुर्दशा के लिए उसकी ही नीति उत्तरदायी है। उसे पूर्वी बंगाल के हिन्दू निर्वासितों के पुनर्वास की उचित व्यवस्था करनी है। इस दिशा में सरकार के अब तक के प्रयत्न अधूरे तथा अनमने हैं। उसे अब समस्या की विशालता को भली भांति समझकर अपनी नीति का निर्धारण करना चाहिए।

जनसंघ निम्न सुझाव रखता है :

(1) पूर्वी बंगाल के हिन्दू निर्वासितों को बसाने के लिए उचित उपाय किये जायें जिससे वे आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी हो सकें और समाज के उपयोगी घटक के नाते भविष्य की ओर आशापूर्ण दृष्टि से देख सकें।

(2) इस बात का ध्यान रखा जाय कि एकाकी परिवारों को प्रतिकूल अथवा सर्वथा अपरिचित वातावरण में छुटपुट रूप से न बसना पड़े।

(3) पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं द्वारा पाकिस्तान में छोड़ी गई सम्पत्ति का पूरा मूल्य पाकिस्तान से वसूल करने के लिए भारत सरकार अविलम्ब कदम उठाये और उस धनराशि से 'क्षतिपूर्ति कोष' की स्थापना कर निर्वासितों को उनकी संपत्ति का मुआवजा दे।

(4) पाकिस्तान से आये हुए विस्थापितों को रजिस्ट्रेशन की कष्टकर पद्धति के बिना ही, भारतीय संघ की पूर्ण नागरिकता प्रदान की जाय।

(5) निर्वासितों के पुनर्वास के लिए अब तक निर्मित दुकानों तथा मकानों को सबसे ऊंची बोली लगाने वाले को नीलाम में देने की नीति का परित्याग किया जाय, क्योंकि उससे अनेक निर्वासित पुनः उजड़ जायेंगे। इस प्रकार की दुकानों तथा मकानों को उनमें रहने वाले निर्वासितों को लागत पर दे दिया जाय।

(6) पाकिस्तान के दोनों भागों से निर्वासित हिंदुओं के पुनर्वास की समस्या का पूर्ण अध्ययन करने के लिए एक उच्चस्तरीय आयोग नियुक्त किया जाय जो यह ज्ञात करे कि पुनर्वास समस्या को कहां तक सुलझाया गया है और अब तक न बसाये गये विस्थापितों के त्वरित पुनर्वास के लिए सुझाव दें।

[28 अगस्त 1955; कलकत्ता, भा०प्र०स०]

55.25. श्रीलंका स्थित भारतवंशी

भारतीय जनसंघ इस बात पर खेद प्रकट करता है कि भारत तथा श्रीलंका के बीच लंबी वार्ता के फलस्वरूप हुए अनेक समझौतों के पश्चात् भी श्रीलंका स्थित भारतीयों की स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है। इसके विपरीत, यह जान पड़ता है कि श्रीलंका सरकार समस्त समझौतों के कार्यान्वियन में उनका उल्लंघन कर, उन भारतीयों को किसी न किसी तरह श्रीलंका से निष्कासित करने पर तुली हुई है।

जनसंघ भारत सरकार से मांग करता है कि वह इस असंतोषजनक स्थिति को समाप्त करने के लिए अविलंब प्रभावी कार्यवाही करे जिससे श्रीलंका स्थित भारतीय सम्मानपूर्ण जीवनयापन कर सकें।

[28 अगस्त 1955; कलकत्ता, भा०प्र०स०]

55.26. बर्मा सरकार का रवैया

भारतीय जनसंघ भारत तथा बर्मा के आर्थिक संबंधों की ओर, जो बर्मा द्वारा भारत का प्रायः 70 करोड़ रु० का ऋण चुकाने में पूर्णतया असफल रहने के कारण असंतोषजनक हो गये हैं, ध्यान आकृष्ट करता है। यह खेद का विषय है कि भारत सरकार ने इस विपुल धनराशि को बर्मा से उगाहने का कोई उपाय नहीं किया है, अपितु इसके विपरीत उसे समाप्त सा कर दिया है, जिसके फलस्वरूप भारत को गहरी आर्थिक क्षति हुई है, जिसे सहन करना उसके लिए वर्तमान परिस्थिति में नितांत दुष्कर है।

बर्मा में राष्ट्रीयकरण—साथ ही बर्मा में बसे हुए भारतीय व्यापारियों तथा अन्यों की संपत्ति को राष्ट्रीयकरण के नाम पर जब्त सा कर लिया गया है जिससे उन्हें बड़े संकट का सामना करना पड़ रहा है। बर्मा-स्थित भारतीयों द्वारा बर्मा से भारत को धन भेजने पर प्रतिबंध लगा दिये जाने के फलस्वरूप भी वहां बसे हुए भारतीयों तथा उनके भारत स्थित आश्रितों को कठिनाई हो रही है।

यह संतोष का विषय है कि बर्मा भारत का मित्र है। किंतु जनसंघ अनुभव करता है कि बर्मा को भारत के प्रति अपने आर्थिक दायित्वों का अवश्यमेव पालन करना चाहिए। अतः जनसंघ भारत सरकार से मांग करता है कि वह अपनी बकाया राशि की ओर ध्यान दे, बर्मा से ऋण की वसूली के लिए पग उठाये और यह देखे कि बर्मा में बसे हुए भारतीयों के प्रति कोई अन्याय तथा असुविधा न हो।

[28 अगस्त 1955; कलकत्ता, भा०प्र०स०]

55.31. पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यक

केन्द्रीय कार्य समिति पूर्वी बंगाल से हिंदुओं के बढ़ते हुए निष्क्रमण पर चिंता प्रकट करती है। पूर्वी बंगाल में गैर-मुस्लिम लीगी मंत्रिमंडल बनने से जो

हालत सुधरने की आशा उत्पन्न हुई थी वह गत कुछ महीनों में आने वाले हिंदुओं की संख्या से गलत सिद्ध हो गई है। यह स्पष्ट हो गया है कि वहां के हिंदुओं की स्थिति चिंताजनक है और उन्हें या तो धर्मपरिवर्तन और या भारत आने के लिए कभी न कभी विवश होना पड़ेगा। इस परिस्थिति में कार्य समिति यह आवश्यक समझती है कि भारत सरकार पूर्वी बंगाल संबंधी अपनी नीति पर पुनर्विचार करे।

पाकिस्तान से भूमि की मांग—कार्य समिति के विचार में पूर्वी बंगाल के हिंदुओं के पुनर्वास के लिए भूमि की मांग करने के सिवाय अब इस समस्या का कोई और हल नहीं है।

[23 अक्तूबर 1955; दिल्ली, के०का०स०]

56.04. पूर्वी बंगाल से भारी निष्क्रमण

केन्द्रीय कार्य समिति पूर्वी बंगाल से हिंदुओं के लगातार तथा बढ़ते हुए निष्क्रमण पर गहरी चिंता व्यक्त करती है। वहां की परिस्थिति इतनी बिगड़ गई है, विशेष कर पाकिस्तानी संविधान के प्रारूप के प्रकाशन के पश्चात् (जिसमें हिंदू नागरिकों को मुसलमानों की तुलना में घटिया दर्जा दिया गया है) कि किसी भी हिंदू के लिए पाकिस्तान के इस्लामी राज्य में अधिक दिन तक रहना संभव नहीं होगा। भारत सरकार तथा भारतीय जनता इस स्थिति के प्रति उदासीन नहीं रह सकती क्योंकि इसका हमारे देश की अर्थव्यवस्था, सुरक्षा तथा राष्ट्रीय सम्मान पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

पाकिस्तान से भूमि की मांग—अतः कार्य समिति भारत सरकार से आग्रह करती है कि इस समस्या पर वह गंभीरता से विचार करे और उसे हल करने के लिए प्रभावी पग उठाये। बिना किसी अपराध के तथा उस मूलभूत समझौते के विरुद्ध, जिसके आधार पर कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग के बीच भारत का विभाजन किया गया था, जिन हिंदुओं को पाकिस्तान से निकाला जा रहा है, उनको बसाने के लिए पाकिस्तान से भूमि की मांग अब आवश्यक है। साथ ही इस दारुण मानवीय समस्या के संबंध में विश्व-जनमत को शिक्षित तथा जागृत करने का भी पूर्ण प्रयत्न किया जाय।

[19 फरवरी 1956; दिल्ली, के०का०स०]

56.07. पूर्वी बंगाल के विस्थापितों की समस्या

निष्क्रमण-पत्रों पर पाबंदी—पूर्वी बंगाल से भारी संख्या में हिंदुओं के भागने के सवाल पर भारत सरकार की नीति में अचानक परिवर्तन से जनसंघ को गहरा आघात पहुंचा है। ऐसा प्रतीत होता है कि भारत में पाकिस्तान के उच्चायुक्त राजा गजनफर अली खां ने संभवतः पाकिस्तान सरकार के इशारे पर जब सीमा बंद करने के लिए शोर मचाया तब कुछ मास पूर्व ढाका स्थित भारतीय

उप-उच्चायुक्त को नई दिल्ली से गुप्त निर्देश दिया गया कि वे भारत आने के इच्छुक हिंदुओं को निष्क्रमण-पत्र देने में भारी कमी कर दें। खासतौर से पाकिस्तान को इस्लामी गणराज्य घोषित किये जाने के बाद (हिंदू अल्पसंख्यकों के लिए वहां स्थिति दुश्वार हो जाने के कारण) अपना घर-बार पाकिस्तान में ही छोड़कर भारी संख्या में हिंदू भारत भाग जाना चाहते थे। यह पाबंदी एक प्रकार से रोक लगाने के समान है जो भारत विभाजन की उस बुनियादी शर्त का घोर उल्लंघन करती है, जिसकी व्यवस्था के अनुसार अल्पसंख्यकों को सम्मान के साथ रहने और जान तथा माल की सुरक्षा के साथ-साथ रोजगार के समान अवसर देने का आश्वासन दिया गया था और स्वीकार किया गया था कि यदि ऐसा न हुआ तो अल्पसंख्यकों को निष्क्रमण की छूट होगी। 1950 में नेहरू-लियाकत समझौते से भी इस शर्त और आश्वासन को और पक्का किया गया था।

साम्प्रदायिकता के सामने 'समर्पण'—अब पाकिस्तान के अनुरोध पर पूर्वी बंगाल से हिन्दुओं के भारत आने पर एक प्रकार से पाबंदी लगा देने का अर्थ यह है कि भारत सरकार ने इस्लामी गणराज्य में खुली घूमने वाली सांप्रदायिक शक्तियों के सामने बड़े शर्मनाक ढंग से समर्पण कर दिया है और अनुमान है कि इसके परिणामस्वरूप पूर्वी बंगाल में हिन्दुओं को या तो पूरी तरह खत्म कर दिया जायेगा या फिर उन्हें मुसलमान बना दिया जायेगा। जनसंघ भारत सरकार की इस दुर्बल नीति की निंदा करता है और इसका तत्काल परित्याग कर देने की मांग करता है।

जनसंघ का यद्यपि यह दृढ़ मत है कि जब तक भारत के विभाजन को खत्म नहीं कर दिया जाता और विस्थापितों को वापस उनके घरों में नहीं बसा दिया जाता तब तक विस्थापितों की समस्या को (चाहे वह पश्चिम से आने वालों की हो या पूर्वी बंगाल से) प्रभावशाली ढंग से हल नहीं किया जा सकता, तथापि जनसंघ महसूस करता है कि इस बीच भारत सरकार को पाकिस्तान सरकार पर प्रभावशाली ढंग से दबाव डालना चाहिए, ताकि पाकिस्तान में रहने वाले हिन्दू अल्पसंख्यकों के साथ सभ्य एवं सम्मानप्रद तथा समान नागरिकों जैसा व्यवहार होने लगे। इस उद्देश्य से कई तरीके भी सुझाये गये हैं; जैसे, पाकिस्तान के साथ संबंधों में 'जैसे को तैसा' की नीति अपनायी जाय, आबादी की अदला-बदली की जाय या पूर्वी बंगाल से आने वाले लाखों हिन्दू विस्थापितों को बसाने के लिए भूमि की मांग की जाय। जनसंघ महसूस करता है कि पाकिस्तान का दिमाग दुरुस्त करने के लिए चाहे जो तरीका अपनाना पड़े, किन्तु भारत सरकार इस मामले में अपने दायित्व से इनकार नहीं कर सकती।

जब तक हिन्दुओं का आना जारी रहता है, जनसंघ का मत है कि तब तक इस समस्या पर इसकी गंभीरता और व्यापकता को देखते हुए विचार किया जाना चाहिए। भारत सरकार को इस भ्रम में नहीं रहना चाहिए कि हिन्दुओं का आना रुक जायेगा या यह अस्थायी है अथवा हिन्दू विस्थापित संभवतः फिर पाकिस्तान

लौट जायेंगे। बल्कि उसे इस आधार पर विचार करना चाहिए कि यदि पाकिस्तान में मौजूदा स्थिति बनी रहने दी गई तो पूर्वी बंगाल की समूची हिन्दू आबादी, जो लगभग 1 करोड़ है, भागकर भारत आ जायेगी और भारत सरकार को इन सब लोगों को ठहराने, बसाने आदि की व्यवस्था कर लेनी चाहिए। ऐसी व्यवस्था करते समय इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि जहां तक संभव हो विस्थापितों को पश्चिमी बंगाल या उससे लगे अनुकूल वातावरण वाले प्रांतों में ही बसाया जाय। यदि उन्हें देश के दूरस्थ भागों में ले जाना अनिवार्य ही हो तो उन्हें बड़ी-बड़ी बस्तियों के रूप में बसाया जाय जिससे उन्हें उखड़ापन महसूस न हो और वे एक अनुकूल वातावरण में रहें तथा विकसित हों और भारत के उपयोगी एवं योग्य नागरिक बन सकें।

[21 अप्रैल 1956; जयपुर, चौथा सा०अ०]

56.10. सैनिक सहायता से पाकिस्तानी खतरे में वृद्धि

भारत के प्रति पाकिस्तान अपनी शत्रुता को पिछले 8 वर्षों से विभिन्न रूपों में प्रकट करता आ रहा है, लेकिन जबसे उसे अमरीकी सैनिक मदद मिलना शुरू हुई तब से तो शत्रुता की उसकी अभिव्यक्ति और ज्यादा खतरनाक रंग पकड़ चुकी है। सीमाओं पर हमलों की बढ़ती संख्या, पाकिस्तान के समाचारपत्रों द्वारा भारत के खिलाफ जिहाद शुरू करने का निरंतर आवाहन और उन पाकिस्तानी नेताओं और शासकों द्वारा भारत के खिलाफ किये जा रहे भ्रामक प्रचार से—जो बगदाद सैनिक संधि और सीटों में इस उद्देश्य से शामिल हुए ताकि भारत को घेरा जा सके और शक्ति अर्जित करके उस से निपटा जा सके—स्थिति की गंभीरता का स्पष्ट संकेत मिलता है।

कच्छ से काश्मीर तक घुसपैठ—साथ ही भारत के सीमावर्ती क्षेत्रों जैसे कच्छ, राजस्थान और जम्मू-काश्मीर में बड़ी संख्या में पाकिस्तानी मुसलमानों को नियोजित ढंग से भेजा जा रहा है, ताकि भारत के इन सीमावर्ती क्षेत्रों में मुसलमानों की संख्या बढ़ायी जा सके। पाकिस्तानी जासूस और एजेंट भी विभिन्न तरीकों से सैकड़ों की संख्या में इस उद्देश्य से भारत में आ रहे हैं ताकि देश के भीतर मौजूद समाज विरोधी तत्वों से मिलकर तोड़फोड़ की जा सके। लखनऊ, संभल, सतना और भोपाल की हाल की घटनाओं से, जहां गुप्त ट्रांसमिटर पकड़े गये हैं, इस बात का स्पष्ट संकेत मिलता है कि देश के भीतर से भारत की सुरक्षा के लिए खतरा पैदा करने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। पुर्तगाल को पाकिस्तान का पूरा समर्थन प्राप्त है और वह गोवा, दमन और दीव में सैनिक अड्डे कायम कर रहा है। इससे भी भारत की सुरक्षा के प्रति बढ़ते खतरे का पता चलता है।

भारत की जनता और सरकार इस स्थिति में शांत और निश्चिन्त नहीं रह सकती। देश की सुरक्षा प्रत्येक स्वतंत्र राष्ट्रजन की जिम्मेदारी है और यह प्रत्येक देशभक्त नागरिक के लिए आवश्यक है कि वह इस संबंध में अपने कर्तव्य का पालन करे। भारतीय जनसंघ भारत की जनता और सरकार को आगाह करना चाहता है कि वह इस स्थिति का सामना करने को तैयार हो।

वह मांग करता है कि जनता के दिलों में राष्ट्रवाद की भावना जगायी जाय, हथियारों तथा प्रतिरक्षा के अन्य उपकरणों में देश को स्वावलम्बी बनाया जाय, भारत में पाकिस्तानी जासूसों और पाकिस्तानी नागरिकों की घुसपैठ रोकने के लिए प्रभावशाली कदम उठाये जायें और देश के प्रत्येक नौजवान को अनिवार्य सैनिक प्रशिक्षण देने की योजना तैयार की जाय।

भारतीय जनसंघ अपनी समस्त शाखाओं और कार्यकर्ताओं से आग्रह करता है कि वे स्थिति के प्रति सतर्क हों और देश की सुरक्षा के संबंध में जनता को उसका दायित्व समझायें।

[21 अप्रैल 1956; जयपुर, चौथा सा०अ०]

56.11. श्रीलंका में तमिल भाषा

केन्द्रीय कार्य समिमि इस बात की निंदा करती है कि समय-समय पर किये गये कई भारत-श्रीलंका समझौतों के बावजूद श्रीलंका में रहने वाले भारतवंशियों को वहां के नागरिकों के रूप में दर्ज करने के प्रश्न को कई वर्ष से अधर में छोड़ रखा गया है और वहां रहने वाले 10 लाख भारतवंशियों में से अधिकांश अब भी श्रीलंका की नागरिकता से वंचित हैं। कार्य समिति इस संबंध में भारत सरकार के दब्बू रवैये और साथ ही श्रीलंका की सरकार के असहिष्णु रवैये की निंदा करती है एवं मांग करती है कि भारत सरकार इस बात पर जोर दे कि पंजीकरण का काम फौरन पूरा किया जाय।

कार्य समिति इस बात पर भी खेद प्रकट करती है कि श्रीलंका सरकार ने कानून बनाकर तमिल भाषा को (जो वहां के एक-तिहाई निवासियों की भाषा है) राजभाषा के दर्जे से वंचित कर दिया है। यह कदम निश्चय ही अन्यायपूर्ण और दुर्भाग्यपूर्ण है। इससे श्रीलंका के तमिलभाषी नागरिकों का दर्जा स्वयं उनके देश में ही घटा दिया गया है। कार्य समिति वहां की सरकार से अनुरोध करती है कि वह तमिल को श्रीलंका की एक राजभाषा के रूप में स्वीकार करे। कार्य समिति महसूस करती है कि भारत सरकार को अविलंब इस संबंध में आवश्यक कार्यवाही करनी चाहिए।

[21 जुलाई 1956; दिल्ली, के०का०स०]

56.18. स्वेज संकट

यह संतोष का विषय है कि स्वेज नहर के संबंध में मिस्र ने जो अचानक कदम उठाया और पश्चिम ने उस पर जो हिसात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त की उससे उत्पन्न तनाव कुछ कम हो गया है और दोनों पक्ष संयुक्त राष्ट्रसंघ के माध्यम से समझौते का रास्ता खोज रहे हैं। स्वेज नहर पर, जो मिस्र में होकर गुजरती है

प्रभुसत्ता का मिस्र का दावा उचित है और उसका समर्थन किया जाना चाहिए। लेकिन, साथ ही इसतथ्य की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती कि स्वेज विश्व का एक महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय समुद्री मार्ग है, क्योंकि यह एशिया और यूरोप को मिलाने वाला सबसे सीधा और छोटा मार्ग है और इसीलिए न केवल वाणिज्य एवं व्यापार बल्कि यूरोप, एशिया और आस्ट्रेलिया के बीच सामान्य सांस्कृतिक एवं सामाजिक संबंधों का बने रहना भी बहुत हद तक इस बात पर निर्भर है कि इस नहर के रास्ते से उन्मुक्त और अबाध नौवहन जारी रहे।

स्वेज में नौवहन—अतः यह न केवल वांछनीय है बल्कि सब संबद्ध पक्षों के हित में है कि कोई अंतर्राष्ट्रीय संस्था स्वेज नहर से नौवहन अबाध रूप से जारी रहने की गारंटी दे। अतः कार्य समिति भारत सरकार से अनुरोध करती है कि वह इस तरह की अंतर्राष्ट्रीय गारंटी के लिए अपने प्रभाव का उपयोग करे कि स्वेज नहर से सब देशों के जहाजों को बिना किसी रोक-टोक के आने जाने दिया जायेगा। समिति महसूस करती है कि इस प्रकार की गारंटी स्वेज नहर पर मिस्र की प्रभुसत्ता में किसी प्रकार से बाधक नहीं हैं।

[6 अक्तूबर 1956; पूना, के०का०स०]

56.25. स्वेज व हंगरी के संकट

जनसंघ मिस्र पर आंग्ल-फ्रांसीसी शक्तियों के हमले की निंदा करता है। यह हो सकता है कि अंतर्राष्ट्रीय संधि को राष्ट्रपति नासिर द्वारा एकतरफा तोड़े जाने की कार्यवाही को इन शक्तियों ने भड़काने वाली बड़ी कार्यवाही समझा हो और इसलिए ऐसा किया हो। संयुक्त राष्ट्रसंघ के निर्देश को स्वीकार करके और अपनी सेनाओं को वापस बुलाकर आंग्ल-फ्रांसीसी शक्तियों ने अपने पिछले कृत्य का कुछ सीमा तक प्रायश्चित कर लिया है।

हंगरी में रूसी हमले और अपनी आजादी के लिए संघर्ष करने वाले हंगरी-वासियों पर उनके अत्याचारों की जनसंघ निंदा करता है। रूस ने हंगरी से सेनाएं हटाने के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ के निर्देश को भी मानने से इनकार किया है और यहां तक कि संयुक्त राष्ट्रसंघ के प्रेक्षकों को भी हंगरी जाने की अनुमति नहीं दी। जनसंघ इस कार्यवाही की भी निंदा करता है।

जनसंघ, जो एक देश द्वारा किसी भी बहाने से दूसरे देश पर अधिकार करने के विरुद्ध है, अनुभव करता है कि अधिकार जमाने की ऐसी कोशिश का चाहे वह किसी भी ओर से हो, समान रूप से विरोध किया जाना चाहिए।

स्वेज नहर के संबंध में जनसंघ का मत है कि इस नहर से सब देशों को निरपवाद रूप से स्वतंत्र आवागमन का अधिकार होना चाहिए और इसलिए एक अंतर्राष्ट्रीय समझौते के अधीन स्वेज नहर में होकर यातायात की स्वतंत्रता की व्यवस्था यथाशीघ्र होनी चाहिए।

[30 दिसम्बर 1956; दिल्ली, पांचवा सा०अ०]

56.28. गोवानी स्वतंत्रता सेनानियों की रिहाई

जनसंघ का निश्चित मत है कि भारत सरकार की गोवा संबंधी नीति किंकर्त्तव्यमूढ़ता, ढुलमुलपन और निष्क्रियता की रही है। फलतः वह प्रभावी सिद्ध नहीं हुई। 16 मास से अधिक बीतने को आये जबसे कि पुर्तगाली साम्राज्यवाद और उसे भारत से समाप्त करने के लिए भारतीय जनता के शांतिमय एवं दृढ़तापूर्ण अभियान के बीच भारत सरकार आकर खड़ी हुई है। उस समय शासन ने गोवा की विमुक्ति का दायित्व अपने ऊपर लिया था। जनसंघ अत्यंत खेद के साथ यह अनुभव करता है कि भारत सरकार ने अपने इस कर्तव्य का निर्वाह करने के लिए कोई पग नहीं उठाया। आर्थिक नाकेबंदी, केवल जनता की पुलिस कार्यवाही करने की मांग को टालने का ही साधन सिद्ध हुई है। उससे गोवा के अपने ही बंधुओं के कष्टों में वृद्धि हुई है और पुर्तगाल शासन पर कोई दबाव नहीं पड़ा है। इस प्रश्न पर भारत सरकार ने विश्व जनमत को भी जागृत नहीं किया।

गोवा की मुक्ति तो दूर, गोवा मुक्ति आंदोलन के नेताओं को जो पुर्तगाली कारावास में कठोर यातनाएं भुगत रहे हैं, मुक्ति के लिए भी भारत सरकार ने कोई कदम नहीं उठाया। भारतीय जनसंघ यह मांग करता है कि भारत सरकार अपने इन बंदियों को मुक्त कराने और भारत तुरन्त वापिस भेजने की मांग पुर्तगाल से करे और इसकी पूर्ति के लिए सभी संभव उपायों को काम में लाये।

चुनाव में भाग लेने के लिए गोवा के राजनीतिक बंदियों को जो सुविधाएं देने की व्यवस्था की गई है उसका जनसंघ स्वागत करता है और उनके प्रति सम्मान के रूप में निश्चय करता है कि यदि वे चुनाव में खड़े होंगे तो फिर वे किसी भी दल के प्रत्याशी हों, जनसंघ उनका विरोध नहीं करेगा। जनसंघ अन्य दलों से भी अपेक्षा करता है कि वे उन वीरपुत्रों के निर्विरोध निर्वाचन में सहायक होकर गोवा के प्रश्न पर राष्ट्रीय एकता का परिचय दें और उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करें।

[30 दिसम्बर 1956; दिल्ली, पांचवा सा०अ०]

57.03. काश्मीर का एकीकरण

केन्द्रीय कार्य समिति ने काश्मीर के प्रश्न को लेकर सुरक्षा परिषद में हुई ताजा घटनाओं और उसके प्रति भारत सरकार द्वारा अपनाये गये रवैये पर विचार किया। यह प्रसन्नता की बात है कि भारत सरकार ने आखिर जनसंघ के इस मत को स्वीकार कर लिया कि काश्मीर भारत का अविभाज्य अंग है, काश्मीर के शासक ने जिस विलय-समझौते पर हस्ताक्षर किये थे और जिसके अनुसार काश्मीर भारत में शामिल हुआ वह अंतिम और अकाट्य है तथा जो समस्या हल हो चुकी है उसको फिर से हल करने के लिए जनमत संग्रह का कोई प्रश्न नहीं उठता। बुनियादी सवाल यह है कि काश्मीर के एक-तिहाई भाग पर जबर्दस्ती कब्जा करके पाकिस्तान ने भारत पर हमला किया है। काश्मीर की असली समस्या यह है कि

इस हमले को कैसे खत्म किया जाय और जिस भाग पर पाकिस्तान ने जबरन कब्जा जमा रखा है, उसे कैसे मुक्त कराया जाय। कार्य समिति भारत सरकार से अनुरोध करती है कि पाकिस्तान द्वारा हथियाये गये इस इस इलाके को मुक्त कराने के लिए वह सभी आवश्यक कदम उठाये, क्योंकि उसने अब जो रुख अपनाया है यह उसकी स्वाभाविक परिणति है।

अनुच्छेद 370 की समाप्ति—काश्मीर में भारत की स्थिति को स्थायी बनाने और पृथकतावादी खतरे को टालने के लिए यह आवश्यक है कि काश्मीर को शेष भारत के साथ एक करने के लिए पूर्ण भावात्मक, सांस्कृतिक एवं प्रशासनिक एकता के लिए कदम उठाये जायें। जब तक अलगाव के वर्तमान चिन्ह, जो पृथक संविधान, पृथक झंडा, पृथक सदरे-रियासत और पृथक नागरिकता के कानून से झलकते हैं, बने रहते हैं तब तक यह एकता संभव नहीं। अतः कार्य समिति अपनी इस मांग को फिर दोहराती है कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 370 को समाप्त करके तथा इस संविधान को पूरी तरह काश्मीर पर लागू करके जम्मू-काश्मीर राज्य को शेष भारत के समान स्तर पर लाने के लिए अविलम्ब कदम उठाये जायें। कार्य समिति महसूस करती है कि इस संकल्प और घोषणा को कि काश्मीर भारत का अविभाज्य अंग है, साकार करने के उद्देश्य से ऐसा करना जरूरी है।

[20 अप्रैल 1957; जौनपुर, के०का०स०]

57.12. पूर्वी बंगाल के विस्थापितों की समस्या

विभाजन का आधार—10 वर्ष पूर्व बिना देश से पूछे हुए, और निस्संदेह देश की अधिकांश जनता की इच्छाओं के विरुद्ध कांग्रेस के नेताओं ने मुस्लिम लीग और ब्रिटिश शासकों के साथ, सांप्रदायिक आधार पर भारत विभाजन के पापपूर्ण षड्यंत्र में शामिल होकर भारत की भूमि पर पूर्व और पश्चिम में दो बड़े क्षेत्रों को मिलाकर पाकिस्तान के स्वतंत्र राज्य की स्थापना की। सांप्रदायिकता और विघटन की शक्तियों के सम्मुख यह अत्यन्त ही लज्जाजनक समर्पण का कृत्य था।

इस अपमानजनक सौदे में यह गुंजाइश अवश्य थी कि दोनों ओर के अधिकारियों ने इस बात का आश्वासन दिया था कि दोनों राज्यों में अल्पसंख्यकों को पूर्ण नागरिक अधिकार मिलेंगे, जीवन और धन, मान और सम्मान की पूर्ण सुरक्षा होगी, और यदि ये आश्वासन पूरे न हुए तो बिना किसी प्रतिबंध के अल्पसंख्यक जब चाहें दूसरे राज्य में जाने को स्वतंत्र रहेंगे और उनके पुनर्वास का पूर्ण दायित्व उस राज्य पर होगा जिसमें वे चले जायेंगे। विभाजन का यह मूल आधार था।

इन 10 वर्षों में पाकिस्तान ने इन आश्वासनों और इस आधारभूत शर्त की कोई चिंता नहीं की। पाकिस्तान इस्लामी राज्य घोषित हो चुका है जिसमें

गैर-मुस्लिम अल्पसंख्यक, घटिया दर्जे के नागरिक कर दिये गये हैं। जहां तक पश्चिमी पाकिस्तान का प्रश्न है वहां से सभी हिन्दू निकाल दिये गये हैं। यह निष्कासन विभाजन के तुरन्त बाद हुआ किंतु पूर्वी बंगाल से हिन्दुओं का निष्कासन अभी तक निरंतर चलता आ रहा है। वहां के 1.5 करोड़ हिन्दुओं में से लगभग 50 लाख 1950 के हत्याकांड के परिणामस्वरूप चले आये और उसके उपरांत भी वहां की असहनीय अत्याचारी और अपमानजनक स्थिति के कारण बराबर आना जारी है।

निष्क्रमण-पत्रों पर पाबंदी—2 वर्ष पूर्व पाकिस्तान की मांग पर भारत ने पूर्वी बंगाल से निष्क्रमण की बाढ़ को रोकने के लिए यह चाल चली कि निष्क्रमणार्थियों को निष्क्रमण-पत्र देना लगभग रोक दिया। लाखों हिंदू जिन्होंने भारत आने का निश्चय करके अपनी सब संपत्ति बेच दी थी आज भी वहां भटक रहे हैं। विभाजन के समय अल्पसंख्यकों को दिये गये वचन के विरुद्ध भारत सरकार इस कठोर, हृदयहीन और लज्जाजनक नीति का पालन कर रही है।

निष्क्रमणार्थियों पर प्रतिबंध की सरकारी नीति की जनसंघ घोर निंदा करता है और मांग करता है कि भारत सरकार पाकिस्तान स्थित अल्पसंख्यकों को दिये गये अपने वचनों को पूरा करे और उनके इच्छानुसार निष्क्रमण पर, जिसके लिए कि विभाजन से उत्पन्न परिस्थितियों के कारण वे विवश हो गये हैं और जिसका कि दायित्व उन पर नहीं बल्कि भारत सरकार पर ही है, सभी प्रकार के प्रतिबंध हटा लें।

पुनर्वास के विकल्प—दूसरा प्रश्न निष्क्रमणार्थियों के समुचित पुनर्वास की व्यवस्था करना है। पश्चिमी पाकिस्तान से आये हुए निष्क्रमणार्थियों की पुनर्वास समस्या कुछ सीमा तक हल हो चुकी है, यद्यपि उसे संतोषजनक नहीं कहा जा सकता। किन्तु जहां तक पूर्वी बंगाल के निष्क्रमणार्थियों का प्रश्न है, उनकी समस्या को मुश्किल से स्पर्श मात्र ही किया गया है। इस समय सरकार एक अव्यवस्थित-सी नीति अपना रही है जिसके अनुसार इन अभागों को बंगाल से लगे हुए क्षेत्रों में जहां कि वे अपने लिए अनुकुल वातावरण पा सकें, न बसाकर, बंगाल से बाहर दूरवर्ती क्षेत्रों में भेजा जा रहा है। इस ढंग के अधिकांश प्रयोग अब तक विफल सिद्ध हुए हैं जिसके फलस्वरूप विस्थापितों को काफी कष्ट उठाना पड़ा है। सरकार का तर्क यह है कि पश्चिमी बंगाल में अब अधिक स्थान नहीं है अतः अब वहां अधिक निष्क्रमणार्थियों को बसने की अनुमति नहीं दी जा सकती। इस संबंध में सरकार का सबसे नया प्रयोग 'दण्डकारण्य योजना' है जिसके अनुसार पूर्वी बंगाल के निष्क्रमणार्थियों को एक विशाल वन्य क्षेत्र में बसाया जायेगा जो आवगमन के साधनों से हीन व अविकसित है तथा जिसमें यत्र-तत्र वनवासियों की छोटी आबादियां मात्र हैं। इस योजना पर 100 करोड़ रु० व्यय का अनुमान है।

भारतीय जनसंघ इस प्रकार की योजनाओं से सहमत नहीं है। उसकी मांग है कि सरकार अविलम्ब एक जांच आयोग नियुक्त करे जो इस बात का पता

लगाये कि क्या निष्क्रमणार्थियों को पुनः बसाने तथा कृषि और औद्योगिक दोनों क्षेत्रों में उन्हें काम देने की पश्चिमी बंगाल की क्षमता सचमुच समाप्त हो गई है। इस आयोग की जांच का परिणाम सामने आने तक किसी भी निष्क्रमणार्थी को उसकी इच्छा के विरुद्ध पश्चिमी बंगाल से बाहर जाने के लिए विवश नहीं किया जाना चाहिए। साथ ही जनसंघ मांग करता है कि दण्डकारण्य की खर्चीली योजना के संबंध में आगे कार्यवाही करने से पूर्व निष्क्रमणार्थियों के प्रतिनिधियों तथा प्रमुख गैरशासकीय शक्तियों को स्थल का निरीक्षण करने तथा योजना का परीक्षण करने की अनुमति दी जाय।

[16 अगस्त 1957; बिलासपुर, भा०प्र०स०]

57.18. संयुक्त राष्ट्रसंघ में काश्मीर

जम्मू-काश्मीर के संबंध में संयुक्त राष्ट्रसंघ की सुरक्षा परिषद में हाल में ही जो घटनाएं हुई उनसे एक बार फिर यह प्रमाणित हो गया है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ बड़ी शक्तियों की राजनीति में इस हद तक उलझ गया है कि अब उससे किसी न्याय की आशा नहीं की जा सकती।

अतः केन्द्रीय कार्य समिति महसूस करती है कि इस सवाल को संयुक्त राष्ट्र संघ में बहस के लिए खुला रखने से कोई लाभ न होगा। समिति भारत सरकार से अनुरोध करती है कि वह इस मामले को वहां से उठा ले और पाकिस्तान द्वारा जबरन हथियाये गये क्षेत्र खाली कराने की आवश्यकता को उन देशों को समझाने में अपनी शक्ति, समय और धन बर्बाद न करे जो इस बात का पूर्ण संकल्प करके बैठे हैं कि वे भारत के किसी तर्क से प्रभावित नहीं होंगे। वह सरकार से यह अनुरोध भी करती है कि पाकिस्तान ने काश्मीर के जिस क्षेत्र पर जबर्दस्ती कब्जा कर लिया है उसे वापस लेने के लिए तत्काल और प्रभावशाली कदम उठाए जायें।

काश्मीर मूलतः भारत का घरेलू मामला है और इसे भारतीय जनमत के उन सभी पक्षों के सहयोग से हल किया जाना चाहिए जो इस महत्वपूर्ण राष्ट्रीय प्रश्न पर एक हैं।

अनुच्छेद 370 की समाप्ति—समिति यह भी महसूस करती है कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 370 के आधीन जम्मू-काश्मीर राज्य को शेष भारत से कुछ भिन्न रखने की जो अस्थायी व्यवस्था की गई थी, अब समय आ गया है कि इसे हमेशा के लिए समाप्त कर दिया जाय और जम्मू-काश्मीर राज्य को सब दृष्टियों से शेष भारत के समान स्तर पर लाया जाय। समिति का इस बारे में यह निश्चित मत है कि उस राज्य की जनता को शेष भारत के अपने सहनागरिकों के साथ भावात्मक दृष्टि से एक करने के लिए ऐसा करना आवश्यक है। काश्मीर के भीतर और बाहर के उन राष्ट्रविरोधी और पृथकतावादी तत्त्वों को समाप्त करने के लिए भी ऐसा करना जरूरी है, जो इस अंतर से लाभ उठाकर काश्मीर समेत भारत के व्यापक हितों को हानि पहुंचा रहे हैं।

[24 नवम्बर 1957; हैदराबाद, के०का०स०]

57.19. श्रीलंका व बर्मा में भारतवंशी

'राज्यविहीन' भारतवंशी—श्रीलंका में बसे भारतीयों की समस्या एक अर्से से अधर में लटकी है। इस समस्या के बारे में भारत सरकार और श्रीलंका सरकार के बीच हुई लम्बी बातचीतों के बावजूद व्यावहारिक रूप से कोई बात नहीं बन सकी, और वहां बसे भारतीयों को 'श्रीलंका के नागरिकों' के रूप में दर्ज करने की तथाकथित व्यवस्था कोरी कागजी व्यवस्था बनकर रह गई है। ताजा स्थिति यह है कि श्रीलंका में बसे भारतीयों ने अपना नाम दर्ज कराने के लिए लगभग 2 लाख अर्जियां दीं। इनमें से लगभग 22 हजार (करीब 10 प्रतिशत) अर्जियों को स्वीकार किया गया और शेष 90 प्रतिशत अर्जियों को रद्द कर दिया गया जो कि इस प्रकार वहां 'राज्यविहीन' भारतीय हो गये। लगभग 8 लाख भारतवंशी इस स्थिति में पड़े हैं। इस समस्या का यदि कोई संतोषप्रद हल नहीं निकाला गया तो भारत सरकार को इस बार दक्षिण भारत में एक विशाल विस्थापित समस्या का सामना करना होगा।

बर्मा में रहने वाले भारतीयों की स्थिति भी कुछ अच्छी नहीं। भारतीयों के बर्मा में जाकर बसने की स्थिति कुछ भिन्न रही, क्योंकि 1937 तक (केवल 20 वर्ष पहले तक) बर्मा भारत का एक प्रांत था और स्वभावतः बहुत से भारतीय जीविका की खोज में बर्मा पहुंचे और सेवाओं, व्यापार एवं व्यवसाय में लगकर वहीं बस गये और अब, अचानक ही भारतीय रातों-रात 'अजनबी व विदेशी' बन गये, यद्यपि इसमें उनका अपना कोई दोष नहीं। बर्मा सरकार उनके साथ अत्यंत सख्ती बरत रही है। राष्ट्रीयकरण के नाम पर भारतीय दुकानदारों और व्यापारियों (जिनमें अधिकांश दक्षिण भारत के हैं) की संपत्ति प्रायः छीन ली गई, और नाम मात्र को मुआवजा देकर उन्हें निराश्रित बना दिया गया है। इसके अलावा अपनी आय भारत भेजने पर इतनी सख्त पाबंदी लगा दी गई है कि कोई व्यक्ति भारत में रहने वाले अपने परिवार को प्रति मास 30 रु० से अधिक नहीं भेज सकता। विनिमय संबंधी नियम भी बेहद कष्टप्रद हैं। भारत के प्रधानमंत्री हाल में ही जब बर्मा गये थे तब वहां एक ज्ञापन देकर उन्हें इन सब कठिनाइयों से परिचित करा दिया गया था।

जनसंघ अनुभव करता है कि इन दोनों प्रश्नों पर — श्रीलंका और बर्मा में भारतवंशियों की समस्याओं पर—भारत सरकार अपने नपुंसक और उपेक्षापूर्ण रवैये को अब त्याग दे और जल्दी ही ऐसे प्रभावशाली कदम उठाये जिससे वहां रहने वाले भारतीयों के साथ न्यायपूर्ण एवं सम्मानप्रद व्यवहार हो, क्योंकि यह ऐसा प्रश्न है जिससे भारत के सम्मान और प्रतिष्ठा को ठेस पहुंचती है।

[24 नवम्बर 1957; हैदराबाद, के०क०स०]

57.20. विस्थापित व पुनर्वास कार्य

पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं के प्रति भारत का दायित्व—जनसंघ की केन्द्रीय कार्य समिति महसूस करती है कि पूर्वी बंगाल से आने वाले विस्थापितों की समस्या काफी गंभीर रूप धारण कर गई है। अब तक पूर्वी बंगाल से लगभग 50 लाख हिन्दू (वहां हिन्दुओं की कुल संख्या लगभग डेढ़ करोड़ थी) भारत आ चुके हैं। हिन्दुओं का आना जारी है, क्योंकि वहां उनके साथ जबर्दस्त आर्थिक भेदभाव बरता जाता है—सेवा, व्यापार, वाणिज्य आदि में उनका प्रवेश प्रायः निषिद्ध करके उन्हें जीविका के साधनों से प्रायः वंचित कर दिया गया है—पड़ौसी मुसलमान उनके साथ दुर्व्यवहार करते हैं और पाकिस्तान सरकार उनकी ओर से पूरी तरह उदासीन है। सच तो यह है कि लगभग 3 लाख बेसहारा लोगों ने भारत आने की इच्छा से निष्क्रमण-पत्र पाने के लिए करीब 60 हजार अर्जियां दे रखी हैं, जिनके बारे में ढाका स्थित मुख्य निष्क्रमण अधिकारी को अभी निर्णय करना शेष है।

पाकिस्तानी क्षेत्रों में इस तरह का हो-हल्ला मचने के बाद कि सीमाओं को बंद किया जाय, लगभग 2 साल पूर्व भारत सरकार ने ढाका स्थित अपने उप-उच्चायुक्त को गुप्त निर्देश भेजे थे कि निष्क्रमण-पत्र जारी करने में सख्ती बरती जाय, हालांकि सार्वजनिक रूप से सरकार ने इस बात से इनकार किया था। लेकिन, हाल में ही भारत सरकार ने खुले आम अब इस विचार का समर्थन कर दिया है कि एक निश्चित समय-सीमा के बाद पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं का विस्थापितों के रूप में भारत आना रोक दिया जाय। सार्वजनिक रूप से यह घोषणा भी की गई है कि पाकिस्तान के हिन्दुओं की सुरक्षा और उनके कल्याण के लिए भारत सरकार जिम्मेदार नहीं और न वह इस दायित्व को अनिश्चित काल तक उठा सकती है।

अपने पवित्र दायित्व को उठाने से इस प्रकार इनकार करने और भारत विभाजन (1947) के समय पाकिस्तान के अल्पसंख्यकों को जो यह वचन दिया गया था कि भारत सरकार इस बात का पूरा ध्यान रखेगी कि पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों के साथ न्यायोचित एवं सम्मानप्रद व्यवहार हो, अब भारत सरकार द्वारा उससे मुकरने की बात की जनसंघ जोरदार शब्दों में निन्दा करता है। जनसंघ मांग करता है कि भारत सरकार अपने स्तर पर ऐसे प्रभावशाली कदम उठाये जिससे पाकिस्तान को बाध्य किया जा सके कि वह अल्पसंख्यकों के प्रति अपने दायित्व को निभाये।

जनसंघ इस संबंध में कुछ ऐसे उपायों का भी सुझाव देता है, जिन्हें अपनाया जाना चाहिए।

(क) पूर्वी बंगाल से इतने क्षेत्र की मांग की जाय जिससे हिन्दू विस्थापितों को वहां बसाया जा सके।

(ख) निष्क्रमण-पत्र प्रणाली को खत्म करके—क्योंकि यह 1950 के नेहरू-लियाकत समझौते के भी खिलाफ है—बंगाल के दोनों भागों के बीच आवागमन की छूट दी जाय।

यदि भारत सरकार ऐसा कोई कदम उठाने में असफल है तो, पूर्वी बंगाल से आने वाले सभी हिन्दुओं को, चाहे वहां से बच्चा-बच्चा भागकर इधर क्यों न आ जाय, बसाने का दायित्व उसे स्वयं अपने ऊपर उठाना चाहिए।

अधूरा पुनर्वास—जहां तक पश्चिमी पाकिस्तान से आये विस्थापितों को बसाने का सवाल है, समिति महसूस करती है कि पुनर्वास कार्य इतना संतोषजनक नहीं कि 1960 के बाद उसे खत्म कर दिया जाय। पश्चिमी पाकिस्तान से आये लाखों विस्थापितों को बसाया जाना अब भी शेष है। सच तो यह है कि गैर-दावेदारों को जो मकान दिये गये थे, अब उनमें से बहुतों को दूसरे खरीददारों को बेचकर, बसे बसाये लोगों को फिर से उजाड़ा जा रहा है। विस्थापितों को दिये जाने वाले नकद मुआवजे की राशि को 8 हजार रु० से घटाकर 1 हजार रु० कर देने का फैसला सरकार ने किया है जबकि अब तक 20 प्रतिशत दावेदारों को भी मुआवजा नहीं मिला है। समिति महसूस करती है कि सरकार के इस फैसले का दुष्प्रभाव उन बहुत से विस्थापितों पर पड़ेगा जो अब तक इस आशा को लिए बैठे थे कि उन्हें नकद मुआवजा मिलेगा और वे अपनी अनेक अनिवार्य आवश्यकताएं उससे पूरी करेंगे। समिति मांग करती है कि सरकार अपना आत्मसंतोषी रवैया त्याग दे और पश्चिमी पाकिस्तान से आये विस्थापितों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण एवं मानवीय रवैया अपनाये।

जो लोग पाकिस्तान चले गये थे और अब वहां से लौटकर आ रहे हैं उनको अब निष्क्रांत संपत्ति लौटाकर सरकार संपत्ति कोष को खुर्द-बुर्द न करें।

[24 नवम्बर 1957; हैदराबाद, कें०का०स०]

57.23. अयथार्थवादी विदेश नीति

अपने स्थापना काल से ही भारतीय जनसंघ का यह मत रहा है कि भारत की विदेश नीति विश्वशांति और विवेकपूर्ण राष्ट्रहित के विचार से परिचालित एवं निर्देशित होनी चाहिए। इस नीति को अपनाने का व्यावहारिक रूप यही होना चाहिए कि भारत दोनों शक्तिगुटों से दूर रहे और जिन अंतर्राष्ट्रीय झगड़ों से सीधा भारत का कोई सरोकार नहीं उनमें उलझने से बचते हुए, सब देशों का सहयोग और मित्रता पाने का प्रयत्न करें। लेकिन, जनसंघ को बारबार ऐसा महसूस हुआ है कि भारत सरकार पूर्ण तटस्थता तथा उलझाव से बचने की इस नीति का पालन करने में असफल रही है, जिसके परिणामस्वरूप हम ऐसे कई देशों की मित्रता धीरे-धीरे खोते जा रहे हैं जो कल तक हमारे मित्र थे।

आंग्ल-अमरीकी रवैया—आंग्ल-अमरीकी गुट के देशों ने गोवा और काश्मीर के संबंध में, जिनका सीधा संबंध हमारे राष्ट्रीय हितों से है, जो नीति अपनायी उससे यह स्थिति और बिगड़ती जा रही है। ऐसा जान पड़ता है कि या तो वे भारत की

तटस्थ नीति को सही ढंग से समझ नहीं सके या फिर वे अपने रवैये के खतरनाक परिणामों को नहीं समझ पा रहे हैं। जो भी हो, वे प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से भारत सरकार में एक ऐसा वातावरण बनाने में सहायक हो रहे हैं जिसका दुरुपयोग करते हुए रूस समर्थक तत्व भारत की तटस्थ नीति को दुर्बल बनाते हुए उसे रूसी खेमे में ठेलते जा रहे हैं। इस प्रकार वे देश शायद अनजाने ही, भारत में लोकतंत्रीय शक्तियों को कमजोर कर रहे हैं और कम्युनिज्म के फैलाव को रोकने के उद्देश्य को भी विफल बना रहे हैं, हालांकि उनका दावा है कि वे इसी उद्देश्य के लिए काम कर रहे हैं।

ऐसी स्थिति को देखते हुए कार्य समिति इसे अपना राष्ट्रीय कर्तव्य समझती है कि सरकार से अनुरोध करे कि वह अपनी विदेश नीति के परिचालन में अधिक सतर्कता बरते और वस्तुवादी दृष्टिकोण अपनाये। तटस्थता और गुटनिरपेक्षता का तकाजा है कि आत्मसंयम बरता जाय और राष्ट्रहितों के प्रति एकनिष्ठ भाव से काम किया जाय।

[24 नवम्बर 1957; हैदराबाद, के०का०स०]

58.07. विदेश नीति

निशस्त्रीकरण—विश्व के दोनों शक्तिगुटों में शस्त्रीकरण की होड़ तथा जनसाधारण की विश्वशांति के लिए प्रबल इच्छा – आज की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के यह दो परस्पर विरोधी पहलू हैं। दोनों शक्तिगुटों के नेता यह देखकर कि विश्वशान्ति की जनसाधारण की इच्छा को अब टाला नहीं जा सकता, शांति की घोषणाएं करने में एक दूसरे से बाजी लगा रहे हैं। किन्तु उनकी करनी तथा कथनी में मेल नहीं है। जब तक अणु-आयुधों के निर्णय तथा प्रयोग पर पूर्ण प्रतिबन्ध नहीं लगाया जाता, अणु-बमों के परीक्षणों पर रोक लगाने के संबंध में चल रहे वर्तमान विवाद कोई विशेष अर्थ नहीं रखते।

शक्तिगुट—एक ओर रूसी अधिनायकवादी प्रवृत्तियों का पुनः दृढ़ीकरण, पूर्वी यूरोप के पिछलग्गू देशों पर उसका बढ़ता हुआ शिकंजा जिसका अत्यन्त खेदजनक उदाहरण हंगरी है और विश्व में कम्युनिस्ट अधिराज्य स्थापित करने का उसका दांव व दूसरी ओर जनतन्त्रवादी देशों द्वारा गोवा में पुर्तगाली उपनिवेशवाद का, अल्जीरिया में फ्रान्सीसी सरकार के दमन का तथा अफ्रीका में चल रहे रंगभेद का समर्थन – इन तथ्यों ने दोनों शक्तिगुटों को, विश्व के शांतिप्रिय नागरिकों तथा दोनों गुटों से अलग रहने वाले राष्ट्रों की दृष्टि में संदेहास्पद बना दिया है।

स्थायी व न्यायपूर्ण शांति—विश्व में स्थायी तथा न्यायपूर्ण शांति का आधार जाति, मजहब, देश तथा वर्ण के भेदभाव के बिना, सबको समान अवसर प्रदान करना तथा व्यक्ति की स्वतंत्रता का समादर करना, जिसमें सब देशों के वासियों को उनकी अपनी इच्छानुसार सरकार चुनने का मूलभूत अधिकार निहित है, ही हो सकता है। अन्याय तथा शांति साथ-साथ नहीं चल सकते।

इस संबंध में विश्व के लोकतंत्रवादी देशों का एक विशेष दायित्व है। लोकतंत्र शांति की स्थापना में सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व हो सकता है, बशर्ते कि उस पर सच्चाई से आचरण किया जाय। किन्तु विश्व के विभिन्न भागों में लड़खड़ाती हुई तथा पूर्णतया भ्रष्ट एवं प्रतिक्रियावादी सरकारों – जैसे पाकिस्तान को अपना समर्थन प्रदान करके, लोकतंत्रवादी देश अपनी लोकतंत्र की घोषणाओं के विषय में एशियाई तथा अफ्रीकी राष्ट्रों के विश्वास को गहरा धक्का पहुँचा रहे हैं। भारतीय जनसंघ का यह निश्चित मत है कि दोनों शक्तिगुटों से अलग रहने वाले राष्ट्र इस विषम परिस्थिति में विश्वशांति की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इन देशों की जनता का यह कर्तव्य है कि सैनिक तथा आर्थिक दबावों द्वारा उन्हें किसी न किसी गुट में शामिल करने के सभी प्रयत्नों का वे दृढ़ता से मुकाबला करें।

निर्गुटीय व स्वतंत्र नीति—भारतीय जनसंघ लोकतंत्र में पूर्ण निष्ठा रखता है और उसे सम्पूर्ण विश्व में सफल देखना चाहता है, जिससे अधिनायकवाद की बढ़ती हुई लहर को रोका जा सके। इसके लिए यह आवश्यक है कि भारत सरकार एक स्वतंत्र तथा दोनों गुटों से अलग रहने की नीति का उद्घोष करती हुई कोई ऐसा कार्य न करे जिससे यह धारणा उत्पन्न हो कि हम एक गुट की ओर झुके हुए हैं। इस प्रकार की धारणा का पैदा होने देना न तो राष्ट्र के उदात्त हितों के अनुकुल है और न विश्व में लोकतंत्र तथा शांति की रक्षा में ही सहायक हो सकता है।

[5 अप्रैल 1958; अम्बाला, छठा सा०अ०]

58.09. शक्तिगुटों के कूटचक्र

पश्चिमी एशिया में हिंसा और सैनिक विद्रोह की ताजा घटनाएं और इनमें बाहरी शक्तियों की दिलचस्पी तथा हस्तक्षेप से विश्वशांति के लिए गंभीर खतरा पैदा हो गया है। ये घटनाएं वस्तुतः दो शक्तिगुटों के बीच चल रहे शीतयुद्ध का प्रत्यक्ष परिणाम हैं जो अपना-अपना प्रभाव क्षेत्र बढ़ाने की दृष्टि से चल रहा है। यह खेद का विषय है कि यद्यपि दोनों शक्तिगुट पंचशील और संयुक्त राष्ट्रसंघ घोषणा-पत्र की दुहाई देते हैं तथापि जब भी इन संकल्पों को क्रियान्वित करने का मौका आता है तब ये सब संकल्प, शक्तिगुटों की विस्तारवादी इच्छाओं एवं निहित स्वार्थों के समक्ष हतप्रभ हो जाते हैं।

स्वायत्त-निर्णय अधिकार—भारतीय जनसंघ का निश्चित मत है कि राष्ट्रवादी और लोकतंत्रीय शक्तियों का सर्वत्र सम्मान किया जाना चाहिए और प्रत्येक देश को अपनी इच्छा के अनुरूप अपने जीवन को ढालने की आजादी अर्थात् 'स्वायत्त-निर्णय अधिकार' होना चाहिए। लेकिन, दोनों शक्तिगुट जिस नीति पर चल रहे हैं वह इन नैसर्गिक भावनाओं के विरुद्ध है। विभिन्न देशों में वहां की जनता की लोकतांत्रिक आकांक्षाओं और इच्छाओं के विरुद्ध, वे कठपुतली सरकारें थोपने की कोशिश कर रहे हैं। एक ओर रूसियों द्वारा पोलैंड, हंगरी तथा अन्य

पूर्वी यूरोपीय देशों में जनक्रांति का दमन तथा हंगरी के इमरेनज व अन्य देशभक्त नेताओं की निर्मम हत्याएं और दूसरी ओर अमरीका तथा ब्रिटेन द्वारा लेबनॉन और यर्दन के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप, दोनों शक्तिगुटों की इस नीति के शर्मनाक उदाहरण हैं।

भारतीय जनसंघ इन कूटचक्रों की घोर निंदा करता है और मांग करता है कि :

(1) दूसरे देशों में रखी गई सब विदेशी सेनाएं फौरन हटाई जायें। किसी भी देश में विदेशी सेनाओं का होना उसकी राष्ट्रीय स्वतंत्रता एवं प्रभुसत्ता के विरुद्ध है।

(2) सब सैनिक गठबंधन, चाहे वे किसी गुट के साथ भी क्यों न हों, खत्म किये जायें क्योंकि विश्वशांति बनाये रखने में सहायक होने के बजाय ऐसे गठबंधनों से विभिन्न देशों में भय एवं संदेह का वातावरण उत्पन्न हुआ है और विश्व में तनातनी बढ़ी है।

जनसंघ का विश्वास है कि विश्व को विनाश की ओर घसीट ले जाने वाली शक्तियों को वे लोग ही रोक सकते हैं जिनकी राष्ट्रवाद, लोकतंत्रीय जीवन-पद्धति और विश्वशांति में दृढ़ आस्था है।

[19 जुलाई 1958; बम्बई, के०का०स०]

58.10. भारत-पाक संबंध

भारत के राष्ट्रीय हितों की बलि चढ़ाकर भी पाकिस्तान के कृपापात्र बनने की नेहरू सरकार की लाख कोशिशों के बावजूद या फिर इस 'तुष्टीकरण' की मनोवृत्ति के कारण पाकिस्तान की दुराग्रही प्रवृत्ति बढ़ी है और भारत एवं पाकिस्तान के संबंधों में निरंतर बिगाड़ आ रहा है।

भारत विरोधी अभियान—पाकिस्तान में, सभी संभावित मसलों को लेकर, सरकारी और गैर-सरकारी सभी स्तरों पर जानबूझकर भारत के प्रति घृणा और शत्रुता भड़कायी जा रही है। काश्मीर के 10 वर्ष पुराने विवाद को लेकर बाह्य विश्व एवं संयुक्त राष्ट्रसंघ में भारत विरोधी प्रचार से ही संतुष्ट न होकर—पिछले कुछ समय से काश्मीर के भीतर तोड़फोड़ और हिंसा का आंदोलन पाकिस्तान स्वयं सक्रिय रूप से चला रहा है। इन पापाचारपूर्ण गतिविधियों में, भारत में दिल्ली तथा अन्य स्थानों पर विद्यमान पाकिस्तानी एजेंट और गुर्गे पाकिस्तान की मदद कर रहे हैं; वे भारत के साथ विश्वासघात करने के लिए पाकिस्तान के पंचमांगियों के रूप में काम कर रहे हैं। सबसे अधिक आश्चर्य का विषय तो यह है कि नेहरू सरकार इन गतिविधियों के बारे में मौन है, सोई पड़ी है और इनको रोकने के लिए उसने शायद ही कोई कदम उठाया हो। जहां तक पंजाब नहरी पानी विवाद का संबंध है—यह भी एक पुराना विवाद है। जहां तक संभव हो, पाकिस्तान समझौते को टालने, वास्तविक विवाद को ओझल करने और वातावरण

को दूषित करने का प्रयत्न कर रहा है।

सीमा पर उत्तेजनात्मक कार्यवाहियां—इसके अतिरिक्त, इधर कुछ समय से पाकिस्तान आक्रमण के अन्य मोर्चे खोल रहा है। वस्तुतः वह पूर्वी भारत में (असम और बंगाल की सीमा पर) नियमित 'दूसरा मोर्चा' कायम करने का प्रयत्न कर रहा है। यह काश्मीर मोर्चे के अलावा है, जिसे उसने नेहरू सरकार की अक्षमता और उसकी घोर निष्क्रियता के कारण स्थायी बना लिया है। असम-बंगाल सीमा पर, एक ओर तो पाकिस्तान अपने सैनिक दस्तों को आगे ला रहा है, सीमाओं पर किलेबंदी कर रहा है, भारतीय क्षेत्र में घुसपैठ कर रहा है, नागा विद्रोहियों से संपर्क कर रहा है, यदाकदा गोलीबारी करता है तथा सीमाओं पर एक प्रकार से 'स्वामित्वहीन क्षेत्र' कायम करने की कोशिश कर रहा है; और नेहरू सरकार है कि जबानी विरोध प्रकट करके, जिनकी पाकिस्तान लगातार उपेक्षा करता रहता है, निश्चित बैठी है। पश्चिमी क्षेत्र में भी, उदाहरणस्वरूप फाजिल्का में, पाकिस्तानी सेनाओं द्वारा अकारण हमले की घटनाएं कम नहीं।

भारतीय जनसंघ ऐसा महसूस करता है और उसने बार-बार भारत सरकार को समझाने का प्रयत्न किया है कि जानबूझकर शत्रुतापूर्ण रवैया अपनाने और भारत को बदनाम करने वाले ऐसे देश के प्रति, जिसका जन्म ही भारत के प्रति घृणा से हुआ है और जिसने घृणा के आधार को सदैव पुष्ट किया है, दब्बू और तुष्टीकरण का रवैया अपनाने से काम चलने वाला नहीं है; इस तरह पाकिस्तान के होशहवास दुरुस्त नहीं किये जा सकते। इसके लिए कठोर कदम उठाना आवश्यक है।

जनसंघ की कार्य समिति तदनुसार मांग करती है :

(1) पाकिस्तान के बढ़ते आक्रमण को देखते हुए—चाहे वह असम-बंगाल सीमाओं पर हो या पंजाब सीमा पर—सीमाओं की सुरक्षा का दायित्व केन्द्रीय सरकार को स्वयं संभालना चाहिए जिससे दुश्मन की तोपों का मुंह बंद किया जा सके और इन क्षेत्रों में दुश्मन की गतिविधियों को रोका जा सके। इसके अलावा सीमा क्षेत्रों की जनता के घर-द्वार की रक्षा करने में तथा सेना के कार्यों में मदद देने के लिए इन क्षेत्रों की असैनिक आबादी में से स्वयंसेवक दल खड़े किये जाने चाहिए।

(2) काश्मीर में तोड़फोड़ कराने के पाकिस्तानी प्रयास के उत्तर में षड-यंत्रकारियों के अड्डों का पता लगाकर उनको खत्म करने के लिए सरकार को तत्काल कदम उठाने चाहिए।

(3) भारत में पाकिस्तानी एजेंटों और गुर्गों की 'पंचमांगी' कार्यवाहियों के संदर्भ में सरकार को इन देशद्रोही गतिविधियों का पता लगाने, उन्हें समाप्त करने, और अपराधियों को कठोर दंड देने के लिए सक्रिय कदम उठाने चाहिए।

(4) पंजाब नहरी पानी प्रश्न के संदर्भ में भारत सरकार को खत्म न होने वाली ऐसी बातचीत में नहीं उलझना चाहिए, जिससे देश के हितों की हानि

होती हो। उसे इस बात पर जोर देना चाहिए कि इस खाते में पाकिस्तान ने आज तक जिस रकम का भुगतान नहीं किया उसे तत्काल अदा करे और जब तक पूरी अदायगी नहीं हो जाती तब तक भारत की ओर से पानी नहीं दिया जायेगा।

इन तमाम बातों के अलावा पाकिस्तान बराबर विस्थापितों की संपत्ति के सवाल को हल करने और विभाजन से पूर्व के ऋणों को चुकाने एवं अन्य देनदारियां भुगताने से इनकार कर रहा है। इन सब विवादों को हल करने के लिए भारत सरकार को प्रभावशाली कदम उठाने चाहिए।

[19 जुलाई 1958; बम्बई, के०का०स०]

58.17. श्रीलंका स्थित भारतवंशी

केन्द्रीय कार्य समिति इस बात पर गंभीर चिंता व्यक्त करती है कि श्रीलंका में रहने वाले लगभग 10 लाख भारतवंशी लोगों की स्थिति का सवाल दिन-प्रति-दिन उलझता और बिगड़ता जा रहा है। इस संबंध में भारत और श्रीलंका की सरकार के बीच बराबर समझौते हुए, लेकिन प्रत्येक समझौता श्रीलंका सरकार की हठधर्मी के कारण व्यर्थ गया और कागज का कोरा टुकड़ा रह गया। नतीजा यह है कि इन भारतवंशियों को श्रीलंका के नागरिकों के रूप में दर्ज करने का काम निरा ढकोसला साबित हुआ। अब तक 10 लाख लोगों में से कुछ हजार व्यक्तियों का ही पंजीकरण हुआ है। शेष को 'राज्यविहीन व्यक्ति' करार देने और उनका सब तरह से दमन एवं अपमान करने की कोशिशें हो रही हैं। जनसंघ भारत सरकार से अनुरोध करता है कि वह प्रभावशाली कदम उठाये, जिससे इस समस्या को जल्दी ही संतोषप्रद ढंग से हल किया जा सके।

[19 जुलाई 1958; बम्बई, के०का०स०]

58.18. नेहरू-नून समझौता

खतरनाक संभावनाएं—हाल ही का नेहरू-नून समझौता, जो कि आसाम-त्रिपुरा सीमा पर काफी दिनों से हो रहे पाकिस्तानी हमलों की पृष्ठभूमि में हुआ है, इन हमलों, और उनके कारण होने वाली भारत के जन और धन की हानि के संबंध में मौन है तथा उसके लिए पाकिस्तान से किसी प्रकार की क्षमा-याचना या क्षतिपूर्ति का प्रविधान नहीं करता है। पाकिस्तान (आसाम) और लखीमपुर (त्रिपुरा) को, जिन पर पाकिस्तान द्वारा अनधिकृत रूप से कब्जा किया गया है, उसी के अधिकार में छोड़ दिया गया है। इसके विपरीत समझौते में ऐसे प्रश्नों को उठाया गया है जिन पर विभाजन के बाद से कभी कोई विवाद नहीं था। समझौते के द्वारा पाकिस्तान को जलपाईगुड़ी जिले की बेरूबारी यूनियन (जिसमें पूर्वी बंगाल के सहस्रों विस्थापित आकर बसे हैं) तथा इच्छामती नदी (उन क्षेत्रों में भी जहां नदी का प्रवाह भारत-पाक सीमा से मीलों दूर इस ओर को है) के प्रयोग की अनुमती दी गई है। त्रिपुरा सीमा पर भारत का एक भूभाग इसलिए पाकिस्तान को दे दिया गया कि उसका रेलमार्ग सुविधाजनक हो जाय। समझौते के ये सब अंग भारत के राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध हैं। केन्द्रीय कार्य समिति इसकी तीव्र निंदा करती है और भारतीय संसद से मांग करती है कि वह इसे रद्द कर दे।

कार्य समिति जनसंघ की सभी शाखाओं को आदेश देती है कि वे इस समझौते के अराष्ट्रीय स्वरूप और उसकी भयावह संभावनाओं के प्रति जनता को जागरूक करें।

तुकेरग्राम व लखीमपुर की घटनाएं—भारत-पाक सीमा के क्षेत्र, विशेषकर आसाम-त्रिपुरा की ओर और 24-परगना (पश्चिमी बंगाल) में इच्छामती नदी के पास, आरक्षित हैं। यदि पाकिस्तान चाहे तो इन क्षेत्रों में किसी भी दिन तुकेरग्राम और लक्ष्मीपुर की घटनाओं की पुनरावृत्ति हो सकती है। कार्य समिति शासन से मांग करती है कि इन क्षेत्रों में सुरक्षा सेना बढ़ाई जाय और वहां से संदेहास्पद तत्वों को सीमा से दूर हटाया जाय, जिससे वे पाकिस्तानी एजेंटों के साथ मिलकर षडयंत्र न कर सकें।

आत्मरक्षा दल—जबकि सीमा क्षेत्रों में सुरक्षा की व्यवस्था अत्यन्त ही अपर्याप्त और चिंताजनक है, जनता स्वयं इस असहाय अवस्था में अधिक दिनों तक नहीं रह सकती। उन्हें अपनी सुरक्षा की व्यवस्था करनी होगी। अतः जनसंघ सीमा क्षेत्रों की जनता को परामर्श देता है कि वे सुरक्षा दलों की स्थापना करें, जो कि उनके जीवन और धन तथा मां-बहनों की लाज की रक्षा कर सकें। जनसंघ इस संबंध में उन्हें पूर्ण सहयोग का आश्वासन देता है।

[12 अक्टूबर 1958; दिल्ली, के०का०स०]

58.19. पाकिस्तान में सैनिक अधिनायकवाद

पाकिस्तान में संविधान की समाप्ति तथा सैनिक अधिनायकवाद की स्थापना से भारत में स्वभावतः काफी चिंता उत्पन्न हुई है क्योंकि पाकिस्तान न केवल भारत का सीमावर्ती देश है, अपितु कुछ वर्ष पूर्व तक वह हमारा ही एक अंग था। अतः वहां होने वाली घटनाओं का भारत पर प्रभाव पड़ना अवश्यम्भावी है और भारत उनके प्रति मूक दर्शक नहीं रह सकता। निस्संदेह यह परिवर्तन अत्यन्त खेदजनक है, क्योंकि इसका अर्थ लोकतंत्र की परिसमाप्ति तथा सैनिक सत्ता की संस्थापना है।

भारत के लिए अपशकुन—साथ ही यह भारत के लिए भी अपशकुन है। किसी भी दिन, जनता के बढ़ते हुए असंतोष को दूसरा मार्ग देने के लिए पाकिस्तानी सेना भारत के विरुद्ध आक्रमणात्मक कार्यवाहियां करने पर उतारू हो सकती है। यह आशंका साधार है क्योंकि नये सैनिक सत्ताधीशों ने हाल में ही जो घोषणाएं की हैं उनसे भारत अथवा हिंदू अल्पसंख्यकों के प्रति उनके शत्रुतापूर्ण दृष्टिकोण में किसी प्रकार के सुधार का संकेत नहीं मिलता। जनरल अयूब खां ने भारत के विरुद्ध पाकिस्तान की तथाकथित शिकायतों को दोहराते हुए कहा है कि यदि

"भारत के साथ युद्ध हुआ तो वह पाकिस्तान में अत्यन्त लोकप्रिय होगा।" श्री मिर्जा ने पाकिस्तान के भावी संविधान को "मुस्लिम जनता की प्रतिभा के अधिक उपयुक्त" बनाने की घोषणा की है।

इसके अतिरिक्त, पाकिस्तान के हिंदू अल्पसंख्यकों (पूर्वी बंगाल में जिनकी संख्या प्राय: 80 लाख है) के संबंध में हमारा दुर्भाग्यपूर्ण अनुभव यह है कि जब कभी पाकिस्तान में कोई गंभीर संकट उत्पन्न होता है, पूर्वी बंगाल के हिंदू अल्पसंख्यकों को नये आक्रमण तथा दमन का शिकार बनाया जाता है जिसका अवश्यम्भावी परिणाम पाकिस्तान से हिंदुओं के निष्क्रमण की वृद्धि में होता है। सेना द्वारा पूर्वी बंगाल में किये गये तथाकथित 'गुप्त अभियान' से हिंदू अल्पसंख्यकों को काफी त्रस्त होना पड़ा है। अन्य कारणों से भी, भारत को पाकिस्तान में होने वाली इन घटनाओं के प्रति सतर्क रहना चाहिए।

भारतीय जनसंघ यह भी अनुभव करता है कि विश्व के सभी लोकतंत्रवादी देशों को पाकिस्तान में हुए इस लोकतंत्रविरोधी परिवर्तन को गम्भीरता से देखना चाहिए और भारत सरकार तथा जनता दोनों को देश में लोकतंत्रवादी शक्तियों को सुदृढ़ बनाने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए।

[12 अक्तूबर 1958; दिल्ली, के०का०स०]

58.22. श्रीलंका में जातिवादी दंगे

श्रीलंका द्वीप में बसे हुए भारतवंशियों की स्थिति, जो बहुत दिनों से भारत के लिए चिंता का कारण है, पिछले कुछ दिनों में अत्यन्त गंभीर हो गई है। अनेक स्थानों पर यह भारतीय उन भीषण साम्प्रदायिक दंगों के शिकार हुए, जिन्होंने श्रीलंका की नींव हिला दी थी। अभी तक इन दंगों का प्रभाव समाप्त नहीं हुआ है। उस समय जिन संकटकालीन प्रविधानों को लागू किया गया था वे अभी तक चालू हैं।

इसके अतिरिक्त श्रीलंका स्थित उन भारतवंशियों की (जो वहां पीढ़ियों से बसे हैं) नागरिकता के पंजीकरण के प्रश्न को वहां की सरकार ने, भारत-श्रीलंका समझौते के बाद भी, जिस प्रकार वर्षों तक टालते रहने के बाद हल किया है उससे भारत स्तंभित रह गया है। परिणामस्वरूप लगभग 7 लाख भारतवंशियों की नागरिकता के आवेदनपत्र अस्वीकृत किये जा चुके हैं, और उन्हें 'राज्यविहीन' घोषित कर दिया गया है। शेष 3 लाख व्यक्तियों के साथ भी संभवत: यही व्यवहार होगा।

जनसंघ अनुभव करता है कि इस प्रकार का व्यवहार करके वहां की सरकार ने भारत-श्रीलंका समझौते की भावनाओं का (यदि शब्दों का न भी हो) उल्लंघन कर दिया है। समिति भारत सरकार से मांग करती है कि वह इस समस्या के संतोषजनक समाधान के लिए अविलम्ब पग उठाये।

[12 अक्तूबर 1958; दिल्ली, के०का०स०]

58.26. पाकिस्तान के प्रति दृढ़ व यथार्थवादी नीति

जिस दिन से पाकिस्तान की स्थापना एक पृथक राज्य के रूप में हुई, भारत-पाकिस्तान संबंध उसी दिन से खराब हैं। सच तो यह है कि जिन परिस्थितियों में पाकिस्तान का जन्म हुआ वह विकृति उसके साथ ही पैदा हुई। हिंदुओं और भारत के खिलाफ मुसलमानों में शत्रुता जगाने की योजना बनाकर और उसके लिए काम करके पाकिस्तान की स्थापना की गई। अब पाकिस्तान को बनाये रखने के लिए उन समस्त नैसर्गिक, ऐतिहासिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक यथार्थताओं का भी विरोध किया जा रहा है जो दोनों राज्यों के एकीकरण की सहज स्थिति की ओर संकेत करती हैं। इस उद्देश्य से पाकिस्तान के शासक अपने देश की स्थापना के पहले दिन से ही भारत को अपना 'शत्रु नंबर एक' मानते हैं और इस मान्यता के अनुरूप व्यवहार भी करते रहे हैं।

पाकिस्तान की शत्रुता—पश्चिमी पाकिस्तान से सब हिंदुओं को निकाल बाहर करना और पूर्वी बंगाल से भी राजनैतिक दृष्टि से प्रबुद्ध सब हिंदुओं को निकालकर कालांतर में वहां शेष हिंदुओं को मुसलमान बना देना उनकी नियोजित नीति रही। काश्मीर और नहरी पानी विवाद को इसी उद्देश्य से जानबूझकर उभारा जाता है। भारत को हानि पहुंचाने के उद्देश्य से प्रेरित होकर विदेश नीति का निश्चित किया जाना, योजनाबद्ध सैनिक तैयारी, पाकिस्तान के सीमावर्ती क्षेत्रों से हिंदुओं का विधिवत् निष्कासन, मुसलमान घुसपैठियों को भारतीय सीमावर्ती क्षेत्रों में बसने के लिए भेजा जाना और बार-बार समझौते करने एवं विरोध-पत्र भेजने के बावजूद भारतीय क्षेत्रों पर हमले—यह सब भारत के प्रति पाकिस्तानी शत्रुता की कुछ प्रकट अभिव्यक्तियां हैं।

गत मार्च में, जब पाकिस्तान ने पूर्वी क्षेत्र में लगातार गोलाबारी शुरू कर दी और त्रिपुरा में लखीमपुर तथा असम के सैनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण तुकेरग्राम पर कब्जा कर लिया, स्थिति काफी बिगड़ गई। इसके बाद नेहरू-नून समझौता हुआ, परन्तु उसके बाद भी पाकिस्तानी हमले बंद न हुए। सबसे बुरी बात तो यह है कि भारत के काफी बड़े निर्विवाद क्षेत्र को भी अब पाकिस्तान को सौंपने का विचार हो रहा है।

भारत का अपमान—इन घटनाओं के बाद से पाकिस्तान में जो कुछ हुआ उससे तो स्थिति और ज्यादा बिगड़ गई। जनरल अयूब की नई सरकार ने भी भारत के प्रति अपनी शत्रुता को छिपाने की कोशिश नहीं की। वह तो इस हद तक बढ़ गई कि मुल्लाओं तक को उकसा रही है कि वे पाकिस्तानी युवकों में भारत के खिलाफ जिहाद छेड़ने की भावनाएं भड़कायें। साथ ही उसने ढाका स्थित भारतीय उप-उच्चायुक्त के कर्मचारियों की और पश्चिमी बंगाल सर्वेक्षण के उपनिदेशक की पिटाई करने और सीमापार से लगातार भारतीय क्षेत्र पर गोली बरसाकर भारत को अपमानित करने की नीति पर विधिवत् अमल करना

आरंभ कर दिया है। काश्मीर और बंगाल की सीमाओं पर भारी फौजी जमाव की खबरें भी आ रही हैं।

यह सब घटनाएं इन खबरों की पुष्टि करती हैं कि पाकिस्तान के सैनिक शासकों ने काश्मीर विजय करने और पूर्वी बंगाल को पश्चिमी पाकिस्तान से मिलाने के लिए भारतीय प्रदेश में से गलियारा निकालने की प्रतिज्ञा की है। ये सब उस खतरे के पूर्वाभास हैं जिनकी उपेक्षा भारत तभी कर सकता है जब वह अपने ऊपर संकट लाने को तैयार हो। प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने पाकिस्तान की आक्रामक प्रवृत्तियों के इन प्रदर्शनों के प्रति जो रवैया अपनाया है वह और भी दुःखद एवं चिंताजनक है, क्योंकि इससे न केवल पाकिस्तान को बढ़ावा मिलता है कि वह अपनी नीतियां जारी रखे बल्कि भारतीय जनता में भी सुरक्षा की एक मिथ्या भावना उत्पन्न होती है।

अतः, भारतीय जनसंघ का यह अधिवेशन भारत की जनता और सरकार को सावधान करता है कि वह यदि 1947 की जैसी विनाशकारी घटनाओं की पुनरावृत्ति रोकना चाहती है तो वस्तुस्थिति और इस गंभीर हालत के फलितार्थों को समय रहते समझें।

सिलहट जिले के बारह थाने—जनसंघ सरकार से अनुरोध करता है कि वह निम्न उपायों से पाकिस्तान के प्रति यथार्थवादी एवं दृढ़ नीति अपनाये जिससे जनता में आत्मविश्वास बढ़े और पाकिस्तान की आक्रामक कार्यवाहियां रोकी जा सकें :

(1) पाकिस्तान को स्पष्ट शब्दों में चेतावनी दी जाय कि वह 15 जनवरी 1959 तक तुकेरग्राम और लखीमपुर खाली कर दे और ऐसा न होने पर भारत सरकार हमलावरों को निकाल बाहर करने के लिए अपनी शक्ति एवं सामर्थ्य के अनुसार सब तरीके अपनाये।

(2) पाकिस्तान को बता दिया जाय कि काश्मीर, पूर्वी बंगाल या असम कहीं भी पाकिस्तान द्वारा सीमा भंग करने की एकतरफा कार्यवाही को समूचे भारत पर हमला समझा जायेगा और उससे उसी प्रकार से निपटा जायेगा।

(3) पाकिस्तान के सैनिक शासकों ने भारतीय क्षेत्रों पर अपनी आक्रामक तथा हिंसात्मक कार्यवाहियों से नेहरू-नून समझौते को खत्म कर दिया है। अतः इस समझौते को लागू करने के उद्देश्य से संसद में जो विधेयक पेश किया गया है उसे वापस लिया जाय।

(4) पाकिस्तान को इस्पात, सीमेंट तथा सैनिक महत्व का दूसरा सामान देना तत्काल बंद किया जाय।

(5) रैड-क्लिफ पंचाट के आधीन सिलहट जिले के जो 12 थाने भारत को दिये गये थे किन्तु पाकिस्तान ने उन पर गैर-कानूनी ढंग से कब्जा जमा रखा है उनको प्राप्त करने के लिए आवश्यक कदम उठाये जायें।

(6) राजस्थान, पश्चिमी बंगाल और असम के सीमा क्षेत्रों में मुसलमान

आबादी में आई बाढ़ की पड़ताल की जाय और जो लोग पाकिस्तान से भारतीय क्षेत्र में घुस आये हैं उन्हें निकाला जाय। राष्ट्रविरोधी गतिविधियों को पूरी शक्ति से रोकने और सीमावर्ती क्षेत्रों को अधिक सुरक्षित बनाने के लिए सभी आवश्यक कदम उठाये जायें।

(7) सीमावर्ती क्षेत्रों में निष्ठावान व्यक्तियों को हथियार दिये जायें जिससे वे बार-बार होने वाले पाकिस्तानी हमलों से अपनी रक्षा कर सकें।

(8) प्रत्येक भारतीय युवक को अनिवार्य सैनिक प्रशिक्षण दिये जाने के लिए तत्काल कदम उठाये जायें।

[28 दिसम्बर 1958; बंगलौर, सातवां सा०अ०]

58.27. 'राज्य विहीन' समुद्रपार भारतवंशी

समुद्रपारीय भारतवंशियों की दयनीय स्थिति और भारत सरकार द्वारा उनकी दशा सुधारने के लिए कोई प्रभावशाली पग उठाने में असमर्थता की ओर भारतीय जनसंघ ने बार-बार ध्यान खींचा है। सच तो यह है कि उनकी हालत और ज्यादा बिगड़ी है।

मताधिकार से वंचित भारतीय—भारत और श्रीलंका के बीच लंबी बातचीत और समय-समय पर हुए विभिन्न समझौतों के बावजूद वहां रहने वाले भारतवंशियों की दशा सुधरने के बजाय और ज्यादा बिगड़ती गई है। हालत यह है कि लगभग 10 लाख लोगों में से 7 लाख से भी अधिक व्यक्तियों को राज्यविहीन घोषित कर दिया गया है और आशंका है कि शेष में से भी अधिकांश का यही हाल होगा। इसके अतिरिक्त जिन भारतवंशियों को श्रीलंका का नागरिक घोषित किया जा चुका है उनको भी 'मताधिकार से वंचित' करने का विचार हो रहा है।

बर्मा में रहने वाले विभिन्न व्यवसायों के भारतीयों को (जो मुख्यतः दक्षिण भारत से हैं) प्रायः लूटा गया है और राष्ट्रीयकरण के बहाने उनकी संपत्ति जप्त कर ली गई है। उन्हें प्रायः मुआवजा भी नहीं दिया गया। रुपया भेजने में कठिनाई खड़ी करके और मुद्रा विनिमय नियमों को कठोर बनाकर उन्हें भारी मुसीबत में डाला जा रहा है।

सिंगापुर में स्थिति यह है कि जिन लगभग 20 हजार भारतवंशियों ने सिंगापुर की नागरिकता स्वीकर की उन्हें प्रायः 'राज्यविहीन' की स्थिति में पटक दिया गया है।

दक्षिणी अफ्रीका में 'समूह क्षेत्र कानून' के अमल में आने से बड़ी अपमानजनक और असह्य स्थिति पैदा हो गई है।

सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि उन सभी देशों में जहां भारतवंशी बड़ी संख्या में आबाद हैं, उनकी स्थिति बिगड़ती जा रही है और इससे भारत के सम्मान और प्रतिष्ठा को विश्व भर में ठेस पहुंच रही है।

भारतीय जनसंघ मांग करता है कि इन सब देशों की सरकारों पर दबाव डालने के लिए भारत सरकार को सभी संभव कदम उठाने चाहिए जिससे विदेशों में रहने वाले भारतवंशियों की स्थिति में सुधार हो सके।

[28 दिसम्बर 1958; बंगलौर, सातवां सा०अ०]

59.02. पाकिस्तान को सैनिक सहायता

चार वर्ष पूर्व अमरीका ने सैनिक सहायता देने के लिए पाकिस्तान से संधि की थी। इसका नतीजा यह हुआ कि अमरीका से मुफ्त शस्त्र प्राप्त कर के पाकिस्तान भारत के प्रति अधिकाधिक आक्रामक होता जा रहा है। यहां तक कि वह भारत की सीमाओं पर बराबर आक्रमण कर रहा है। भले ही अमरीका ने यह घोषणा कर दी हो कि अमरीका की यह सहायता केवल साम्यवादी आक्रमण के मुकाबले के लिए है और भारत के विरुद्ध नहीं, पर इन घटनाओं से अमरीका के इरादों के विषय में भारत की जनता में खराब भावना उत्पन्न हुई है।

अमरीकी-पाक द्विपक्षीय समझौता—अब स्थिति से पाकिस्तान में मूलभूत रूप से बदल गई है जब कि गत अक्तूबर मास में वह सैनिक तानाशाही के आधीन आया, उसका संविधान रद्द कर दिया गया और वहां प्रजातंत्र का कोई भी चिह्न शेष नहीं बचा। ऐसी स्थिति में भी कुछ दिन पूर्व अमरीका ने पाकिस्तान के साथ एक और द्विपक्षीय समझौता किया है जिसमें यह आश्वासन दिया गया है कि आक्रमण के समय वह पाकिस्तान की सहायता करेगा। पाकिस्तान का कहना है कि यह सहायता केवल साम्यवादी आक्रमण के समय नहीं वरन् हर आक्रमण के समय दी जायेगी। यदि कुछ अधिक न भी कहा जाय तो भी इतना तो सत्य है कि समझौते की शब्दावली अत्यत्त संदेहपूर्ण है।

भारतीय जनसंघ इस बात पर अत्यधिक खेद प्रकट करता है कि पाकिस्तान में प्रजातंत्र के समाप्त हो जाने तथा अनेक घटनाओं, विशेषतः पाकिस्तान द्वारा भारत की सीमाओं पर सतत् आक्रमण किये जाने और पाकिस्तान द्वारा भारत के प्रति हर प्रकार से शत्रु-भाव रखने के बावजूद भी अमरीका पाकिस्तान के साथ सैनिक संधियां करने की अपनी नीति को जारी रखे हुए है। स्वभावतः भारत की जनता इसे स्पष्ट रूप में भारत के प्रति 'अमैत्रीपूर्ण कृत्य' समझती है। अतः भारतीय जनसंघ यह समझता है कि अमरीका भारत में—जो कि पूर्व में प्रजातंत्र के संरक्षण के लिए बचा हुआ एक ही रक्षा-बुर्ज है—प्रजातंत्र के संरक्षण के लिए स्वयं खतरा उत्पन्न कर रहा है जब कि उसका दावा है कि विश्व में प्रजातंत्र का संरक्षण वह हृदय से चाहता है। अतएव इसकारण भारतीय जनसंघ का मत है कि अमरीका की यह नीति अत्यन्त अदूरदर्शितापूर्ण है।

[15 मार्च 1959; दिल्ली, के०का०स०]

59.06. तिब्बत की स्वतंत्रता

पंचशील (1954) समझौता—गत मार्च से तिब्बत पर कब्जा जमाने वाले चीनी अधिकारियों ने वहां जो जुल्म ढाये उससे भारत और विश्व के अन्य भागों में जनमत को गहरा आघात पहुंचा है। भारत को तो इसलिए और अधिक सदमा पहुंचा क्योंकि तिब्बत के साथ भारत के संबंध बड़े घनिष्ठ और प्राचीन हैं। इन घटनाओं का आरम्भ लगभग 9 वर्ष पूर्व तब हुआ जब 1950-51 में कम्युनिस्ट चीन ने सैनिक बल प्रयोग द्वारा तिब्बत पर कब्जा करके तिब्बत की दलाईलामा सरकार को जबर्दस्ती एक समझौता करने को बाध्य किया, जिसके आधीन तिब्बत को सिर्फ दिखावे के लिए स्वायत्तता दी गई और उसे चीन के आधीन कर लिया गया। उस समय भारत ने तिब्बत पर चीन के अधिकार का विरोध तो किया किंतु दबी जबान से और चीन के कम्युनिस्ट शासकों ने इस दुर्बल विरोध को भी बड़े तिरस्कार से ठुकरा दिया। इसके बाद जो कुछ हुआ वह और भी दुर्भाग्यपूर्ण था। 1954 में भारत ने चीन के साथ एक समझौता किया जिसे आमतौर पर 'पंचशील समझौता' कहा जाता है। इसके अनुसार भारत ने तिब्बत पर चीन के अधिकार को औपचारिक रूप से स्वीकार कर लिया और तिब्बत में भारतीय संस्थाओं एवं चौकियों समेत भारत के वैध अधिकारों एवं सुरक्षा की दृष्टि से लगभग आधी शताब्दी से चले आ रहे अधिकारों को भी, तिब्बत की सरकार को नहीं बल्कि उस पर कब्जा करने वाली, चीन सरकार को सौंप दिया। इसके उपरांत 1956 में जब चीनी अधिकारियों ने तिब्बत पर अपना पंजा और कठोर किया तब परम पावन दलाईलामा उसे सहन न कर सके और तंग आकर भारत आ गये। लगभग उसी समय चीन के प्रधानमंत्री भारत आये और भारत के प्रधानमंत्री को आश्वस्त किया कि तिब्बत की स्वायत्तता का सम्मान किया जायेगा और तिब्बत के आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक जीवन में तथा उसकी संस्थाओं में किसी तरह का हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा। भारत के प्रधानमंत्री ने जब यह आश्वासन परम पावन दलाई लामा तक पहुंचाया तब उनके अनुरोध पर वे फिर तिब्बत लौट गये।

चीनी अत्याचार—अब इन सब आश्वासनों को हवा में उड़ा दिया गया है और तिब्बत पर कम्युनिस्ट सैनिक अनुशासनवाद थोपा जा रहा है। तिब्बत की सामाजिक व्यवस्था को अस्त-व्यस्त किया जा रहा है, वहां की धार्मिक संस्थाओं और मठों को मिटाया और भ्रष्ट किया जा रहा है। हान जाति के लाखों चीनियों को तिब्बत में बसाया जा रहा है जिससे वहां तिब्बतियों के मुकाबले चीनियों की संख्या अधिक हो जाय और इस जनसमूह में तिब्बती जाति का लोप हो जाय। स्थिति इतनी असह्य हो गई है कि तिब्बत के शांतिप्रिय, किसी को कष्ट न देने वाले और धर्मपरायण लोग भी चीन के खिलाफ विद्रोही बन गये और चीनी इस राष्ट्रीय विद्रोह को कुचलने के लिए लोगों की निर्मम हत्याएं कर रहे हैं। परमपावन दलाईलामा को विवश होकर भारत की शरण लेनी पड़ी। उनके साथ और भी हजारों तिब्बती चीनी आतंक के कारण भागकर भारत आ गये। भारतीय जनमत

का आदर करते हुए भारत सरकार ने उन्हें शरण दी जो सर्वथा उचित थी।

भारतीय सुरक्षा खतरे में—ऐसा प्रतीत होता है कि तिब्बत पर जो विपत्ति आई उसके लिए भारत भी दोषी है। सच तो यह है कि नेहरू सरकार की दुर्बल नीति के कारण ही कम्युनिस्ट चीन को तिब्बत के प्रति आक्रामक नीति अपनाने का बढ़ावा मिला। एक बड़ी आक्रामक सैनिक शक्ति ठीक भारत की उत्तरी सीमा पर आ बैठी और स्वयं भारत की सुरक्षा के लिए खतरा पैदा हो गया।

भारतीय जनसंघ महसूस करता है कि भारत का यह नैतिक दायित्व है कि तिब्बत के संबंध में अपनी पिछली भूलों को सुधारे और इसके लिए भारत तत्काल ऐसे प्रभावशाली कदम उठाये, जिससे तिब्बत पर चीन का हमला खत्म हो, वहां कब्जा जमाने वाली चीनी फौजें वहां से हट जायें और तिब्बत की आजादी सुरक्षित रहे। इस उद्देश्य से भारतीय जनसंघ निम्नलिखित सुझाव रखता है :

(1) भारत स्वयं संयुक्त राष्ट्रसंघ में श्रीगणेश करे कि वह तिब्बत का मामला अपने हाथों में ले। सच तो यह है कि 1 वर्ष पूर्व जब चीन ने तिब्बत पर हमला किया था तब तिब्बत का सवाल संयुक्त राष्ट्रसंघ में उठाया गया था। लेकिन तब भारत के आग्रह करने और जोर देने पर इस सवाल को ताक पर रख दिया गया और इस प्रकार वह खत्म-सा हो गया। अब चूंकि तिब्बत की स्वायत्तता का आदर करने के अपने वायदे से चीन मुकर गया है और उसकी बातों पर यकीन नहीं किया जा सकता अतः यह दायित्व भारत का है कि अब वह स्वयं इस सवाल को संयुक्त राष्ट्रसंघ में उठाये।

(2) भारत को एशिया के स्वतंत्र देशों से (जो कम्युनिस्ट शिविर से बाहर हैं) तिब्बत पर चीनी आक्रमण के संबंध में बातचीत करनी चाहिए जिससे वे सब भारत के साथ तिब्बत की आजादी का समर्थन करें। तिब्बत पर चीन के हमले के बाद पूर्वी एशिया में आशंकाएं बढ़ी हैं और वहां ऐसा महसूस किया जाने लगा है कि तिब्बत पर चीन का कब्जा उसके साम्राज्यवादी विस्तार की इच्छा का प्रतीक पहला कदम है। एशिया के स्वतंत्र देश यदि अपना विरोध प्रकट करने के लिए एक होते हैं तो कम्युनिस्ट चीन के निर्मम और उच्चाभिलाषी शासकों पर भी कुछ असर पड़ेगा और हो सकता है कि, इतना विलम्ब हो जाने के बाद भी, चीन एशियाई जनमत की ओर कुछ ध्यान देकर अपनी हमलावर कार्यवाहियों को रोक दे।

(3) इस बीच परम पावन दलाईलामा को भारत में तिब्बत सरकार के रूप में राजनीतिक मंच पर काम करने की पूरी सुविधाएं दी जानी चाहिएं। यदि तिब्बत की आजादी के लिए काम करना और उसे प्राप्त करवाना है तो उन्हें सिर्फ शरण देने, केवल आध्यात्मिक हैसियत से काम करने तथा अन्य दृष्टियों से जबरन अवकाश ग्रहण करने की स्थिति में डाल देने से काम नहीं चलेगा, बल्कि उन्हें

तिब्बत की आजादी के लिए काम करने की छूट दी जानी चाहिए।

अनेक अन्य बातों के अतिरिक्त केवल भारत की सुरक्षा की दृष्टि से विचार करने पर भी यह आवश्यक है कि चीन तिब्बत से हट जाय और तिब्बत स्वतंत्र बने। अतः भारत को तिब्बत की आजादी के लिए सब प्रयत्न करने चाहिए।

[8 जुलाई 1959; पूना, भा०प्र०स०]

59.10. भारत में चीनी घुसपैठ

भारतीय जनसंघ की केन्द्रीय कार्य समिति कम्युनिस्ट चीन द्वारा भारत-तिब्बत सीमा के अतिक्रमण पर घोर चिंता प्रकट करती है। भारतीय जनसंघ राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रश्न को सर्वोच्च प्राथमिकता देने और भारत की सीमाओं के संरक्षण की ओर अधिक ध्यान देने की मांग निरन्तर करता आ रहा है। दुःख का विषय है कि शासन ने अपने इस प्राथमिक कर्तव्य का विधिवत् पालन नहीं किया। परिणामस्वरूप आज हमारी राष्ट्रीय सीमाएं प्रत्येक आक्रामक पड़ोसी के अतिक्रमण का विषय बन गई हैं। जनसंघ भारत की सुरक्षा को दृढ़ करने की मांग को बलपूर्वक दोहराता है और शासन को इस कार्य में अपने सम्पूर्ण सहयोग का आश्वासन देता है।

कम्युनिस्ट चीन की ये आक्रामक कार्यवाहियां पिछले कई वर्षों से निरंतर चल रही हैं। किंतु शासन ने एक ओर तो जनता को इस संबंध में अंधकार में रखा और दूसरी ओर साधारण विरोध-पत्र भेजने के अतिरिक्त भारत की भूमि को आक्रांता से मुक्त करने के लिए कोई सक्रिय पग नहीं उठाया। प्रतीत होता है कि भारत-चीन मैत्री तथा किसी भी कीमत पर शांति बनाये रखने की लालसा में शासन कम्युनिस्ट चीन के विस्तारवादी स्वरूप की, जो संपूर्ण दक्षिणी-पूर्वी एशिया के लिए संकट का कारण हो रहा है, वास्तविकता को समझने में बुरी तरह असफल रहा। आज भी यह धारणा बनाने का प्रयत्न हो रहा है कि चीन द्वारा अतिक्रमण तो सीमाओं की अनिश्चितता व भारत में श्री दलाईलामा को आश्रय देने के कारण है। यह तथ्यों के सर्वथा विपरीत और स्थिति की गंभीरता को कम करके दिखाने का प्रयास है जिसके परिणाम अत्यंत घातक हो सकते हैं।

भारत-तिब्बत सीमा—भारत और तिब्बत की सीमाएं विभिन्न संधियों, व्यवहार तथा परंपरा से सुनिश्चित और सुस्पष्ट हैं। उनके संबंध में भ्रम या संदेह या विवाद के लिए कोई स्थान नहीं। ऐसी सभी बातें जो भारत-तिब्बत सीमा की निश्चितता के संबंध में भ्रम या संदेह उत्पन्न करती हैं, बंद होनी चाहिए क्योंकि उससे अन्यायपूर्ण पक्ष को ही पुष्टि मिलती है। प्रधानमंत्री श्री नेहरू द्वारा इस संबंध में उद्घोषित 'दोहरी नीति' इस दृष्टि से उपयुक्त नहीं है। आक्रमण और शांतिपूर्ण समझौता-वार्ता साथ-साथ नहीं चल सकते।

भारत-चीन संबंधों पर श्वेत-पत्र—भारत और चीन के संबंधों पर

प्रकाशित श्वेत-पत्र से यह स्पष्ट है कि भारत की भूमि पर चीन का अतिक्रमण 1954 से आरंभ हुआ, जबकि शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की बहुप्रचारित उद्घोषणा की स्याही सूखने भी नहीं पाई थी और "हिन्दी-चीनी भाई-भाई" के नारों की प्रतिध्वनि हिमालय के प्रांगण में गूंज रही थी। भारत-चीन पत्रव्यवहार से यह भी स्पष्ट है कि भारत के विरुद्ध आक्रामक गतिविधियों के पीछे एक सुनिश्चित योजना है और तिब्बत पर पूर्ण अधिकार, चीनी नक्शों में भारतीय भूभाग का चित्रण तथा उस भाग की प्राप्ति के लिए अब भारत की सीमा पर प्रत्यक्ष आक्रमण—उसी एक योजना के अंग हैं।

भारतीय जनसंघ भारत और चीन की मैत्री का इच्छुक है। किंतु स्थायी मैत्री का आधार यथार्थ से आंखें मूंदकर तुष्टीकरण और समर्पण करना नहीं हो सकता। देश की अखंडता सार्वभौम-प्रभुता और सुरक्षा के लिए संकट मोल लेकर हम मित्रता अथवा शांति बनाये नहीं रख सकते। अतः आवश्यक है कि हम चीन के प्रति अपनी नीति का पुनर्विचार कर अधिक व्यावहारिक आधार पर उसका निर्धारण करें।

भारतीय जनसंघ का निश्चित मत है कि चीन ने भारतीय भूमि पर बलात् अधिकार और मैकमोहन रेखा को भारत और तिब्बत के बीच की अंतर्राष्ट्रीय सीमा अस्वीकार कर शांतिपूर्ण समझौता-वार्ता के सभी द्वार बंद कर दिये हैं। अतः जनसंघ मांग करता है कि :

(1) चीन को एक निश्चित तिथि के भीतर भारतीय भूमि के सभी आक्रांत क्षेत्रों से हटने के लिए कहा जाय और असफलता की दशा में भारतीय भूमि की मुक्ति के लिए सभी प्रकार के उपाय अपनाये जायें।

(2) संपूर्ण उत्तरी सीमांत को सेना के नियंत्रण में दे दिया जाय और उस क्षेत्र में सुरक्षा-व्यवस्था तथा यातायात और संचार साधनों को विकसित और सुदृढ़ करने के लिए शीघ्र प्रभावी कदम उठाये जायें।

(3) भारत के विशाल भूभाग को चीन का अंग चित्रित करने वाले सभी नक्शों तथा अन्य चीनी पत्र-पत्रिकाओं के—जो इस प्रकार के नक्शों का प्रकाशन कर रहे हैं—भारत में प्रचलन पर प्रतिबंध लगा दिया जाय।

(4) चीन ने यांग्त्से, याटुंग तथा गार्टोक स्थित भारतीय व्यापार अभिकरणों तथा वाणिज्य दूतावासों के मार्ग में जानबूझकर रुकावटें उत्पन्न कर भारत और चीन के बीच 1954 में हुए समझौते का उल्लंघन किया है। भारत सरकार को नई दिल्ली, कलकत्ता तथा कलिम्पोंग स्थित चीनी व्यापार अभिकरणों तथा चीनी वाणिज्य दूतावासों के विरुद्ध जवाबी कार्यवाही करनी चाहिए।

[20 सितम्बर 1959; दिल्ली, के०का०स०]

59.12. तुष्टीकरण की नीति

भारतीय जनसंघ प्रारंभ से ही भारत के लिए दोनों शक्तिगुटों से अलग

व असंबद्ध और विवादों से दूर रहने की नीति को उपयुक्त समझता रहा है। प्रधानमंत्री श्री नेहरू के नेतृत्व में भारत सरकार की उद्घोषित नीति यद्यपि यही रही है, किंतु प्रत्यक्ष व्यवहार में उसका रूप जहां भारतीय हितों का संबंध है, वहां संतुष्टीकरण का और जो विवाद हम से असंबद्ध हैं उनमें अनावश्यक रुचि लेकर स्वयं के लिए विषम स्थिति उत्पन्न करने का रहा है। संतुष्टीकरण की नीति ने विस्तारलोलुप शक्तियों को बढ़ावा दिया है जिससे आज भारत की अपनी सुरक्षा और स्वतंत्रता के लिए भारी संकट उत्पन्न हो गया है। यह नीति पूर्णतः असफल सिद्ध हुई है और उसने केवल भारत के मान और प्रतिष्ठा को विश्व में धक्का पहुंचाया है।

जनसंघ अनुभव करता है कि इस नीति का अविलंब परित्याग कर सुदृढ़, सम्मानपूर्ण और यथार्थवादी नीति के अवलंबन से भारत के हित और सम्मान की रक्षा की जाय।

[20 सितम्बर 1959; दिल्ली, के०का०स०]

59.13. चीनी आक्रमण की समाप्ति

चीनी हमले का दृढ़ीकरण—केन्द्रीय कार्य समिति इस बात पर गहरी निराशा और चिंता व्यक्त करती है कि सरकार भारतीय क्षेत्र पर से चीनी हमलावरों को हटाने में विफल रही है। यद्यपि समिति सरकार के समान ही अंतर्राष्ट्रीय विवादों को शांतिपूर्ण वातावरण द्वारा हल करने की उत्सुकता व्यक्त करती है, तथापि उसका यह भी निश्चित मत है कि जहां जानबूझकर पड़ौसी की सीमाओं का उल्लंघन हो और उसके क्षेत्र पर बलात् कब्जा कर लिया जाय, वहां आक्रमण बने रहने तक बातचीत का कोई आधार नहीं हो सकता। यह खेद की बात है कि प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने चीन के प्रधानमंत्री को अपने 16 नवम्बर के ताजे पत्र में इस तथ्य की उपेक्षा की है और आक्रांता एवं आक्रांत को समान स्तर पर रखा है। आक्रांता को इस प्रकार न केवल अपने वर्तमान हमले का दृढ़ीकरण करने का अवसर मिलेगा बल्कि उसके और आगे आक्रमण का खतरा बढ़ेगा।

जनसंघ का मत है कि प्रधानमंत्री ने अपने ही क्षेत्र के एक भाग में सैनिक या असैनिक कर्मचारी न भेजने की बात कहकर न केवल भारत की प्रभुसत्ता को घटाया है बल्कि परोक्ष रूप से हमले का भी समर्थन कर दिया है। चीन यदि इस सुझाव को मान लेता है तो इसका अर्थ इससे भिन्न और कुछ न होगा कि भारत अपने क्षेत्र पर अपने ही दावे को स्वेच्छा से त्याग देगा और यह क्षेत्र 'स्वामित्वहीन क्षेत्र' बन जायेगा। भारत ने अब तक इस मत की पुष्टि की है (और जो सही है) कि हमारी सीमाएं 'परंपरा से, संधियों से एवं बरतने में स्पष्ट और पक्की हैं'। लेकिन, अब प्रधानमंत्री के सुझावों से हमारी समूची उत्तरी सीमा विवादास्पद हो जायेगी और चीन को अवसर मिलेगा कि वह अपने लंबे-चौड़े दावों को और बढ़ा-चढ़ाकर एवं जोरदार ढंग से पेश करे।

भारतीय जनसंघ अपनी इस मांग को दोहराता है कि चीन से कहा जाय कि वह एक निश्चित अवधि के भीतर भारतीय क्षेत्र खाली कर दे और यदि वह ऐसा करने से इनकार करता है तो हमलावर को कब्जा किये गये क्षेत्र से निकाल बाहर करने के लिए सभी आवश्यक पग उठाये जायें।

कलिम्पोंग में चीनी व्यापार एजेंसी के सामने सशस्त्र पहरा बैठाया जाना और हमारी प्रादेशिक सीमाओं पर आपत्ति और संदेह प्रकट करने वाले आपत्तिजनक साहित्य के भारत-प्रवेश पर रोक लगाया जाना सही कदम हैं। जनसंघ उनका स्वागत करता है। किंतु स्थिति का तकाजा यह भी है कि भारत में चीनी राजनयिकों और चीन की व्यापार संस्थाओं को यहां भारत-विरोधी गतिविधियों को प्रेरित और निर्देशित करने की जो खुली छूट है उसको प्रभावशाली ढंग से रोका जाय। यह भी आवश्यक है कि यहां रहने वाले चीनी नागरिकों पर कड़ी दृष्टि रखी जाय और जहां भी किसी के आचरण के बारे में कोई संदेह हो उसे देश छोड़ने का आदेश दिया जाय।

जनसंघ ऐसा अनुभव करता है कि चीन ने जो चुनौती दी है उसका सामना करने के लिए जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में राष्ट्रीय प्रयत्नों को तेज करने की आवश्यकता है। समिति को विश्वास है कि चाहे खेत में काम करने वाला किसान हो या कारखाने में काम करने वाला मजदूर हो, अपने-अपने क्षेत्र में प्रत्येक भारतीय नागरिक चीनी आक्रमण का मुकाबला करने के लिए उठाये गये सैनिक कदमों को मजबूत करने के लिए पूरे प्रयत्न करेगा और देश की स्वतंत्रता एवं अखंडता की रक्षा करने के लिये सर्वोच्च बलिदान करने को तैयार रहेगा।

[6 दिसम्बर 1959; सूरत, के०का०स०]

59.15. भारत-पाक संबंध

15 अगस्त 1947 को भारत का विभाजन होते ही पाकिस्तान बना और यह नितांत दुर्भाग्यपूर्ण रहा कि अपने जन्म-दिन से ही पाकिस्तान ने भारत के प्रति शत्रुतापूर्ण रवैया अपनाया। विभाजन के 2 मास बाद ही पाकिस्तान ने कबाइलियों की मदद से अक्तूबर 1947 में काश्मीर पर हमला किया। युद्ध-विराम समझौते के कारण, जिसे नेहरू सरकार ने नितांत अबुद्धिमत्ता से स्वीकार कर लिया, पाकिस्तान आज भी काश्मीर के उस 1/3 भाग पर कब्जा जमाये बैठा है जो कि काश्मीर राज्य के भारत में मिल जाने के कारण भारत का ही एक भाग है। उसके अतिरिक्त, पाकिस्तान सीमाओं पर निरंतर आक्रमण करता रहता है। पाकिस्तान से मिलने वाली पूर्वी और पश्चिमी दोनों सीमाओं पर बिना किसी भड़कावे के गोली चलाई जाती है। युद्ध-विराम समझौते किये गये, लेकिन उन्हें तत्काल भंग किया गया और सीमाओं पर जानबूझ कर तनाव एवं असुरक्षा की स्थिति उत्पन्न की गई। पाकिस्तान की ओर से होने वाले इन आक्रमणों, शत्रुतापूर्ण कार्यों और पाकिस्तान में रहने वाले अल्पसंख्यक हिंदुओं के साथ घोर

दुर्व्यवहार के प्रति भारत सरकार का रवैया बेहद शर्मनाक रहा।

भारतीय भूभागों का भूदान—इन सब कार्यवाहियों को रोकने के लिए दृढ़तापूर्ण और कठोर कदम उठाने के बजाय, श्री नेहरू के नेतृत्व में भारत सरकार देश को हानि पहुंचाकर भी पाकिस्तान को भारतीय क्षेत्रों का भूदान दे रही है और दुर्बलता एवं तुष्टीकरण की नीति अपनाती जा रही है। 1950 का नेहरू-लियाकत समझौता, सितम्बर 1958 का नेहरू-नून समझौता और गत सितम्बर मास में किया गया समझौता इसके प्रमाण हैं। मुर्शिदाबाद और 24-परगना जिलों (पश्चिमी बंगाल) के कुछ क्षेत्रों के अलावा नेहरू-नून समझौते के अधीन बेरूबाड़ी पाकिस्तान को सौंप दी गई और पिछले सितम्बर मास में हुए ताजा समझौते के अधीन असम के पथरिया सुरक्षित वन के पांच गांवों के अलावा (जो विभाजन के समय से ही रैड-क्लिफ पंचाट के अधीन भारत के भीतर पाथरखंडी थाने के अन्तर्गत थे) 17 वर्गमील क्षेत्रफल में फैले मूल्यवान वनक्षेत्र भी पाकिस्तान को सौंपने की बात है। यह सब क्षेत्र पाकिस्तान से तुकेरग्राम (लगभग 200 एकड़ क्षेत्रफल) वापस लेने के लिए पाकिस्तान को सौंपा जा रहा है। तुकेरग्राम भारत का ही था जिस पर पाकिस्तान ने अगस्त 1958 में कब्जा कर लिया और भारत सरकार ने इसको खाली कराने के लिए कोई कदम नहीं उठाया।

पाकिस्तान के प्रति 'जैसे को तैसा' की नीति—भारत के राष्ट्रीय हितों को क्षति पहुंचाकर पाकिस्तान को खुश करने की नीति की जनसंघ निंदा करता है और मांग करता है कि पाकिस्तान के प्रति 'जैसे को तैसा' की नीति अपनायी जाय। यह निश्चय ही वांछनीय है कि भारत को खंडित करके जिन दो राज्यों की स्थापना की गई, उनमें परस्पर अच्छे संबंध रहें; लेकिन इसकी अनिवार्य आवश्यकता यह है कि काश्मीर तथा अन्य भागों पर पाकिस्तानी आक्रमण तत्काल समाप्त हो, वह अपना विरोधी रवैया त्याग दे और पाकिस्तान में रहने वाले हिन्दू अल्पसंख्यकों के साथ सम्मानप्रद एवं मानवीय व्यवहार हो।

पाकिस्तान के साथ संयुक्त सुरक्षा समझौता—इस संबंध में जनसंघ का ध्यान स्वयं पाकिस्तान के कुछ क्षेत्रों में चर्चित इस प्रस्ताव की ओर गया है कि कम्युनिस्ट चीन के खतरे को देखते हुए भारत और पाकिस्तान को संयुक्त सुरक्षा समझौता कर लेना चाहिए। लेकिन, जनसंघ महसूस करता है कि भारत-पाकिस्तान संबंधों के वर्तमान संदर्भ में ऐसा कोई सुझाव बेहूदा, अवास्तविक और अविचारणीय है। पाकिस्तान अपने हमले के बाद काश्मीर के एक-तिहाई भाग पर अब भी कब्जा जमाये हुए है और भारत तथा पाकिस्तान की सेनाएं अब भी एक दूसरे के सामने मोर्चों पर डटी हैं। उनके बीच दनादन को एक 'युद्ध-विराम' समझौते द्वारा रोक रखा गया है। एक अन्य क्षेत्र से हमले के खतरे का सामना करने के लिए भारत हमलावर पाकिस्तान के साथ संयुक्त सुरक्षा समझौता नहीं कर सकता। यह समूचा विचार ही बेहूदा है।

फिर भी यह एक शुभ संकेत है कि पाकिस्तान ने अब इस तरह सोचना शुरू किया है। इसे सद्बुद्धि का उदय होना ही कहा जायेगा कि अब यह लगने लगा है कि समूचा भारत (जिसमें भारत संघ और पाकिस्तान दोनों आते हैं) सैनिक एवं अन्य दृष्टियों से भी मूलतः एक है और इन तमाम कठिनाइयों का हल भी एक ही है कि अखंड भारत की स्थापना की जाय जिसकी जनसंघ मांग करता है। लेकिन, पाकिस्तान यदि सचमुच चाहता है कि संयुक्त सुरक्षा संधि के उसके सुझाव पर गंभीरता से विचार किया जाय तो उसे तत्काल काश्मीर के उस भाग से तथा अन्य क्षेत्रों से भी फौरन हट जाना चाहिए जहां उसने बलात् कब्जा जमा रखा है।

यह विचार भी कि भारत अकेले अपनी शक्ति से वर्तमान चीनी खतरे का सामना नहीं कर सकता, उस पराजयवादी मनोवृत्ति का परिणाम है जो नेहरू सरकार के प्रचार से पनपी है। कम्युनिस्ट चीन की विस्तारवादी आकांक्षा से उत्पन्न वर्तमान संकट को देखते हुए आवश्यक है कि भारत हमले का सामना करने के लिए स्वयं दृढ़ नीति अपनाये और एशिया के उन स्वतंत्र देशों का नैतिक समर्थन एवं सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न करे जो चीन की व्यूह रचना एवं रणनीतियों से आतंकित हैं। इन देशों के साथ मिलकर कम्युनिस्ट चीन के नव-साम्राज्यवाद के खिलाफ भारत को संयुक्त मोर्चा बनाना चाहिए।

[6 दिसम्बर 1959; सूरत, के०का०स०]

60.03. वांछनीय शिखर-सम्मेलन

नवस्वतंत्र-राष्ट्रों का उदय—विगत एक वर्ष में अंतर्राष्ट्रीय स्थिति में एक ओर सुधार के तथा दूसरी ओर बिगाड़ के लक्षण दिखे हैं। संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति तथा सोवियत प्रधानमंत्री के बीच व्यक्तिगत भेंट के परिणामस्वरूप यूरोप में तनाव कम हुआ है तथा शिखर-सम्मेलन के कार्यक्रम निश्चित किये जा रहे हैं। वैसे ही अफ्रीका में कुछ नये स्वतंत्र राष्ट्रों का आविर्भाव उस महाद्वीप की चिर आकांक्षाओं की सफल पूर्ति के रूप में हुआ है। भारतीय जनसंघ इन राष्ट्रों का अभिनंदन करता है।

किंतु एशिया की स्थिति सुधरने के स्थान पर और बिगड़ी है। कम्यूनिस्ट चीन ने दक्षिणी और दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों की स्वतंत्रता को चुनौती देकर संकट पैदा कर दिया है। यह आश्चर्यजनक संयोग है कि जब एक ओर कम्यूनिस्ट रूस गैर-कम्यूनिस्ट पश्चिमी राष्ट्रों के साथ शांति-वार्ता का प्रयत्न करता हुआ अपने दृष्टिकोण में कुछ उदारता का परिचय दे रहा है उस समय अंतर्राष्ट्रीय कम्यूनिज्म की अत्यंत महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में अवस्थित कम्युनिस्ट चीन, तिब्बत की स्वतंत्रता और जातीयता का समूलोच्छेदन करने के उपरांत एशिया के अन्य तटस्थ देशों के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही तक कर रहा है। चीन की ये कार्यवाहियां निश्चित ही विश्वशांति के लिए घातक हैं तथा उस नीति के विरुद्ध पड़ती हैं

जिनकी घोषणा आज सोवियत रूस कर रहा है। किंतु इसे चीन के दिमाग की सनक या मनमानी कहकर नहीं टाला जा सकता। रूस और चीन के बीच मूल-भूत नीतियों का मतभेद मानकर इन आक्रमणों की मीमांसा करना भी ठीक नहीं होगा।

स्थानीय कम्युनिस्ट पार्टियों द्वारा अन्दर से विद्रोह और कम्युनिस्ट देशों द्वारा बाहर से आक्रमण की जिस नीति और कार्यक्रम का निर्धारण अंतर्राष्ट्रीय कम्यूनिज्म ने अपने विस्तार के लिए कर रखा है, चीन उसी का पालन कर रहा है। पश्चिमी मोर्चे पर रूस द्वारा शांति का आभास प्रजातंत्रीय देशों को भुलावे में डालने का प्रयत्न मात्र है। इस परिस्थिति का लाभ, कम्यूनिज्म की सीमाओं का एशिया में विस्तार करने के लिए चीन उठा रहा है। शांति की घोषणाओं के बावजूद चीन द्वारा अशांति और युद्ध के प्रयत्नों की रूस ने कभी आलोचना तक नहीं की। एशिया के राष्ट्रों की स्वतंत्रता की रक्षा करने के लिए रूस चीन पर दबाव डालेगा यह समझना भूल होगी।

अधिक प्रभावी संयुक्त राष्ट्रसंघ—भारतीय जनसंघ का निश्चित मत है कि आज की परिस्थिति में विश्व के बड़े राष्ट्रों के बीच शिखर-सम्मेलन उनके बीच गलतफहमियों को दूर कर सद्भावना उत्पन्न करने, शीतयुद्ध को कम करने तथा प्रत्यक्ष युद्ध को टालने में सहायक हो सकता है किंतु स्थायी विश्वशांति तब तक नहीं हो सकती जब तक राजनीतिक पराधीनता, आर्थिक शोषण तथा रंगभेद मौजूद है और दुनिया के बड़े-बड़े राष्ट्र उनको मिटाने के स्थान पर, एक दूसरे के विरुद्ध चुप रहने का ही समझौता कर लेते हैं। पश्चिमी उपनिवेशवाद के अवशेष जब तक कायम हैं और जब तक अंतर्राष्ट्रीय कम्यूनिज्म की आड़ में नये साम्राज्यवाद के चंगुल में फंसे देश अपनी स्वतंत्रता को प्राप्त नहीं करते, तब तक विश्वशांति की बातें करना मानव के एक बहुत बड़े समुदाय को गुलाम बनाये रखने का षडयंत्र मात्र समझा जायेगा। शिखर-सम्मेलन की सफलता के लिए आवश्यक है कि बड़े राष्ट्र, संयुक्त राष्ट्रसंघ को अपने दायित्वों का निर्वाह करने का प्रभावी माध्यम बनाने की व्यवस्था करें, अणु-अस्त्रों के उत्पादन, परीक्षण और प्रयोग पर प्रतिबंध लगाये और निशस्त्रीकरण की ओर सक्रिय पग उठायें।

शक्तिगुट—भारत अपने अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में दोनों शक्तिगुटों से अलग रहने की नीति अपनाता रहा है। यह नीति विश्वशांति के व्यापक लक्ष्य एवं राष्ट्रीय हितों की दृष्टि से हमारे लिए उपयुक्त है। अतः जनसंघ ने इसका प्रारंभ से समर्थन किया है। चीन के आक्रमण के बाद बदलीं हुई परि-स्थितियों में इस नीति को बदलने का विचार देश में जोर पकड़ता जा रहा है। जनसंघ यह मानते हुए भी कि विदेश नीति का निर्धारण कुछ काल्पनिक सिद्धांतों एवं स्वप्नों के संसार के आधार पर न होकर यथार्थ की भूमि पर राष्ट्र के हितों के संरक्षण की दृष्टि से होता है और इसलिए विश्व की बदलती हुई स्थिति में उसे

बदला जा सकता है, आज की परिस्थिति में देश की भौगोलिक और सामरिक स्थिति, हमारी योजनाओं और आकांक्षाओं, विश्व की शक्तियों के संतुलन, अपने शत्रु और मित्र —सबका विचार करते हुए यही हितावह समझता है कि हम अपनी दोनों गुटों से अलग रहने की नीति को बनायें रखें। किंतु, इस नीति का भली भांति पालन करने के लिए यह आवश्यक है कि हम दुनिया के झगड़ों से भी दूर रहें तथा ऐसे किसी मामले में न पड़ें जिसका हमारे राष्ट्रीय हितों से प्रत्यक्ष संबंध न हो। साथ ही इस नीति में ऐसी कोई बात नहीं जो कि युद्ध की स्थिति में हमें अपने राष्ट्रीय प्रतिरक्षा-सामर्थ्य को बढ़ाने के लिए किसी भी देश से कोई सहायता लेने से रोकती हो।

पाकिस्तान के साथ संयुक्त सुरक्षा संधि के भी प्रस्ताव हुए हैं। जब तक भारत के साथ स्वाभाविक हित संबंधों की अनुभूति के आधार पर पाकिस्तान अपनी भारत विरोधी नीतियों का परित्याग नहीं करता तथा जब तक वह काश्मीर के एक-तिहाई भूभाग पर आक्रमणकारी के रूप में स्थित है तब तक इस प्रकार के प्रस्तावों का कोई अर्थ नहीं। यह पाकिस्तान के नापाक इरादों को पूरा करने की वैसी ही चाल हो सकती है जैसी कि चीन की पंचशील की घोषणा सिद्ध हुई।

भारतीय जनसंघ का मत है कि किसी न किसी के सहारे खड़े होने की मनोवृत्ति मूलतः पिछले 12 वर्षों में भारत के राष्ट्रीय हितों का संरक्षण करने में हमारी विदेश नीति की असफलता तथा देश की असमर्थता की भावना में से उत्पन्न हुई है। राष्ट्रीय हितों के संरक्षण और संवर्धन की असफलता का कारण नीति का सैद्धांतिक पहलू न होकर व्यवहार है। हमें अपने व्यवहार में परिवर्तन करना होगा तथा अपनी नीति के ऐसे प्रवक्ता नियुक्त करने होंगे जो व्यवहार-कुशल हों तथा हमारी नीतियों का सही प्रतिनिधित्व कर सकें। राष्ट्र के लिए शक्ति की उपासना प्रत्येक परिस्थिति में आवश्यक है, किंतु उसका साधन पराश्रय नहीं अपितु अपने आत्मसम्मान और आत्मविश्वास को जगाकर राष्ट्रीय संगठन के भाव द्वारा सभी क्षेत्रों में सामर्थ्य उत्पन्न करना है।

[25 जनवरी 1960; नागपुर, आठवां सा०प्र०]

60.04. चीनी आक्रमण की समाप्ति

भारतीय जनसंघ इस बात पर घोर चिंता व रोष प्रकट करता है कि भारत की भूमि में चीनी आक्रमण अभी तक कायम है, तथा शासन न केवल आक्रमणकारियों को बाहर खदेड़ने में असफल रहा है बल्कि उसने चीनी संकट का भी भली भांति आंकलन भी नहीं किया।

चीनी आक्रमण संबंधी 1953 की चेतावनी—*जनसंघ ने दिसम्बर 1953 में ही चीन की आक्रामक योजनाओं के विरुद्ध चेतावनी दे दी थी।* किंतु शासन न केवल असावधान रहा, अपितु अपने कार्य व अकार्य द्वारा चीन के एक के बाद एक आक्रमण को सहन करता रहा। जब चीन की सेनाएं तिब्बत को पदाक्रांत कर उसके स्वतंत्र अस्तित्व को समाप्त कर रही थीं, तब भारत एक निष्क्रिय दर्शक मात्र बना रहा। 1954 में भारत ने, तिब्बत पर चीन के स्वामित्व को औपचारिक मान्यता भी दे दी और तिब्बत में अपने सब अधिकारों को चीन के पक्ष में छोड़ दिया। ऐसे अपने शांतिप्रिय पड़ौसी, जिसके साथ युगों से हमारे धार्मिक एवं सांस्कृतिक संबंध चले आ रहे थे के प्रति विश्वासघात का पाप तो हमने किया ही, पर इस बिचौलिये राज्य की समाप्ति में सहयोग देकर भारत के हितों के विरुद्ध आत्मघाती कार्य भी किया। भारत की भूमि को अपना बताने वाले मानचित्र चीन द्वारा प्रकाशित करने के बाद, भारत की सीमाओं में चीनी अतिक्रमण पर भी भारत सरकार ने जिस चरम निष्क्रियता का परिचय दिया है वह सर्वविदित है। एक ओर चीन के दुष्कृत्यों के संबंध में जनता व संसद को जानबूझ कर अंधकार में रखकर, और दूसरी ओर चीन के स्वर में स्वर मिलाकर पंचशील की लोरियां गा-गाकर जनता में एक मिथ्या सुरक्षा एवं निश्चितता की भावना पैदा कर शासन ने वह भयंकर भूल की है जो किसी दूसरे प्रजातंत्र देश में उसके पदत्याग का कारण बन सकती थी। संक्षेप में, भारत की चीन संबंधी नीति पूर्णतः असफल सिद्ध हो गई है।

और म्यूनिख नहीं—अंतर्राष्ट्रीय विवादों को शांतिपूर्ण वार्ता से हल करने की शासन की उत्सुकता में सहभागी होते हुए भी भारतीय जनसंघ का यह निश्चित मत है कि जहां किसी पड़ौसी की सीमाओं का जानबूझकर अतिक्रमण हुआ हो और उसकी भूमि पर बलात् कब्जा कर लिया गया हो, वहाँ आक्रमण की समाप्ति के पूर्व ही आक्रमणकारी से समझौते का प्रयास आक्रांताओं का हौसला ही बढ़ाता है। सत्य यह है कि चीन के साथ लंबे पत्रव्यवहार द्वारा अपने पक्ष को प्रमाणित करने में भारत जिस ढंग से चिपटा हुआ है उसके फलस्वरूप चीन की विस्तारवादी क्षुधा में वृद्धि ही हुई है और वह अपने बेहूदा दावों को निरंतर बढ़ाता जा रहा है; यहाँ तक कि अपने नये पत्र में उसने सम्पूर्ण उत्तरी सीमा को विवादास्पद बताने का दुःसाहस किया है। आज जबकि चीन की सेनाएं भारत की भूमि पर जमी हुई हैं और उसका रवैया हठवादिता और खुली अडंगेबाजी का है, चीन का यह प्रस्ताव कि दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों के बीच बिना किसी शर्त के वार्ता हो, निस्संदेह अपमानजनक है। यह उचित ही है कि श्री नेहरू ने प्रधानमंत्री चाऊ एन-लाई के रंगून के निमंत्रण को तुरंत ठुकरा दिया। अंतिम पत्र भी किसी भिन्न उत्तर की अपेक्षा नहीं करता। निश्चय ही भारत इस प्रश्न पर म्युनिख की पुनरावृत्ति नहीं होने देगा।

'घिनौनी संधियां—किंतु चीनी मोर्चे पर शासन की असफलता का सबसे चिंताकारक पहलू यह है कि वह इस तथ्य को समझने से निरंतर इनकार कर रहा है कि भारतीय क्षेत्र में चीन की घुसपैंठ, मानचित्रों के संबंध में किसी भ्रांति का परिणाम नहीं और न वह दलाईलामा को भारत में आश्रय देने से उत्पन्न रोष का ही फल है—वस्तुतः चीन का आक्रमण दलाईलामा के आगमन के बहुत पूर्व ही

प्रारंभ हुआ था—बल्कि यह दक्षिणी तथा दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों में कम्युनिस्ट विस्तारवाद के एक सुविचारित तथा सुनियोजित कार्यक्रम का ही एक अंग है। इसकी पूर्ति के लिए चीन ने दोहरी योजना अपनाई है। प्रथम, बाहर से आक्रमण और द्वितीय देश के भीतर ही एक पंचमांग का योजनाबद्ध निर्माण। इस संदर्भ में वियतनाम, इण्डोनेशिया तथा लाओस की घटनाएं बोधप्रद होंगी। चीन के लिए वार्तालाप तथा पत्रव्यवहार, समझौते तथा संधियां वहीं तक अर्थ रखती हैं जहां तक कि वे उसकी इस योजना में सहायक होती हों अन्यथा जैसा कि उसने अपने नये पत्र में निर्लज्जतापूर्वक प्रकट किया है, वह ऐसी 'घिनौनी संधियों' को झुठलाने में तनिक भी नहीं हिचकिचायेगा। चीनी संकट के वास्तविक स्वरूप को समझने में शासन की इस असमर्थता का ही यह फल है कि एक ओर हमारी चीन संबंधी नीति पग-पग पर यथार्थवाद से शून्य रही है और दूसरी ओर उसने आंतरिक कम्युनिस्ट संकट के प्रति भी सरकार को असावधान बना दिया है।

भारतीय जनसंघ भली भांति अनुभव करता है कम्युनिस्ट चीन की चुनौती का सामना केवल सामरिक स्तर पर और हमारी वीर सेनाओं द्वारा ही नहीं बल्कि राष्ट्रजीवन के सभी क्षेत्रों में काम करने वाले प्रत्येक भारतीय द्वारा किया जायेगा। वर्तमान संकट का यह तकाजा है कि प्रत्येक जन राष्ट्र-निर्माण के कार्य में अधिकाधिक योगदान देने के लिए कृतसंकल्प हो और राष्ट्र-रक्षार्थ सर्वस्वार्पण के लिए सन्नद्ध रहे।

प्रतिरक्षा सामर्थ्य में वृद्धि—भारतीय जनसंघ का यह अधिवेशन अपनी इस मांग को दुहराता है कि चीनी आक्रमणकारी को भारत की भूमि से बाहर खदेड़ने के लिए अविलंब पग उठाये जायें और भारत स्थित चीन के कूटनीतिक तथा वाणिज्य दूतावासों के विरुद्ध जवाबी कार्यवाही की जाय। यह अधिवेशन शासन से आगे मांग करता है कि :

(क) तिब्बत की स्वायत्तता के संबंध में चीन ने अपने आश्वासनों, समझौतों तथा संधियों का जो उल्लंघन किया है उसे देखते हुए भारत शासन को तिब्बत पर चीन के स्वामित्व की मान्यता को रद्द कर देना चाहिए और तिब्बत की स्वतंत्रता का समर्थन करना चाहिए।

(ख) भारत के विरुद्ध चीन की शत्रुता को देखते हुए चीनी गणराज्य को संयुक्त राष्ट्रसंघ में स्थान देने के प्रश्न पर शासन को अपना समर्थन वापस ले लेना चाहिए।

(ग) भारत स्थित चीन-समर्थक तत्वों की गतिविधियों पर कठोर दृष्टि रखी जाय और राष्ट्र-विरोधी शरारत करने की उनकी क्षमता को प्रभावपूर्ण रीति से कुंठित कर दिया जाय।

(घ) इस तथ्य को समझकर कि एशिया में शांति को बनाये रखने के लिए भारत तथा चीन के बीच सैनिक संतुलन आवश्यक है, भारत के प्रतिरक्षा-सामर्थ्य को बढ़ाने के लिए शीघ्र तथा प्रभावी पग उठाये जायें।

[25 जनवरी 1960; नागपुर, आठवां सा०अ०]

60.06. पाकिस्तान से समझौता

गुप-चुप की नीति—गत कुछ दिनों से वित्तीय समझौता, पंजाब नहरी पानी विवाद, सीमा प्रश्न, व्यापार समझौता आदि प्रश्नों पर भारत-पाक संबंधों को सुधारने का प्रयास हुआ है। यह योग्य है एवं भारतीय जनसंघ इसका स्वागत करता है। किन्तु यह खेद का विषय है कि इन अधिकांश समझौतों में उनकी वास्तविक शर्तों को प्रकाशित नहीं किया जाता और पता लगने पर वे भारत के हितों के प्रतिकूल निकलती हैं। यह गुप-चुप की नीति निंदनीय है। उदाहरणार्थ, पाकिस्तान के लगातार 6 महीने सीमा पर गोलियां चलाने तथा तुकेरग्राम पर बलात् अधिकार करने के बाद जब सितम्बर 1958 में नेहरू-नून करार हुआ तो भारत की जनता को उसकी शर्तों का पता पाकिस्तान के प्रधानमंत्री, सर फीरोज खां नून के कथन द्वारा ही लगा। जनता को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि उनके अनुसार तुकेरग्राम को वापस लेना तो दूर, उलटा पश्चिमी बंगाल के बेरूबाड़ी, मुर्शिदाबाद जिले का कुछ भाग, 24-परगना में इच्छामती नदी को पाकिस्तान को सौंपने का ही प्रस्ताव किया गया। हाल के पूर्वी सीमा विवाद पर मंत्रियों के सम्मेलन में हुए समझौते के अनुसार भी तुकेरग्राम (जो कभी पाकिस्तान का नहीं था अपितु 1958 में पाकिस्तान द्वारा उस पर जबरदस्ती कब्जा कर लिया गया था) तो अवश्य वापिस मिला, किन्तु आसाम के मूल्यवान पथरिया जंगल की 17 वर्गमील भूमि (जिसमें पाथरकुण्डी थाने के 5 आबाद गांव भी सम्मिलित हैं और जो कि रैड-क्लिफ पंचाट के अनुसार भारत को मिले थे और विभाजन के बाद हमारे ही अधिकार में थे) पाकिस्तान को दे दी गई। पश्चिमी सीमा के सम्मेलन में भी सुलेमांकी हैडवर्क्स का क्षेत्र तथा अन्य तीन गांव भी इसी प्रकार पाकिस्तान को देने का तय किया गया।

भारतीय भूभागों का भूदान—इन समझौतों में अधिक मामला लेनदेन का न होकर भारत द्वारा देने और पाकिस्तान द्वारा लेने का ही रहा है। यदि आत्मसमर्पण का यही मार्ग स्वीकार करना है तो थोड़ी देर की सद्भावना कभी भी खरीदी जा सकती है। किन्तु इस प्रकार के समझौते राष्ट्रीय हितों के प्रतिकूल हैं। अतः जनसंघ उनका विरोध करता है।

इसके अतिरिक्त पाकिस्तान में हिन्दुओं को कुचलने की नीति अपनाई जा रही है। 1950 के नेहरू-लियाकत समझौते की अवहेलना करके पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं की सम्पत्ति को बेचने, रुपया भेजने तथा आने के अधिकार को प्रतिबंधित ही नहीं, बिल्कुल ही समाप्त किया जा रहा है। सत्य तो यह है कि हिन्दुओं की स्थिति वहां असह्य हो गई है। भारतीय जनसंघ की मांग है कि पाकिस्तान में

हिन्दुओं को सम्मान का जीवन व्यतीत करने का अधिकार, जो कि विभाजन की शर्त थी, दिलाने के लिए भारत शासन प्रभावी पग उठाये।

[25 जनवरी 1960; नागपुर, आठवां सा०अ०]

60.10. नेहरू-चाऊ वार्ता

भारत की भूमि में चीन के आक्रमण के कायम रहते तथा इस संबंध में चीन के रवैये में किसी प्रकार के परिवर्तन का संकेत न मिलते हुए भी प्रधानमंत्री ने श्री चाऊ एन-लाई को दिल्ली आने का जो निमंत्रण दिया है, उसे भारतीय जनसंघ राष्ट्र के सम्मान और प्रभुसत्ता के प्रतिकूल समझता है। यह दुःख का विषय है कि विदेशी आक्रमण जैसे महत्वपूर्ण विषय पर प्रधानमंत्री जनभावनाओं का सही आंकलन एवं प्रतिनिधित्व नहीं कर सके हैं। अब जबकि चीन के प्रधानमंत्री ने दिल्ली आने का निमंत्रण स्वीकार कर लिया है तथा दोनों प्रधानमंत्रियों की भेंट निश्चितप्राय है, जनसंघ का मत है कि वार्ता का एक ही विषय हो सकता है और वह यह है कि चीन की सेनाएं भारत की भूमि से कब हट रही हैं? अन्य किसी विषय पर चर्चा करना आक्रमणकारी और आक्रांत को समान स्तर पर लाकर आक्रमण को स्वीकार करने जैसा होगा।

तिब्बत पर चीनी प्रभुसत्ता को स्वीकार कर अपने सभी अधिकारों का चीन के पक्ष में परित्याग, चीनी आक्रमण की ओर लम्बे काल तक दुर्लक्ष, तथा इस तथ्य को जनता तथा संसद से छिपाये रखना, आक्रमण की समाप्ति के लिए सैनिक कार्यवाही न करने की उद्घोषित नीति तथा समझौता वार्ता का कोई आधार निर्धारित न होते हुए भी अपने पुराने निश्चय को छोड़कर, बिना शर्त चीनी प्रधानमंत्री को वार्ता के लिए निमंत्रण देना—ऐसे तथ्य हैं जिनसे यह आशंका होती है कि कहीं शांति बनाये रखने तथा चीन की मित्रता प्राप्त करने की अति उत्सुकता में प्रधानमंत्री कोई ऐसा समझौता न कर बैठें, जिसके द्वारा भारत की परंपरागत सीमाओं में हेर-फेर तथा देश के किसी भूभाग को चीन के हाथों में सौंप दिया जाय।

जनसंघ का यह निश्चित मत है कि इस प्रकार का कोई भी समझौता सीमाओं की सुरक्षा के स्थान पर उन्हें किसी भी आक्रमणकारी के हाथ का खिलवाड़ बनाकर और भी संकटापन्न बना देगा। अपनी सीमाओं की सम्मानपूर्ण रक्षा करने में भारत की असफलता न केवल विश्व में हमारी अप्रतिष्ठा का कारण बनेगी, अपितु दक्षिणी एवं दक्षिणी-पूर्वी एशिया के छोटे-छोटे देशों पर जो लोकतंत्रीय मार्ग से अपने आर्थिक विकास का प्रयत्न कर रहे हैं और अनेक बाधाओं के बावजूद अंतर्राष्ट्रीय गुटबंदी से अलग रहना चाहते हैं, इसका बहुत बुरा परिणाम होगा।

'दृढ़ता से काम लो' सप्ताह—भारतीय जनसंघ प्रधानमंत्री को यह विश्वास दिलाते हुए कि चीनी प्रधानमंत्री से दृढ़ता के साथ बातचीत करने तथा

आक्रमण की समाप्ति के लिए कठोर से कठोर कदम उठाने में संपूर्ण देश उनके साथ है, उनसे यह आश्वासन चाहता है कि शांतिपूर्ण समझौते के नाम पर कोई समर्पण कर भारत के किसी भी भूभाग से वे अपना दावा तथा कब्जा नहीं छोड़ेंगे। इस दृष्टि से जनभावनाओं की अभिव्यक्ति तथा जनमत को संगठित करने के लिए भारतीय जनसंघ अपनी समस्त शाखाओं को आदेश देता है कि वे दिनांक 10 अप्रैल से 17 अप्रैल तक 'दृढ़ता से काम लो' सप्ताह मनायें।

भारतीय जनसंघ आशा करता है कि चीनी प्रधानमंत्री के आगमन के अवसर पर सार्वजनिक स्वागत समारोहों का आयोजन कर जनभावनाओं को और भी ठेस पहुंचाने का प्रयत्न नहीं किया जायेगा। चीनी आक्रमण के कायम रहते चीनी प्रधानमंत्री का स्वागत-सत्कार राष्ट्रीय अपमान का ही कारण बनेगा जिसको रोकने के लिए भारतीय जनसंघ ऐसे सभी समारोहों का बहिष्कार करने के लिए जनता से अपील करने को बाध्य होगा।

[20 मार्च 1960; दिल्ली, के०का०स०]

60.13. शिखर-सम्मेलन की असफलता

शिखर-सम्मेलन की विफलता से तथा जिस ढंग से वह विफल हुआ उससे विश्व के सभी शांति-प्रेमी व्यक्तियों को निराशा हुई है। अमरीकी गुप्तचर्या विमान की उड़ान से उत्पन्न अविश्वास के वातावरण में यह आवश्यकता कदाचित और बढ़ गई थी कि बड़े राष्ट्रों के नायक प्रत्यक्ष पारस्परिक वार्ता करें। संयुक्त राज्य अमरीका ने इस काण्ड को जिस भद्दे तथा अनौचित्यपूर्ण तरीके से निबटाने का यत्न किया उसे शिखर-सम्मेलन को उद्ध्वस्त करने के लिए प्रयुक्त नहीं किया जाना चाहिए था। इन दो बड़े राष्ट्रों के व्यवहार को देखते हुए शांति के संबंध में उनकी बहु उच्चारित घोषणाओं पर अधिक आशा नहीं बांधी जा सकती। तथ्य यह है कि रूस और अमरीका दोनों में शस्त्रों की होड़ लगी है। फलस्वरूप तनाव में वृद्धि तथा विश्व-शांति के संबंध में सही आशंकाएं जागृत हो गई हैं।

ऐसी स्थिति में यदि विश्व को सर्वनाश से बचाना है तो आम निशस्त्रीकरण अनिवार्य हो गया है। इस प्रकार के निशस्त्रीकरण के अंतर्गत चीन जैसे राष्ट्र को भी जिसकी शक्ति, एशिया तथा विश्व की शांति के लिए नये और बड़े संकट का कारण बन गई है, लाया जाना चाहिए।

[1 जून 1960; दिल्ली, के०का०स०]

60.14. भारत-चीन अधिकारी वार्ता

और चीनी हमले के विरुद्ध गारण्टी—नेहरू-चाऊ वार्ता की अपेक्षित असफलता से, तथा श्री चाऊ एन-लाई के काठमांडु तथा कलकत्ता के वक्तव्यों और चीन के नियंत्रित प्रेस तथा संवाद समितियों द्वारा आरंभ किये गये भारत

विरोधी प्रचार से दोनों प्रधानमंत्रियों की भेंट के संबंध में जनसंघ ने जो आशंकाएं प्रकट कीं थीं वे पुष्ट हो गई हैं। श्री नेहरू जहां लद्दाख में चीन अधिकृत भारतीय भूमि पर उसके दावे को अस्वीकार करने में दृढ़ रहे, वहां उन्होंने चीन को भारतीय भूभाग पर बने रहने और अपनी स्थिति को मजबूत करने की मानो छूट दे दी। प्रधानमंत्रियों द्वारा किसी मिलन-भूमि को खोज पाने में विफलता के बाद अधिकारियों द्वारा सीमा संबंधी सामग्री की जांच-पड़ताल से भारत को कोई लाभ नहीं होगा। इससे यह भ्रांत धारणा पैदा हुई है कि समझौता-वार्ता के लिए कोई आधार है, जबकि तथ्य यह है कि कोई आधार नहीं है। अपनी स्थिति को दृढ़ करने हेतु, चीन समय प्राप्त करना व यह दिखाना चाहता है कि सम्पूर्ण विवाद, यहां-वहां लेन-देन का एक छोटा-सा प्रश्न मात्र है, चीन के लिए यह स्थिति लाभकारी हो सकती है, किंतु भारत के लिए नहीं, क्योंकि हमारा मत है कि यह खुले आक्रमण की घटना है। सबसे बुरी बात तो यह है कि इस बात की पूरी संभावना है कि चीन तथ्यों तथा प्रमाणों को तोड़-मरोड़ कर निष्फल तर्कजाल में फंसाने का यत्न करे।

अतः भारतीय जनसंघ का यह निश्चित मत है कि अधिकारियों को वार्ता के लिए भेजने का कोई लाभ नहीं होगा।

केन्द्रीय कार्य समिति अपनी इस बात को दोहराती है कि चीनी आक्रमण की अविलम्ब समाप्ति के लिए प्रभावी पग उठाये जायें। साथ ही, राष्ट्र के सैनिकीकरण तथा प्रतिरक्षा-सामर्थ्य की वृद्धि के लिए प्रयत्न किया जाय जिससे चीन के साथ शक्ति संतुलन बना रहे क्योंकि भावी चीनी आक्रमणों के विरुद्ध यही एकमेव गारंटी है।

[1 जून 1960; दिल्ली, के०का०स०]

60.20. भावी हमले की चीनी तैयारी

गुप-चुप की नीति—नेहरू-चाऊ वार्ता के बाद और अब भी जबकि भारत और चीन के बीच सरकारी स्तर पर बातचीत हो रही है, कम्युनिस्ट चीन का भारत पर नकशों और सैनिक माध्यम से आक्रमण जारी है। कार्य समिति इस पर गहरी चिंता व्यक्त करती है। चीन-नेपाल संधि के बावजूद नेपाल पर भी चीन के ऐसे ही हमले हो रहे हैं। इस सबसे जनसंघ द्वारा प्रकट की गई इस आशंका की ही पुष्टि होती है कि चीन के लिखित या मौखिक आश्वासनों पर विश्वास नहीं किया जा सकता और वह भारत के साथ अपनी बातचीत को इसलिए लम्बा खींच रहा है, जिससे उसे तिब्बत में अपनी सैनिक एवं राजनीतिक स्थिति को और मजबूत करने तथा भारत की दिशा में और आगे बढ़कर हमला करने की तैयारी करने के लिए समय मिले। सरकारी बातचीत के दायरे में, समूचे उत्तरी क्षेत्र को शामिल करने की जो घोषणा प्रधानमंत्री ने की है, वह तो और ज्यादा चौंकाने वाली है। इससे इस मामले में जनसंघ की गंभीरतम आशंकाओं की पुष्टि हो गई है।

कम्युनिस्ट चीन की इन सैनिक तैयारियों और सैनिक अतिक्रमणों के साथ-

साथ उसकी भारतीय एजेंट (भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी) ने भारत की तिब्बत से मिलने वाली सीमाओं पर भारत के खिलाफ एक खतरनाक राजनीतिक हमला बोला है। सीमावर्ती क्षेत्रों में कम्युनिस्ट क्रमबद्ध रूप से, चीन-समर्थक और भारत विरोधी वातावरण तैयार कर रहे हैं।

बार-बार चेतावनी देने और मांग करने के बावजूद, भारत सरकार बाहरी और भीतरी सैनिक तथा राजनीतिक हमलों का सामना करने को तैयार नहीं हुई। हिमालय के जिन लगभग 2 दर्जन दर्रों से घुसकर चीनियों ने भारत पर हमला किया, उन दर्रों की किलेबंदी और उनकी रक्षा के लिए ठोस और प्रभावशाली कदम उठाने के बजाय, वह यह कहकर भारतीय जनता के हौसले पस्त करने और उसे चुप बैठा देने का प्रयत्न कर रही है कि सशस्त्र सेनाएं स्थिति का सामना करने में समर्थ नहीं हैं। सरकार जानबूझकर आक्रमण से संबद्ध तथ्यों को भी छिपा रही है। 3 जून को उपुसी (अरुणांचल या नेफा) पर हुए चीनी हमले को अगस्त तक जिस तरह छिपाये रखा गया वह गुपचुप की नीति का एक नमूना है।

केन्द्रीय कार्य समिति अपनी यह मांग दोहराती है कि चीनी हमलावरों ने भारत के जिस क्षेत्र पर बलात-कब्जा जमा रखा है, वहां से उन्हें निकाल बाहर करने के लिए ठोस एवं प्रभावशाली कदम अविलम्ब उठाये जायें तथा चीन के भावी हमलों को रोकने तथा राष्ट्र की प्रतिरक्षा व्यवस्था को मजबूत करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाये जायें।

(1) भारत की सैनिक सामर्थ्य को बढ़ाने के प्रयत्नों को विशेष रूप से तेज किया जाय और हिमालय के उन सब दर्रों की मजबूती से किलेबंदी की जाय जिनसे होकर चीनी हमलावर भारत की ओर बढ़े हैं। हिमालय पर अग्रिम चौकियां स्थापित करने और इन चौकियों को मैदानों से सड़कों तथा अन्य प्रकार के संचार साधनों से जोड़ने के लिए अविलम्ब कदम उठाये जाने चाहिए।

(2) भारतीय राष्ट्रवाद और देशभक्ति की आवाज को पुनरुज्जीवित करने और सब युवकों को सैनिक प्रशिक्षण देने के लिए सब कदम उठाये जाने चाहिए।

(3) सीमावर्ती क्षेत्रों में कम्युनिस्टों की गतिविधियों को दृढ़ता एवं प्रभावशाली ढंग से रोकने के साथ-साथ इन क्षेत्रों में रहने वाली जनता का तेजी से आर्थिक विकास करने और उसमें सांस्कृतिक पुनर्जागरण लाने के लिए भी प्रयत्न किये जाने चाहिए जिससे वह कम्युनिस्ट प्रभावों से मुक्त रह सकें। वहां का इस तरह विकास किया जाना चाहिए जिससे उसमें शेष भारत में रहने वाले अपने बंधुओं के साथ भावात्मक लगाव की भावना जागे।

(4) चीन की ओर से बराबर हमले होते रहने और भारत सरकार की ओर से बार-बार की गई घोषणाओं के बावजूद बातचीत के दायरे में समूचे उत्तरी सीमांत क्षेत्र को शामिल करने की चीन की ओर से जारी कोशिशों को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय सरकारी स्तर पर जो बातचीत हो

रही है उससे कोई लाभ होने वाला नहीं। अतः इसे खत्म किया जाना चाहिए। इस बात को बहाना बनाकर चीनी आक्रमण के असली मुद्दे से जनता का ध्यान हट रहा है।

[28 अगस्त 1960; हैदराबाद, मा०प्र०स०]

61.02. भारत-चीन वार्ता की असफलता

भारत की सीमाओं पर चीनी अतिक्रमण के संदर्भ में भारत और चीन के शासनाधिकारियों द्वारा दिये गये प्रतिवेदन के संबंध में जो कुछ अभी तक ज्ञात हुआ है उससे जनसंघ की शंकाएं साधार सिद्ध हुई हैं। स्पष्ट है कि वार्ता विफल हो गई है तथा इस बात की चिंता न करते हुए कि चीनी अधिकारी अपने दावों के संबंध में कोई पुरालेख, तथ्य अथवा साक्षी नहीं दे पाये हैं, फिर से उन्होंने एक बार अपने पुराने दावों को केवल दोहराया है और इस प्रकार प्रतिवेदन के परिशिष्ट के रूप में एक अलग से वृत्त जोड़ दिया है। सबसे खराब बात तो यह है कि इस 8 महीने की अवधि में चीन ने अधिकृत भूभाग में सड़कें बनाकर तथा किलेबंदी करके अपनी स्थिति को सुदृढ़ किया है। वार्ता के बीच में भी चीन की हवाई घुसपैठ निरंतर जारी रही है।

यह खेद का विषय है कि चीन की हठधर्मी एवं उसके आक्रमण की समाप्ति के लिए वार्ताओं की विफलता का अनुभव होने के बाद भी भारतीय शासन उसके साथ नरम नीति बरतता रहा है। प्रधानमंत्री द्वारा संयुक्त राष्ट्रसंघ में चीन के आक्रमण का उल्लेख, विवाद मात्र कहकर करना और शासनाधिकारियों की रिपोर्ट को प्रकाशित करने में अब भी झिझकना अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है।

भारतीय जनसंघ का मत है कि चीन को अपने दावों को सिद्ध करने का पूर्ण अवसर प्राप्त होने के उपरांत भी यदि वह असफल रहा है तो भारत शासन द्वारा चीन के कब्जे से भारत के भूभाग की मुक्ति के लिए सभी संभव उपायों का अवलम्बन पूर्णतः न्यायसंगत है। अतः जनसंघ अपनी इस मांग को दोहराता है कि शासन भारत की सीमाओं के संरक्षण के अपने दायित्व का निर्वाह करने के लिए चीनी आक्रमणकारी को देश की भूमि से बाहर निकालने के लिए प्रभावी पग उठाये।

[1 जनवरी 1961; लखनऊ, नवां सा०अ०]

61.03. भारत-पाक परस्परावलम्बन की मान्यता

पाकिस्तानी रवैया—पाकिस्तान की निर्मिति के मूल कारणों से, उसके जन्मकाल की परिस्थिति से, एवं उसके जन्मदाताओं द्वारा निर्धारित उद्देश्यों से, पाकिस्तान की भारत के प्रति नीति प्रारंभ से ही प्रभावित रही है। इस नीति के प्रमुख आधार निम्नलिखित हैं :

(1) प्रत्येक क्षेत्र में भारत-पाक-परस्परावलम्बन को अमान्य करने के

लिए भारत से भिन्न, यहां तक कि अपने स्वयं के हितों के विरुद्ध भी, विदेश नीति का अवलम्बन।

(2) भारत के मुसलमानों की अपने प्रति निष्ठा बनाये रखने के हेतु अपनी अंतर-बाह्य नीतियों से बराबर यह प्रदर्शन करना कि वह भारत को दबाकर उससे वित्तदान और भूमिदान तथा अन्य विषयों में अधिक सुविधाएं ले सकता है। इस प्रकार मुस्लिम प्रभुत्व प्रतिष्ठापित करने की आकांक्षा भारत के मुसलमानों में जगाये रखना। पाकिस्तान से निरंतर हिंदुओं का निष्कासन इसी नीति का अंग है।

(3) संपूर्ण विश्व में विशेषकर पश्चिमी एशिया के देशों में झूठे-सच्चे सभी संभव उपायों से भारत विरोधी भावनाएं भड़काना।

इसके विपरीत भारत की नीति प्रमुखतया पाकिस्तान से मित्रता एवं सद्भावना प्राप्त करने की इच्छा एवं पाकिस्तान के निर्माण के आधारभूत द्विराष्ट्रवाद के सिद्धांत को अमान्य करने के उद्देश्य से निर्धारित हुई है।

पिछले 13 वर्षों के भारत-पाक संबंधों में यह मूल विरोध दिखाई देता है। जबकि भारत सरकार, भारत के हितों के विपरीत पाकिस्तान को एक के बाद एक सुविधाएं दे रही है, पाकिस्तान ने बराबर भारत के प्रति शत्रुता एवं अपप्रचार की नीति अपनाई है। भारत द्वारा दी गई सुविधाओं से उसकी आक्रामक प्रवृत्ति, हड़पने की भूख और शरारत की शक्ति अधिकाधिक बढ़ी है।

नहरी पानी व सीधी रेल—नहरी-पानी संधि तथा पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान के बीच रेल चलाने का समझौता, जिसके विवरण अभी ज्ञात नहीं हुए हैं, भारत-पाक संबंधों के ताजा उदाहरण हैं। नहरी-पानी के संबंध में भारत की स्थिति मजबूत थी। अपने देश में से बहने वाली पंजाब की नदियों के पानी का उपयोग करने का भारत का अधिकार (कानूनी आधार व नदियों के प्रवाह के आधार पर) अधिक दृढ़ था। किंतु भारत ने नहरी पानी संधि करके न केवल अपने अधिकारों का स्वयं परित्याग किया अपितु पाकिस्तान को पर्याप्त बांध निर्माण के लिए 83 करोड़ रु० दिया तथा अपने थोड़े से अंश में से भी आगे 13 वर्ष तक पाकिस्तान को (पंजाब और राजस्थान की जनता की चिंता न करते हुए) पानी देना स्वीकार कर लिया। सीधी रेल के समझौते से भारत में जासूस और हथियार भेजने की तथा भारत के मुसलमानों को (जिनमें एक वर्ग ने फिर से राष्ट्र विरोधी व पाकिस्तानपरक कार्यवाहियां प्रारंभ कर दी हैं) प्रभावित करने की पाकिस्तानी क्षमता बढ़ जायेगी।

इन सब सुविधाओं के बदले में भारत को पाकिस्तान से क्या मिला ? वह यह कि उसने काश्मीर में सैनिक कार्यवा ही की धमकी दी है, गोवा के प्रश्न पर संयुक्त राष्ट्रसंघ में पुर्तगाल का समर्थन किया है और भारत के विरुद्ध सम्पूर्ण विश्व में तेजी से अपप्रचार प्रारंभ कर दिया है।

सम-सहयोग के आधार पर दृढ़ व यथार्थवादी नीति—यथार्थ स्थिति

एवं पिछले 13 वर्षों के अनुभव के बाद यह कहा जा सकता है कि भारत की पाकिस्तान के प्रति नीति मूलतः गलत रही है। अपने राष्ट्रीय हितों और सुविधाओं के बलिदान से भारत को पाकिस्तान की मैत्री और सद्भावना प्राप्त नहीं हो सकी। बल्कि इसका उल्टा ही परिणाम हुआ है। यह समझना गलत होगा कि भारत-पाक विवादों को एक-एक करके पाकिस्तान के पक्ष में हल करने से ऐसे प्रश्नों को जो हमारे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, सुलझाने का वातावरण निर्मित हो सकेगा। जैसा कि नहरी-पानी संधि से पता लगा है कि इस नीति का उल्टा असर होगा। सम-सहयोग के आधार पर सब मामलों को एक साथ सुलझाने से ही ठीक प्रभाव हो सकता है।

भारत और पाकिस्तान की भौगोलिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक एकता के आधार पर दोनों राज्यों के परस्परावलम्बन को मानकर आपस के संबंधों का निर्माण किया जाय तब ही भारत-पाक मैत्री पैदा हो सकती है और टिक सकती है। भारत की ओर से सम-सहयोग के आधार पर दृढ़ एवं यथार्थवादी नीति ही पाकिस्तान के नेताओं को इसकी आवश्यकता की अनुभूति करा सकती है।

[1 जनवरी 1961; लखनऊ, नवां सा०अ०]

61.09. अधिक प्रभावी संयुक्त राष्ट्रसंघ

पैरिस के शिखर-सम्मेलन की विफलता के पश्चात् अंतर्राष्ट्रीय स्थिति में और अधिक बिगाड़ हुआ है। विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं को राष्ट्रसंघ के घोषणा-पत्र में निहित सिद्धांतों के आधार पर परस्पर वार्ता द्वारा अथवा राष्ट्रसंघ के माध्यम से हल करने के बजाय इन समस्याओं को लेकर शीतयुद्ध को भड़काने तथा विश्व को प्रत्यक्ष युद्ध के कगार तक लेजाने की प्रवृत्ति बढ़ी है। अमरीका और रूस जिनके हाथों में युद्ध तथा शांति की कुंजी है, अपने महान् दायित्वों को समझने में विफल रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में लड़ाकू कम्युनिस्ट चीन के उदय से जो कि 'युद्ध की अनिवार्यता' के सिद्धांत का प्रतिपादन करता है व तदनुसार आचरण भी करता है, विश्व के इस अपेक्षाकृत शांत भाग में नये तनाव उत्पन्न हुए हैं, जो कभी भी उग्र रूप धारण कर सकते हैं।

वस्तुतः यह बड़े आश्चर्य तथा चिंता का विषय है कि विश्व के दोनों शक्ति-गुट इस बात को भली भांति समझते हुए भी कि अणुयुद्ध का अर्थ मानवता का विनाश होगा, शस्त्रों की खतरनाक दौड़ में लगे हुए हैं और (युद्ध के मूल कारण) प्रभुत्व की आकांक्षा के परित्याग के लिए तैयार नहीं हैं। अफ्रीका में स्वतंत्रता की जो एक नई लहर उठी है उसने पश्चिमी साम्राज्यवाद को अपने पांव पीछे हटाने के लिए विवश किया है, किंतु पुर्तगाल, फ्रांस, स्पेन आदि देश अब भी समय की गति को पहचानने से इनकार कर रहे हैं। दूसरी ओर अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिज्म के रूप में एक नया तथा अधिक खतरनाक साम्राज्यवाद अपना विस्तार कर रहा है जिसका सबसे ताजा शिकार भारत का शांतिप्रिय पड़ौसी तिब्बत है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ का स्वार्थपूर्ण उपयोग—संयुक्त राष्ट्रसंघ ने विश्वशांति को जैसे-तैसे कायम रखने में अपना योगदान दिया है, किंतु उसकी अपनी सीमाएं हैं जो उसके ढांचे में अन्तर्निहित हैं और कुछ हद तक विश्व की वर्तमान असंतुलित अवस्था को प्रतिबिंबित करती हैं। कांगो की हाल की घटनाओं से यह स्पष्ट हो गया है कि यदि राष्ट्रसंघ को विश्व समस्याओं के समाधान का समर्थ उपकरण बनाना है तो उसकी शक्ति, प्रतिष्ठा तथा प्रभाव में वृद्धि होनी चाहिए। बड़ी शक्तियों द्वारा राष्ट्रसंघ को अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए माध्यम बनाये जाने के वर्तमान प्रयत्न, उसके आधार को ही समाप्त कर देंगे। वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय तनाव को कम करने तथा स्थायी विश्वशांति की नींव डालने के लिए निम्न उपायों का अवलंबन आवश्यक है :

(1) कांगो, लाओस आदि संकट क्षेत्रों में बड़ी शक्तियां हस्तक्षेप करना बंद करें और इन समस्याओं का हल परस्पर वार्ता द्वारा अथवा राष्ट्रसंघ के जरिये ढूंढा जाय।

(2) उपनिवेशवाद को, फिर वह कहीं भी और किसी भी रूप में क्यों न हो, समाप्त किया जाय और वहां की जनता को अपनी इच्छा के अनुसार अपना शासन चुनने की स्वतंत्रता दी जाय।

(3) निशस्त्रीकरण की एक योजना बनाई जाय जिसमें आकस्मिक आक्रमण को निर्मूल करने के लिए नियंत्रण तथा निरीक्षण की पर्याप्त एवं प्रभावी व्यवस्था की जाय। अमरीका और रूस के बीच निशस्त्रीकरण के संबंध में जेनेवा में जो वार्ता चल रही थी और जिसको कि असहयोग के फलस्वरूप भंग कर दिया गया था, उसे पुनः आरंभ किया जाय और यदि आवश्यक हो तो उसमें अन्य राष्ट्रों को भी शामिल किया जाय।

(4) आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए देशों, विशेषतः अफ्रीका के नव स्वतंत्र देशों के विकास के लिए सभी समृद्ध राष्ट्र, संयुक्त राष्ट्रसंघ के माध्यम से प्रयत्नशील हों जिससे पुनर्निर्माण का कार्य बिना राजनीतिक दबाव अथवा बाहरी हस्तक्षेप के पूरा हो सके।

राष्ट्रसंघ में छोटे-छोटे राष्ट्रों की (जिनकी विश्वशांति में गहरी रुचि निहित है) बढ़ती हुई संख्या तथा प्रभाव, अमरीका में डैमोक्रेटिक पार्टी का शासनारूढ़ होना और विश्व में न्याय एवं स्वतंत्रता के साथ शांति चाहने वाली जनता की बढ़ती आवाज—यह सब अंतर्राष्ट्रीय स्थिति में सुधार की आशा बंधाते हैं। विश्व के राजनीतिज्ञों की नीतिमत्ता आज कसौटी पर कसी जा रही है। उनकी सफलता अथवा विफलता पर मानवता का भविष्य निर्भर है।

[1 जनवरी 1961, लखनऊ; नवां सा०अ०]

62.03. चीन की बढ़ती शत्रुता

भारत और चीन के बीच हाल ही में जो पत्रव्यवहार हुआ उससे चीन द्वारा भारतीय सीमा के अतिक्रमण के दो चिंताजनक तथ्य उभार के साथ सामने आते हैं कि एक तो चीन का भारत पर आक्रमण बढ़ता जारहा है तथा दूसरे भारत शासन की इस संबंध में नीति पूर्ववत् दुर्बल एवं अप्रभावी है।

भारत भूमि में चीन ने अपने आक्रमणों के साथ-साथ भारत के विरुद्ध आरोप और अपप्रचार का अभियान भी प्रारंभ कर दिया है। सभी राजनयिक सुविधाओं एवं आचरण नियमों का उल्लंघन करके भारत स्थित चीनी दूतावास भी इस कुत्सित प्रचार में संलग्न है। "चाइना टुडे" के हाल के अंक में भारत विरोधी लेखों का प्रकाशन इसका एक ज्वलंत उदाहरण है। यह अत्यंत ही क्षोभ का कारण है कि भारत सरकार अपने ही देश में चलने वाली इन भारत विरोधी कार्यवाहियों को शांति के साथ सहन करती रही है।

चीन की इस धमकी का कि भारत ने यदि अपनी सीमा चौकियों से रक्षक नहीं हटाये तो वह बल प्रयोग करेगा, प्रधानमंत्री ने जो प्रत्युत्तर दिया है उसका स्वागत है। किंतु चीन के आक्रमण का मुकाबला कोरी साहसपूर्ण घोषणाओं अथवा कड़े विरोध-पत्रों से नहीं किया सकता। भारतीय प्रतिनिधि सभा का मत है कि हमारी सीमा सुरक्षा को तेजी के साथ सुदृढ़ करते हुए चीन द्वारा आक्रांत भूभाग की मुक्ति के लिए क्रियात्मक पग उठाये जायें।

चीन के साथ दौत्य संबंधों का विच्छेद—सभा यह भी अनुभव करती है कि हमारे पीकिंग स्थित दूतावास को जिस भेदभावपूर्ण बंधनों में काम करना पड़ता है उससे अब उसका कोई उपयोग नहीं बचा है, प्रत्युत समय-समय पर एक शत्रु शासन द्वारा वहाँ के भारतीय कर्मचारियों का अपमान और प्रतारणा ही होती रहती है। भारतीय प्रतिनिधि सभा मांग करती है कि चीन की आक्रमणकारी नीति के प्रति प्रबल रोष प्रकट करने के लिए चीन के साथ दौत्य संबंधों का विच्छेद कर भारत अपनी क्रियात्मक नीति का सूत्रपात करे।

[24 मई 1962; कोटा, मा०प्र०स०]

62.04. पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यक

पूर्वी बंगाल में हाल में हिन्दुओं के विरुद्ध जो व्यापक उपद्रव हुए हैं उनसे एक बार पुनः यह स्पष्ट हो गया है कि पाकिस्तान के इस्लामी राज्य में अन्य मतावलंबियों के लिए कोई स्थान नहीं है। ये दंगे आकस्मिक नहीं अपितु एक सुनियोजित षड्यंत्र के परिणाम हैं, जिनमें पाकिस्तान के उच्चतम अधिकारी भी सम्मिलित हैं। पाकिस्तान के कलकत्ता स्थित उप-उच्चायुक्त का मुर्शिदाबाद (जहां किसी भी प्रकार का उपद्रव नहीं हुआ) तथा माल्दा जाना और वहाँ के बारे में झूठी व अतिरंजित खबरों का पाकिस्तान के समाचारपत्रों में छपवाकर मुस्लिम मदांधता को जानबूझ कर भड़काना, पाक प्रधान अयूब तथा पूर्वी बंगाल के राज्यपाल के द्वारा हिन्दुओं के विरुद्ध विषवमन और राजशाही, ढाका तथा अन्य स्थानों पर खुलेआम हिन्दुओं पर व्यापक हमले, लूटमार तथा अग्निकांड इस षड्यंत्र की कड़ियां मात्र हैं।

पाक आधिपत्य के विरुद्ध पूर्वी बंगाल का असंतोष—इन उपद्रवों का उद्देश्य जहां एक ओर पाकिस्तान की सैनिक तानाशाही और पश्चिमी पाकिस्तान के आधिपत्य के प्रति पूर्वी बंगाल की जनता के असंतोष को हिन्दुओं के विरुद्ध मोड़ने का था, वहां दूसरी ओर काश्मीर के प्रश्न पर भारत को दबाने के लिए सम्पूर्ण क्षेत्र में अशांति पैदा करने की धमकी को कार्यान्वित करना था। स्पष्ट है कि आज पाकिस्तान में बसे हुए हिन्दुओं की अवस्था बंधक जैसी हो गई है। उनके सम्मुख इसके अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं है कि वे बेघरबार होकर भारत चले आयें। भारत सरकार तथा भारतीय जनता, जो पाकिस्तान में हिन्दुओं की सुरक्षा तथा सम्मान के लिए वचनबद्ध है, इस स्थिति के प्रति उदासीन नहीं रह सकती। विभाजन इसी शर्त पर स्वीकार किया गया था कि पाकिस्तान में हिन्दुओं के साथ समानता का व्यवहार किया जायेगा और वे सब प्रकार से सुरक्षित रहेंगे। नेहरू-लियाकत समझौते में इसी बात की पुनर्घोषणा की गई थी। किन्तु पाकिस्तान ने हिन्दुओं को घटिया श्रेणी का नागरिक बनाकर और उनकी समाप्ति का निरंतर योजनाबद्ध अभियान चलाकर, जिसके अंतर्गत 14 वर्षों में 60 लाख से अधिक हिन्दू पूर्वी पाकिस्तान को छोड़कर भारत आ चुके हैं, यह सिद्ध कर दिया है कि वह अपने आश्वासनों का निर्वाह करने के लिए तैयार नहीं है।

पाकिस्तान से भूमि की मांग—इस स्थिति में भारत के सम्मुख इसके सिवा कोई मार्ग नहीं है कि वह पूर्वी पाकिस्तान में बचे हुए हिन्दुओं को बसाने के लिए तत्पर हो और इस हेतु पाकिस्तान से भूमि की और वहां छोड़ी गई हिन्दुओं की सम्पूर्ण सम्पत्ति के लिए पूर्ण क्षति-पूर्ति की मांग करे।

[24 मई 1962; कोटा, मा०प्र०स०]

62.05. भारत-नेपाल संबंध

हिमांचल के अंचल में विद्यमान नेपाल राज्य भारत के साथ युगों से निकट के सांस्कृतिक, आर्थिक एवं सामाजिक सूत्रों में आबद्ध है। दोनों के बीच सहयोग और मेल उनके भौगोलिक एवं राजनीतिक संदर्भ में अनिवार्य रहा है। किन्तु पिछले कुछ दिनों से इन संबंधों में कुछ गांठ-सी पड़ती जा रही है। उसका लाभ उठाकर चीन एवं उसके कम्युनिस्ट हस्तक भारत और नेपाल के बीच खाई पैदा करने और नेपाल को चीन के प्रभाव क्षेत्र में खींचने की कोशिश कर रहे हैं। इतिहास का यह तथ्य है कि चीन ने पिछले 200 वर्षों में नेपाल को हड़पकर अपने साम्राज्य में मिलाने के लिए तीन बार आक्रमण किया। चीन की नेपाल के प्रति हाल में अपनायी गई कूटनीति एवं उसके प्रति नेपाली प्रतिक्रिया में भारत और नेपाल दोनों की सुरक्षा के लिए निहित संकटों की संभावनाओं को यह ऐतिहासिक

तथ्य स्पष्ट करता है। भारत की नेपाल के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने की कोई इच्छा नहीं है। फिर भी आरोप लगाया गया है कि नेपाल सरकार के विरुद्ध अपने आंदोलन एवं हिंसात्मक कार्यवाहियों के लिए नेपाली कांग्रेस भारत की भूमि का उपयोग कर रही है। भारत शासन ने इन आरोपों का बराबर खंडन किया है। किन्तु स्थिति अधिक बिगड़ती जा रही है तथा दोनों सरकारों के बीच एक अविश्वास का वातावरण पैदा हो गया है।

भारतीय प्रतिनिधि सभा दोनों देशों के बीच के वर्तमान बिगड़ते हुए संबंधों पर चिन्ता प्रकट करती है। यह स्थिति न तो दोनों देशों की राजनीतिक तथा भौगौलिक स्थिति से मेल खाती है और न उनकी जनता की (परिवर्तनशील राजनीतिक स्थितियों से भिन्न एक स्थायी आधार पर जिनकी सांस्कृतिक एकता अवस्थित है) भावनाओं और इच्छा के ही अनुकूल है। अतः प्रतिनिधि सभा भारत और नेपाल दोनों ही देशों की सरकारों से अपील करती है कि वे एक दूसरे के प्रति अधिक सद्भावनापूर्ण दृष्टिकोण लेकर चलें तथा दोनों की सुरक्षा और विकास के व्यापक हितों को ध्यान में रखकर परस्पर के सांस्कृतिक एवं आर्थिक सूत्रों को सुदृढ़तर करने के लिए सभी सम्भव उपाय अपनायें।

[24 मई 1962; कोटा, भा०प्र०स०]

62.10. चीन का बढ़ता आक्रमण

चीन का आक्रमण बढ़ता जाता है। अब तक यह लद्दाख तक ही सीमित था, लेकिन अब वह पूर्व की ओर फैल रहा है और चीनी सैनिक नेफा में घुस गये हैं, जिसके बारे में खयाल किया जाता था कि वह पूरी तरह सुरक्षित है। राष्ट्र में गहरी चिन्ता फैल गई है।

संभावित आक्रमणकारियों के झुण्ड—हमारे भविष्य को सुरक्षित रखने के लिए सरकार को निम्नलिखित कदम तत्काल, पूरी तत्परता से और पूरी शक्ति से उठाने चाहिए :

(1) उपूसी (नेफा) से चीनियों को निकाल बाहर किया जाय और सतत चौकसी रखी जाय जिससे और चीनी घुसपैठ न हो सके।

(2) भारत-तिब्बत सीमा के मध्यक्षेत्र की सैनिक चौकियों में पर्याप्त मात्रा में सैनिक बढ़ाये जायें जिससे चीनी इस क्षेत्र में घुसपैठ न कर सकें। भूतान और सिक्किम की पूर्ण सुरक्षा की ओर अविलम्ब ध्यान दिया जाना चाहिए।

(3) यह बड़े खेद का विषय है कि लद्दाख में चीनी हमला कई वर्षों से जारी रहने के बावजूद सरकार ने अब तक चौकियों, गश्ती दलों और सैनिक चौकियों की वहां शृंखला नहीं बिछाई। अब भी समय है कि सरकार ऐसे कदम उठाये और लद्दाख के शेष क्षेत्र को सुरक्षित बनाये।

प्रभावशाली सुरक्षा और हमले को पूरी तरह खत्म करने के लिए भारत को प्रतिरक्षा की इतनी पक्की तैयारी करनी चाहिए जिससे सीमा के दूसरी ओर

चीन द्वारा की जा रही तैयारियों का पूरी तरह सामना किया जा सके।

(4) हमारे सीमावर्ती प्रदेश को 100 मील भीतर तक, कम्युनिस्टों और उन पंचमांगियों से खाली कराया जाय जिनकी चीन समर्थक प्रचारात्मक गतिविधियों का पता है।

(5) सैनिक साज-सामान तैयार करने वाले हमारे सभी कारखानों से कम्युनिस्टों और उन सब लोगों को निकाला जाय जिनकी सहानुभूति हमलावरों के साथ है।

(6) हमारे रक्षा उद्योगों को इतना सक्षम किया जाय कि वे बमवर्षक और परिवहन विमान, टैंक, भारी तोपें और दूसरे परंपरागत हथियार और गोला-बारूद बनाने लगें।

(7) अंततः, राष्ट्र को और विशेषकर युवकों को मनोवैज्ञानिक तथा अन्य प्रकार से तैयार किया जाय जिससे वे संभावित हमलावर झुण्डों के विशाल और निर्मम आक्रमण के खिलाफ प्रतिरक्षा की सब आवश्यकताएं पूरी कर सकें।

[29 सितम्बर 1962; राजमुन्द्री, के०का०स०]

62.14. चीन का भारी आक्रमण

केन्द्रीय कार्य समिति लद्दाख और नेफा में चीन के भारी आक्रमण से उत्पन्न स्थिति के प्रति गहरी चिन्ता व्यक्त करती है। इन क्षेत्रों में हमारी आरम्भिक विफलताएं मुख्यतया हमारी सेना के संख्याबल में और शस्त्र सज्जा की मात्रा तथा श्रेष्ठता में कमी के कारण हैं। सैनिक तैयारी की इस कमी का कारण नेहरू सरकार द्वारा चीन के मनसूबों, तैयारियों और अतिक्रमणों का सम्यक आंकलन न कर सकना है। शासन ने सैनिक दृष्टि से विचार नहीं किया और इसलिए सैनिक तैयारियाँ नहीं की गई थीं। वह मुख्यतया शांतिपूर्ण इरादों व प्रयत्नों के ही भरोसे रहा। फलतः प्रारम्भ में हम अग्रिम क्षेत्रों में न तो सैनिक चौकियां बना पाये और न राष्ट्र के सभी साधनों को सैनिक दृष्टि से संगठित कर पाये।

अब जबकि सैनिक दृष्टि से विचार प्रारम्भ हो गया है और जनता जागृत हो गई है, शासन का यह अत्यावश्यक कर्तव्य है कि वह आक्रमण से सुरक्षा के हेतु अपनी सज्जा की कमी को तेजी से पूरा करे। इस दृष्टि से जनसंघ निम्नलिखित सुझाव देता है :

(1) **सैन्यबल**

(क) सभी युद्धक्षम अवकाश प्राप्त सैनिकों को तुरंत वापस बुलाया जाय जिससे ज्वार की भांति सेना को झोंकने की चीनी रणनीति का प्रतिकार किया जा सके।

(ख) विदेशों से सभी भारतीय सेना बुला ली जाय।

(ग) सीमांत क्षेत्रों, बड़े नगरों और औद्योगिक केन्द्रों में अनिवार्य सैनिक

भर्ती की जाय जिससे हमारे सैन्यबल में किसी प्रकार की कमी न रहे।

(2) **सैनिक उपकरण**—मित्र देशों से शस्त्रास्त्र प्राप्त करने के संबंध में जनसंघ बलपूर्वक मांग करता है कि :—

(क) केवल छोटे शस्त्र ही नहीं, बल्कि मझले और भारी शस्त्र और अन्य उपकरण इतनी मात्रा में प्राप्त किये जायें जिससे बढ़ती हुई भारतीय सेना की वर्तमान तथा आगे की आवश्यकता की पूर्ति हो सके।

(ख) वायु और नौसेना की कमी की पूर्ति चीन और पाकिस्तान दोनों की तुलना में की जाय जिससे हम किसी आकस्मिक संयुक्त हमले से बच सकें।

(ग) इस संबंध में अपनी ओर से भुगतान की कोई शर्त न रखी जाय।

(3) **कूटनीतिक क्षेत्र**—कूटनीति के क्षेत्र में जनसंघ का सुझाव है कि :

(क) चीन के साथ राजनयिक संबंध तोड़ लिए जायें और उसके सभी वाणिज्य दूतावास बंद कर दिये जायें जिससे वे जासूसी और भेद-नीतिक कार्यवाहियाँ न कर सकें।

(ख) भारत और नेपाल के बीच विद्यमान गलतफहमियों को दूर किया जाय।

(ग) दक्षिणी-पूर्वी एशिया के सभी देशों के साथ जिन पर चीन का समान संकट है, निरंतर विचार-विमर्श होता रहे।

(4) **तिब्बती स्वतंत्रता सेनानियों की सहायता**—भारत की सीमाओं की स्थायी सुरक्षा की दृष्टि से जनसंघ का सुनिश्चित मत है कि भारत सरकार तिब्बत की प्रभुसत्ता और दलाईलामा की निर्वासित सरकार को स्वीकार करे। इससे तिब्बत के स्वतंत्रता सेनानियों को प्रोत्साहन मिलेगा और तिब्बत में चीन के सैनिक अड्डों और रसद मार्गों को नष्ट करने की सुविधा प्राप्त होगी व तिब्बत-वासियों के साथ हम हिमालय पार जाकर चीनियों को तिब्बत के बाहर कर पायेंगे।

(5) **आक्रमणकारी से वार्ता नहीं**—भारतीय जनसंघ शासन को सतर्क करता है कि वह किसी भी प्रकार की मध्यस्थता अथवा समझौता वार्ता की चर्चा न करे। इससे चीनी आक्रमण का प्रतिकार करने के हमारे संकल्प पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। हमें तो आज सम्पूर्ण ध्यान और शक्ति चीनी आक्रमणकारियों को बाहर खदेड़ने पर केन्द्रित करनी चाहिए।

(6) **कम्यूनिस्टों से सावधान**—आंतरिक भेद और विग्रह को रोकने के के लिए जनसंघ का प्रस्ताव है कि :

(क) प्रतिरक्षा समितियों और युद्ध-प्रयत्नों में किसी भी स्तर पर और किसी भी रूप में कम्युनिस्टों को न लिया जाय;

(ख) सीमांत क्षेत्रादि, प्रतिरक्षा उद्योग, संचार, परिवहन और अन्य आवश्यक सेवाएं तथा महत्वपूर्ण क्षेत्र कम्युनिस्ट और उनके सहयात्रियों से मुक्त किये जायें; और

(ग) भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी पर प्रतिबंध लगाने का साहस, सरकार दिखाये अथवा फिर कम से कम संकटकालीन स्थिति तक कम्युनिस्ट पार्टी को गैर-कानूनी घोषित करे।

(7) **सर्वदलीय सहयोग**—जनता का विश्वास सम्पादन करने और सभी देशभक्त दलों का प्रभावी सहयोग प्राप्त करने की दृष्टि से जनसंघ का सुझाव है कि मंत्रिमंडल की संकटकालीन समिति के साथ अन्य दलों के प्रतिनिधियों को भी सम्बद्ध किया जाय।

(8) **प्रतिरक्षा उद्योगों में उत्पादन**—प्रधानमंत्री द्वारा प्रतिरक्षा मंत्रालय अपने हाथ में लेने की हम सराहना करते हैं, किन्तु प्रतिरक्षा उद्योगों को श्री कृष्णमेनन के अधिकार में छोड़ना ठीक नहीं समझते, क्योंकि अभी तक इसी क्षेत्र में हमारी सर्वाधिक त्रुटियाँ रही हैं। जनसंघ प्रधानमंत्री से आग्रह करता है कि प्रतिरक्षा से संबंधित सभी मामलों से श्रीकृष्णमेनन को सर्वथा पृथक रखा जाय।

(9) **पंचमांगी**—भारतीय जनसंघ की मांग है कि पीकिंग और पिण्डी दोनों के पंचमांगियों पर कड़ी नजर रखी जाय और भारत तथा पाकिस्तान के बीच के अरक्षित सीमांत पर रक्षा व्यवस्था को दृढ़ किया जाय।

(10) **तृतीय योजना का पुनर्निर्धारण**—तृतीय पंचवर्षीय योजना का प्रतिरक्षा की दृष्टि से पुनर्निर्धारण किया जाय और भारत के रक्षा-सामर्थ्य से असंबंधित सभी योजनाओं को स्थगित कर दिया जाय। खर्चीले और शान-शौकत के सभी कामों को रद्द करके सरकार संयम और बचत का उदाहरण प्रस्तुत करे।

भारतीय जनसंघ युद्धक्षेत्र में जवानों की अद्वितीय वीरता और धैर्य का अभिनंदन करता है। जनता ने भी इस अभूतपूर्व राष्ट्रीय संकट के समय जिस मनोभाव का परिचय दिया है, वह समाधान का विषय है। इस संकट की घड़ी में चीनी आक्रमणकारियों के विरुद्ध जो न केवल हमारी स्वतंत्रता को ही, अपितु युगों से चली आई हमारी जीवन निष्ठाओं को समाप्त करना चाहता है, जनता का वज्र-संकल्प ही हमारी सबसे बड़ी पूंजी है। भारतीय जनसंघ सभी देशवासियों का आवाहन करता है कि अपनी संपूर्ण शक्तियों से युद्धप्रयत्नों में सहयोग दें। भारत की विजय निश्चित है।

[31 अक्टूबर 1962; दिल्ली, के०का०सा०]

62.18. भारत-पाक वार्ता

भारत का विभाजन होने के उपरांत भी भारत और पाकिस्तान दोनों इतने परस्पर संबद्ध हैं कि एक के संकटापन्न होने पर दूसरा सुरक्षित नहीं रह सकता।

किंतु दुःख का विषय है कि पाकिस्तान चीन का संकट उपस्थित होने पर भी उसका अनुभव न करते हुए, भारत की कठिनाइयों का अनुचित लाभ उठाने के लिए प्रयत्नशील है। यहां तक कि वह कम्युनिस्ट चीन के साथ भारत के विरुद्ध मित्रता की भी बातचीत कर रहा है। जिस पाकिस्तान को कम्युनिस्ट विस्तार को रोकने के लिए पश्चिमी शक्तियों ने सब प्रकार से शस्त्र-सुसज्जित किया उनकी आंखें उसके इस उल्टे व्यवहार से खुल जानी चाहिए।

वर्तमान परिस्थिति में (पाकिस्तान द्वारा चीनी संकट की अनुभूति के अभाव में) दोनों राज्यों के बीच विद्यमान समस्याओं के हल के लिए वार्ता की उपादेयता तथा सफलता संदेहास्पद है।

समग्र समझौते का आग्रह—भारतीय जनसंघ का मत है कि यदि दोनों परस्पर अनाक्रमण संधि करके कम्युनिस्ट चीन के विरुद्ध खड़े हो जायें तो उससे परस्पर सहयोग, विश्वास और सद्भावना का वातावरण तैयार होगा। आज की अपेक्षा वह वातावरण, परस्पर की समस्याओं पर विचार करने के लिए अधिक उपयुक्त होगा। तब तक के लिए सभी प्रश्नों को यथावत् रखा जा सकता है। किंतु आज जबकि पाकिस्तान की ओर से मित्रता और सद्भावना की कोई बात न होते हुए भी दोनों राज्यों के बीच मंत्रि-स्तर पर वार्ता हो रही है, भारतीय जनसंघ भारत सरकार को यह चेतावनी देना अपना कर्तव्य समझता है कि वह पाकिस्तान के तुष्टीकरण तथा उसकी मित्रता प्राप्त करने की दुराशा में भारत के हितों का बलिदान न कर बैठे। पिछले भारत-पाक समझौतों के आधार पर जनमन में इस संबंध में आशंकाएं निर्मित हुई हैं। शासन को यह भी ध्यान में रखना होगा कि अपने मतलब के ही प्रश्नों पर विचार करने की पाकिस्तान की चाल में न फंसे। जब विचार ही करना है, तो सभी समस्याओं पर एकबारगी पूरा विचार हो जाना चाहिए, तथा समग्र-समझौते के लिए आग्रह करना चाहिए। पाकिस्तान द्वारा अविभाजित भारत के ऋण की अदायगी, निष्क्रांत संपत्ति का निपटारा तथा पूर्वी बंगाल की नदियों के जल का वितरण, पश्चिमी बंगाल, असम और त्रिपुरा में पाकिस्तानियों के अवैध प्रवेश, गुरुद्वारे और अन्य धर्म स्थानों की व्यवस्था आदि अनेक प्रश्न हैं जिनको पाकिस्तान बराबर टालता जा रहा है।

जहां तक काश्मीर का प्रश्न है, पाकिस्तान उसके एक-तिहाई भाग पर आक्रमणकारी के रूप में बैठा है। वह कब और किस प्रकार अपना आक्रमण समाप्त करेगा—यही वार्ता का विषय हो सकता है। अन्य किसी भी विषय पर यदि चर्चा की गई तो उसके देश की राजनीति पर गंभीर परिणाम हो सकते हैं।

[30 दिसम्बर 1962; भोपाल, दसवां सा०अ०]

62.21. विदेश नीति का पुनरेक्षण व पुनर्निर्धारण

यथार्थ की भूमिका का अभाव—कम्युनिस्ट चीन के प्रति भारत सरकार की नीति की असफलता ने यह स्पष्ट कर दिया है कि हमारी अंतर्राष्ट्रीय नीतियों

का निर्धारण यथार्थ की भूमिका पर और राष्ट्र के उदात्त हितों के संरक्षण की दृष्टि से नहीं हुआ। हमने विश्व के दोनों शक्तिगुटों से अलग रहने की नीति का प्रतिपादन करते हुए भी व्यवहार में स्वयं का झुकाव सोवियत गुट की ओर ही रखा। साथ ही हमने इस नीति के अनुरूप राष्ट्र को अपनी रक्षा के लिए समर्थ बनाने की दृष्टि से पर्याप्त सैन्य-सज्जा की ओर ध्यान नहीं दिया। आवश्यकता है है कि राष्ट्र की सुरक्षा के आधार पर विदेश नीति का पुनरांकलन किया जाय।

दोनों शक्तिगुटों से अलग रहने की नीति मित्र देशों से यथावश्यक सैन्य सहायता लेने के मार्ग में बाधक नहीं बनी और न यह हमें कम्युनिस्ट चीन के विस्तारवाद को रोकने के लिए सभी शांतिवादी देशों का एक नया सहयोगी संघ बनाने से रोकती है।

अतः भारत के लिए आवश्यक है कि चीन के विरुद्ध जिन राष्ट्रों ने हमारी सहायता की है उनके साथ अपने संबंध दृढ़ करते हुए तथा जो अन्य देश साथ में आ सकते हैं उन्हें सहयोगियों के रूप में खड़ा किया जाय। जो देश आज किसी कारण हमारे साथ नहीं आ सकते वे चीन के साथ न खड़े हों इसका प्रयत्न किया जाय। जिन देशों की स्वतंत्रता का चीन ने अपहरण किया उन पर चीन के आधिपत्य को अमान्य कर उनकी स्वतंत्रता की पुनः स्थापना के लिए यथाशक्ति योगदान दिया जाय। दलाईलामा की सरकार को तिब्बत की विस्थापित सरकार के रूप में मान्यता दी जाय।

नेपाल और भारत के संबंधों में पिछले दिनों में जो सुधार हुआ है उसका जनसंघ स्वागत करता है। मित्रता को दृढ़ करने के लिए यह आवश्यक है कि एक दूसरे के संबंध में यदि कुछ भ्रांतियां अभी भी बची हों तो उनका शीघ्र निराकरण करना चाहिए।

कूटनीतिक व प्रचार अभियानों की विफलता—यह खेद का विषय है कि हमारा विदेश मंत्रालय तथा दूतावास, जिन पर विदेश नीति को प्रस्तुत और कार्यान्वित करने का दायित्व है, उसका निर्वाह करने में विफल रहे हैं। विश्व के जनमत को विशेषतः एशिया और अफ्रीका के देशों को भ्रमित करने के लिए चीन और पाकिस्तान ने जो कूटनीतिक तथा मनोवैज्ञानिक लड़ाई आरंभ की हुई है उसका सामना करने में हमारे दूतावास तथा प्रचार विभाग अप्रभावी सिद्ध हुए हैं। चीन और पाकिस्तान को इन मोर्चों पर भी मात देने के लिए आवश्यक पग उठाये जायें।

[30 दिसम्बर 1962; भोपाल, दसवां सा०अ०]

63.01. कोलम्बो प्रस्ताव

भारत की प्रभुसत्ता के प्रतिकूल—केन्द्रीय कार्य समिति ने चीनी सेनाओं की वापसी और उनके द्वारा खाली किये गये क्षेत्र के प्रशासन के बारे में कोलंबो सम्मेलन के प्रस्तावों पर विचार किया। समिति ने इस बात पर खेद प्रकट किया

कि कोलंबो सम्मेलन ने आक्रमण के प्रश्न की पूर्णतया उपेक्षा कर दी है और आक्रांता तथा आक्रांत—दोनों को समान धरातल पर रखने का प्रयत्न किया है। कोलम्बो प्रस्ताव में उस नैतिकबल का सर्वथा अभाव है जिसकी कि बांडुंग सम्मेलन में भाग लेने वालों से आशा की जाती थी।

इन प्रस्तावों को यदि स्वीकार कर लिया गया तो भारत का विशाल भूभाग चीन के हाथों में रह जायगा और चीन ने अपने पुराने तथा नये आक्रमण द्वारा जो फल प्राप्त किये हैं वह उनका उपभोग करता रहेगा। इन प्रस्तावों को स्वीकार करना भारत के लिए आत्मघातक होगा, क्योंकि उनसे चीन के इस अधिकार को मान्यता मिल जायेगी कि 8 सितम्बर 1962 से पहिले अधिकृत किये गये 12,000 वर्गमील से अधिक भूभाग पर बिना किसी रोक-टोक के वह सैनिक तैयारी करता रहे और साथ ही सितम्बर के पश्चात् छीने गये क्षेत्रों में अपनी पुलिस चौकियां कायम कर सके। इसके विपरीत कोलम्बो प्रस्ताव भारत को अपनी ही भूमि पर सैनिक चौकियां स्थापित करने से रोकते हैं। यह स्थिति भारत की प्रभुसत्ता के सर्वथा प्रतिकूल है।

आक्रमण की समाप्ति—हमारा यह सुविचारित मत है कि चीन से वार्ता आरंभ करने से पूर्व आक्रमण की पूर्ण समाप्ति होनी चाहिए। संसद ने अपने पिछले सत्र में यही निर्णय किया था। कोलम्बो प्रस्ताव भारत सरकार की इस कम से कम मांग को भी पूर्ण नहीं करते कि तनाव कम करने के लिए किसी प्रकार की वार्ता आरंभ करने से पूर्व 7 सितम्बर 1962 की स्थिति पुनः कायम होनी चाहिए जिसके अनुसार भारत की सेनाएं चीन द्वारा खाली किये गये प्रदेश पर कब्जा कर सकती है।

तिब्बत का असैनिकीकरण—लद्दाख में चीन द्वारा अधिकृत भूभाग तथा मध्य क्षेत्र और पूर्वी सीमांत में चीन की विशाल सैनिक तैयारी के प्रति कोलम्बो सम्मेलन चुप्पी का रुख धारण किये हुए हैं। यह तैयारी प्रतिदिन आगे बढ़ रही है। स्थानीय वनजातियों तथा तिब्बतियों को जबरदस्ती सेना में भर्ती किया जा रहा है। इस बढ़ते हुए संकट के प्रति उपेक्षा से नहीं देखा जा सकता। दोनों देशों के बीच तनाव कम करने के लिए यह आवश्यक है कि संपूर्ण तिब्बत का असैनिकीकरण किया जाय।

कार्य समिति खेद प्रकट करती है कि कोलम्बो प्रस्तावों को संसद के सम्मुख रखे जाने से पूर्व ही कुछ सरकारी एजेंसियों ने प्रस्तावों के पक्ष में एक अभियान सा आरंभ कर दिया।

संसद ने गत नवम्बर में राष्ट्र के प्रति जो पावन प्रतिज्ञा ग्रहण की थी उसका स्मरण दिलाते हुए भारतीय जनसंघ संसद सदस्यों से बलपूर्वक आग्रह करता है कि वे आक्रमण के आधारभूत प्रश्न पर किसी प्रकार का समझौता न होने दें। राष्ट्रीय प्रभुसत्ता तथा राष्ट्रीय आत्म-सम्मान के प्रहरी के नाते संसद सदस्यों को कोलम्बो प्रस्तावों को अस्वीकार कर देना चाहिए क्योंकि यह प्रस्ताव न केवल

कम्युनिस्ट चीन के नग्न आक्रमण की उपेक्षा करते हैं अपितु उसके अवैध कब्जे को स्थायी बनाते हैं और कानूनी रूप देते हैं।

[20 जनवरी 1963, दिल्ली; के०का०स०]

63.02. विशाल व प्रभावशाली प्रतिरोधक

जनसंघ भारत सरकार के उन प्रयत्नों का स्वागत करता है जो उसने पिछले 5 मास में देश की प्रतिरक्षा क्षमता बनाने के लिए किये हैं, किन्तु साथ ही अब तक की धीमी गति और मामूली उपलब्धियों पर वह चिंता प्रकट किये बिना नहीं रह सकता। हमारी सीमाओं पर चीन के बढ़ते खतरे को देखते हुए, यह आवश्यक है कि मित्र देशों की सहायता से कई लाख सैनिकों की आपत्कालीन भरती, आपत्कालीन प्रशिक्षण, छोटे हथियारों का आपत्कालीन उत्पादन, नौ सेना और वायुसेना की आपत्कालीन तैयारी की जाय। विशाल और प्रभावशाली प्रतिरोध-शक्ति अर्जित करना हमारा मूलमंत्र होना चाहिए।

पाकिस्तान द्वारा काश्मीरी भूमि का चीन को भूदान—चीनियों ने पाकिस्तान से 13,000 वर्गमील का हमारा सैनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण सीमांत क्षेत्र ले लिया है। इस पर जैसी प्रतिक्रिया हमारी होनी चाहिए थी वैसी नहीं हुई। भारत सरकार अपने दायित्व का निर्वाह तभी करेगी जब वह इस बात की स्पष्ट घोषणा करेगी कि लद्दाख और नेफा के साथ-साथ भारतीय सेनाओं को अब 13,000 वर्गमील के इस भारतीय क्षेत्र को और मुक्त कराना होगा।

हम आम भर्ती के पक्ष में हैं और जनता तथा सरकार से फिर इसका आग्रह करते हैं।

बहु-ध्रुवीय विश्व—जहां तक गुट निरपेक्षता का सवाल है, हमें इस बात को भली भांति समझ लेना चाहिए कि विश्व अब केवल द्वि-ध्रुवीय नहीं रहा। उसका स्वरूप बदलकर अब बहु-ध्रुवीय हो गया है, जिसमें दिल्ली और पीकिंग भी दो सक्रिय ध्रुव बन गये हैं। पीकिंग ने सिद्ध कर दिया है कि उसमें स्वतंत्र रूप से काम करने की क्षमता है।

चीनी आक्रमण को रोकने और उसे पीछे धकेलने के लिए नये संबंध जोड़ना अब अनिवार्य हो गया है। हमारे अपने अस्तित्व के लिए यह आवश्यक है कि मित्रों की संख्या बढ़ाई जाय। हमें इस बात का भी पूरा ध्यान रखना होगा कि हमारे पड़ौसी एशियाई देश चीनी प्रभाव क्षेत्र में न जाने पायें। इस बात को भी देखना होगा कि जिनको चीन से खतरा है वे हमारे प्रति तटस्थ न रहकर हमारे सक्रिय सहयोगी बन जायें।

परंपरा, संधियों और बरताव द्वारा हमारी सीमाएं पुष्ट एवं स्पष्ट हैं। हमारी प्रभुसत्ता को पंच फैसले का विषय नहीं बनाया जा सकता। स्मरण रहे कि

सीमाओं की सदा रक्षा की जाती है, उन पर विवाद नहीं।

[6 अप्रैल 1963; दिल्ली, के०का०स०]

63.05. बाली द्वीप में ज्वालामुखी पीड़ित

बाली द्वीप की जनता के साथ भारतीय जनसंघ अपनी गहरी सहानुभूति प्रकट करता है, जिसे 19 फरवरी और 17 मार्च को हुए ज्वालामुखी विस्फोटों से जन-धन की भारी हानि उठानी पड़ी। हम मानव-भाग्य-विधाता श्री परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह संतप्त जनता को सांत्वना प्रदान करे।

[6 अप्रैल 1963; दिल्ली, के०का०स०]

63.11. चीनी आक्रमण की समाप्ति

भारत पर चीन का विशाल आक्रमण हुए 9 मास बीत गये किन्तु रणभूमि में जो भारत की भारी पराजय और उसके फलस्वरूप राष्ट्रीय अपमान हुआ उसका प्रतिशोध लेने तथा भारत की प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करने के लिए अभी तक कोई ठोस कदम नहीं उठाये गये हैं। चीनी सेनाएं भारत के विशाल भूभाग पर जमी हुई हैं और अपनी स्थिति को निरंतर सुदृढ़ बना रही हैं। चीनी विमानों द्वारा भारतीय वायुसीमा के उल्लंघन की घटनाएं (जिनमें चीनी विमान भारत में 60 मील तक भीतर घुस आते हैं) वृद्धि पर हैं और भारतीय वायुसेना उन्हें रोकने अथवा चीनी विमानों को मार गिराने में अक्षम सिद्ध हो रही है। चीनी सेना द्वारा खाली किये गये उत्तरी-पूर्वी सीमांत प्रदेश में अपनी सेना न भेजने का सरकार का निर्णय भी इस आशंका की पुष्टि करता है कि भारत को सैनिक दृष्टि से सुसज्ज करने का कार्य, जिस गति एवं तीव्रता से चलना चाहिए था वह नहीं चल रहा है।

राष्ट्रप्रेम व एकता का ज्वार—यह बड़े खेद का विषय है कि चीनी आक्रमण के विरुद्ध जनता में राष्ट्र-प्रेम एवं एकता का जो ज्वार आया था उसे बनाये नहीं रखा जा सका। इसके लिए शासक दल की नीति प्रमुखतः उत्तरदायी है जो अपने दलगत दृष्टिकोण को छोड़कर परिस्थिति के अनुरूप ऊपर उठने में पूर्णतया विफल हुआ है। संकटकाल की स्थिति का लाभ राष्ट्रीय प्रतिशोध की भावना को तीव्रतर बनाने के लिए उठाने की बजाय सत्तारूढ़ दल अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए उसका दुरुपयोग कर रहा है। चीनी मंतव्यों और योजनाओं के संबंध में सरकारी प्रवक्ताओं के परस्पर विरोधी वक्तव्यों ने वातावरण को और भी बिगाड़ दिया है और देश धीरे-धीरे अक्तूबर के आक्रमण के पूर्व की निश्चितता तथा शिथिलता की मनोभूमिका में पहुंच रहा है।

केन्द्रीय कार्य समिति मांग करती है कि भारत-चीन संघर्ष को शांतिपूर्ण तरीकों से हल करने की सारी बातें बंद होनी चाहिए क्योंकि उससे चीनी चंगुल में चली गई भारत की इंच-इंच भूमि को मुक्त करने के लिए अनवरत संघर्ष करने का संसद का पवित्र संकल्प न केवल कमजोर होता है अपितु इस संकल्प की पूर्ति के लिए जो सैनिक, कूटनीतिक, आर्थिक तथा राजनैतिक कदम उठाये जाने चाहिए उनकी दिशा तथा गति के निर्धारण में भी व्याघात उत्पन्न होता है। आक्रमण के कायम रहते हुए समस्याओं के हल के लिए मध्यस्थता अथवा अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय में जाने की बात करना शासन की आज तक की उद्घोषणाओं के सर्वथा विपरीत और आक्रमण को प्रोत्साहन देने के समान है। अतः कार्य समिति मांग करती है कि शासन को मध्यस्थता के अपने प्रस्ताव को (जिसे कम्युनिस्ट चीन ने ठुकरा दिया है) वापस ले लेना चाहिए और राष्ट्र की सम्पूर्ण शक्ति चीन अधिकृत भूभाग को मुक्त करने की दिशा में लगाने के लिए ठोस उपाय व योजना करनी चाहिए।

[13 जून 1963; इलाहाबाद, के०का०स०]

63.13. काश्मीर पर वार्ता नहीं

चीन के साथ पाकिस्तान की सांठ-गांठ—1947 में काश्मीर के शासक द्वारा विलय-पत्र पर हस्ताक्षर करने के पश्चात् से जम्मू-काश्मीर राज्य, विधि और व्यवहार दोनों में भारतीय गणराज्य का अभिन्न अंग है। अन्य राज्यों के समान जम्मू-काश्मीर राज्य का भी भारत के साथ पूर्ण विलय करने के लिए भारत सरकार द्वारा आगे पग न उठाये जाने के कारण वहां के लोगों में आज तक अनिश्चितता का भाव फैला हुआ है। चीनी आक्रमण के समय पाकिस्तान के साथ हुई निष्फल वार्ता से यह स्थिति और भी अधिक बिगड़ी है। जनसंघ ने अपने भोपाल अधिवेशन में इस वार्ता की उपयुक्तता के संबंध में जो आशंकाएं प्रकट की थीं, वह सब चीन के साथ पाकिस्तान की बढ़ती सांठ-गांठ और वार्ता के दौरान उसके रवैये से सत्य ही सिद्ध हुई हैं।

अब किसी की मध्यस्थता द्वारा पुनः बातचीत प्रारंभ करने का प्रयत्न नीति विरुद्ध और खतरनाक होगा क्योंकि पिछले अनुभव और पाकिस्तान के खुले शत्रुतापूर्ण रवैये से स्पष्ट है कि काश्मीर पर बाहुबल से अधिकार जमा पाने में असफल होने के बाद, वह अब दबाव और चालबाजी से उसे हथियाना चाहता है। चीन के साथ पाकिस्तान की सांठ-गांठ को देखकर अब उन लोगों की भी आंखें खुल जानी चाहिए जो साम्यवादी चीन के संकट के विरुद्ध, हमारे साथ पाकिस्तान के मिलकर चलने की आशा में उसके साथ सीधी बातचीत करने के पक्षपाती थे। अतः किसी मध्यस्थ द्वारा अथवा अन्य किसी भी रूप में पाकिस्तान के साथ इस समय बातचीत करने का अब कोई औचित्य शेष नहीं रहा है।

भारतीय प्रतिनिधि सभा मांग करती है कि :

(क) काश्मीर के लोगों में व्याप्त अनिश्चितता के भाव को समाप्त करने के लिए भारत-पाक वार्ता का सवाल अविलंब समाप्त कर दिया जाय।

(ख) भारतीय संविधान की धारा 370 को समाप्त करने के लिए शीघ्र पग उठाये जायें।

(ग) प्रशासन में फैली बद-इन्तजामी और भ्रष्टाचार के कारण लोगों का असंतोष व्यापक राष्ट्रीय हितों को हानि पहुंचा रहा है। अतः इसकी समाप्ति के लिए प्रभावी पग उठाये जाने चाहिए।

काश्मीर युद्धक्षेत्र बना हुआ है जिस पर चीन और पाकिस्तान दोनों के आक्रमण बने हैं। इस कारण इस प्रदेश के संबंध में केन्द्रीय सरकार पर विशेष जिम्मेदारी है। अतः केन्द्रीय सरकार का कर्तव्य है कि इस उत्तरदायित्व को वह पूरा करे तथा वहां अविलंब ईमानदार और कार्यकुशल प्रशासन प्रदान करे। शेष भारत के साथ राज्य के पूर्ण विलय के लिए भी भारत सरकार को पहल करनी चाहिए।

[12 अगस्त 1963; दिल्ली, आ०प्र०स०]

63.18. पाकिस्तान के प्रति 'जैसे को तैसा' की नीति

चीन व पाकिस्तान द्वारा मिलकर भारत के विरुद्ध काम करने के कारण, देश के समक्ष जो स्थिति पैदा हो गई है, उसका सही ढंग से सामना करना होगा। वर्तमान परिस्थितियों में पाकिस्तान को सक्रिय शत्रु-राज्य के रूप में मानना होगा। उसकी हाल की गतिविधियों का और रवैये का विषद परिचय इससे मिलता है कि भारत स्थित उसके राजनयिक मिशनों ने बड़े पैमाने पर जासूसी आरंभ कर दी है, राजशाही में भारतीय उच्चायुक्त के उपकार्यालय को बन्द कर दिया गया है और पाकिस्तान में रहने वाले अल्पसंख्यक हिन्दुओं के साथ क्रूर व्यवहार हो रहा है। यह सब बातें पाकिस्तान के शत्रुतापूर्ण रवैये को उजागर करती हैं।

केन्द्रीय कार्य समिति मांग करती है कि भारत सरकार पाकिस्तान के प्रति दृढ़तापूर्ण 'जैसे को तैसा' की नीति अपनाये। विशेषतः राजशाही में शिलांग स्थित पाकिस्तानी मिशन को बंद किया जाय, दिल्ली स्थित पाकिस्तानी उच्चायुक्त के केन्द्रीय कार्यालय से जासूसी की जितनी कार्यवाहियों का संचालन होता है उन सबको प्रभावशाली ढंग से रोका जाय और कछार जिले (असम) के लाठीटीला क्षेत्र में पाकिस्तान सेना ने जो जबरन कब्जा जमाया है, उसे खाली कराया जाय।

[3 दिसम्बर 1963; दिल्ली, के०का०स०]

63.22. पाकिस्तान के प्रति भारतीय नीति का पुनर्मूल्यांकन

भारतीय जनसंघ का यह सुनिश्चित मत रहा है कि जब तक पाकिस्तान विद्यमान है तब तक अपने जन्मगत कारणों और प्रकृति के परिणामस्वरूप वह भारत को अपना सबसे बड़ा शत्रु समझता रहेगा। भारत और हिन्दू के प्रति उसका शत्रुभाव ही पाकिस्तान के दो भूखण्डों को जो 1000 मील लम्बे भारतीय

भूभाग से विभाजित है, एक साथ बनाये रखने का एकमात्र आधार है। भारत के विरुद्ध उसकी लगातार कार्यवाहियां, उसकी नीतियां और समाचारपत्रों का हिन्दुओं के विरुद्ध बराबर विषवमन, वहाँ की हिन्दू जनता को उनके आधारभूत अधिकारों से वंचित कर उन्हें बराबर सताने और यहां तक कि उनका अस्तित्व ही समाप्त करने के प्रयत्न, तथा उनका धर्म-परिवर्तन अथवा उनका भारत के लिए जबरन निष्क्रमण और नागा विद्रोहियों को दिया गया प्रोत्साहन—यह सब चीजें पाकिस्तान की, भारत और हिंदू विरोधी नीति के उदाहरण मात्र है। काश्मीर की समस्या हल हो जाने पर यह सब समस्याएं सुलझ जायेंगी और पाकिस्तान के शत्रुतापूर्ण रुख में परिवर्तन आ जायेगा, यह धारणा भ्रममूलक है; क्योंकि काश्मीर की समस्या भी इन सब नीतियों का ही एक पहलू है। आज के प्रश्न उसकी इच्छा के अनुसार (उसकी दृष्टि से पूर्णतया समाधान रूप से) यदि हल भी हो जायें तो भी वह भारत के विरुद्ध जिहाद बोलने के लिए अन्य समस्याएँ खड़ी कर लेगा।

यह हमारे लिए कोई आनंद का विषय नहीं, किन्तु सत्य यह है कि जनसंघ ने पाकिस्तान के रवैये के संबंध में जो विश्लेषण अभी तक किया था वह— घटना-चक्र से, विशेषकर कम्युनिस्ट चीन द्वारा भारत पर आक्रमण के उपरान्त पाकिस्तान द्वारा उसके साथ किये गठबंधन से—सही सिद्ध हुआ है। आज जनसंघ का विश्लेषण लोगों ने स्वीकार किया है।

अयथार्थवादी व दुर्बल नीति—किन्तु यह अत्यन्त दुःख और चिन्ता का विषय है कि पाकिस्तान के भारत के प्रति इस आधारभूत दृष्टिकोण की अनुभूति के उपरांत भी भारत सरकार उसके प्रति अपनी पुरानी अयथार्थवादी व दुर्बल नीति को लेकर चल रही है। यद्यपि बेरूबाड़ी और चीलाहाटी के निवासियों का विनाश पाकिस्तान में जाने के बाद सुनिश्चित है, उनके प्रतिरोध के उपरांत भी भारत सरकार का उन क्षेत्रों के हस्तांतरण का आग्रह, दुमावाड़ी और लाठीटिल्ला, जिनको पाकिस्तान जबर्दस्ती हथियाने का प्रयत्न कर रहा है, के संबंध में प्रधान-मंत्री का संदिग्ध वक्तव्य, आसाम और त्रिपुरा को मुस्लिम बहुक्षेत्र बनाकर पाकिस्तान में मिलाने के अपने पुराने षड्यंत्र को सफल करने की नीति से उन क्षेत्रों में तथा सिक्किम, लाहोल और स्पीति के सामरिक महत्त्व के क्षेत्रों में, पाकिस्तानियों की घुसपैठ को रोकने में शासन की असफलता पाकिस्तान सरकार द्वारा राजशाही में भारतीय उच्चायुक्त के उपकार्यालय को बंद कराने के उपरांत भी शिलांग स्थित पाकिस्तानी उच्चायुक्त के उपकार्यालय को जो आसाम में भारत विरोधी कार्यवाहियों का अड्डा बना हुआ है, बंद नहीं करने का निर्णय और पाकिस्तान में रहने वाले हिन्दुओं को आधारभूत अधिकार दिलाने के लिए कोई भी कदम उठाने से इनकार (जबकि यह सत्य है कि वहाँ के हिन्दुओं की स्थिति दक्षिणी अफ्रीका आदि में रहने वालों से भी बदतर है)— यह सब बातें भारत सरकार की इस अव्यावहारिक नीति के उदाहरण हैं। भारतीय जनसंघ का

दृढ़ मत है कि इस नीति से पाकिस्तान का दुस्साहस बढ़ता जायेगा। कम्युनिस्ट चीन के साथ पाकिस्तानी सहयोग से स्थिति और भी अधिक चिन्ताजनक हो गई है क्योंकि इससे, वह दोनों मिलकर बाहर से आक्रमण तथा देश के भीतर पाक-परस्त तत्व और कम्युनिस्ट एकट्ठे होकर विध्वंसात्मक कार्यवाहियां कर सकते हैं। अतः भारतीय जनसंघ का सुनिश्चित मत है कि पाकिस्तान के प्रति भारत की नीति का पुनरेक्षण किया जाय।

पाकिस्तान के प्रति 'जैसे को तैसा' के आधार पर एक राष्ट्रीय और व्यावहारिक नीति का निर्धारण हो जिसके अनुसार :

(क) पाकिस्तान चीन के समान ही शत्रु देश समझा जाय तथा पाकिस्तान का शिलांग में स्थित उपदूतावास बंद किया जाय।

(ख) काश्मीर में पाकिस्तानी आक्रमण को समाप्त करने के लिए प्रभावी पग उठाये जायें।

(ग) पाकिस्तान के साथ टुकड़ों-टुकड़ों में समझौतों की नीति छोड़ी जाय।

(घ) असम और त्रिपुरा में सीमा की सुरक्षा सेना के सुपुर्द की जाय।

(ङ) सीमा पर कम से कम 10 मील तक का क्षेत्र संदिग्ध-निष्ठा वाले व्यक्तियों से खाली कराया जाय जिससे पाकिस्तानियों की घुसपैठ को रोका जा सके और सीमा की सुरक्षा मजबूत हो।

(च) पाकिस्तान में रहनेवाले हिन्दुओं के मौलिक अधिकारों का प्रश्न संयुक्त राष्ट्रसंघ में उठाया जाय।

(छ) असम में अवैध रूप से आये हुए पाकिस्तानियों के मामलों की जांच करने के लिए बनाये गये ट्रिब्यूनल को समाप्त कर दिया जाय क्योंकि उनको बाहर निकालने के असली उद्देश्य में अभी तक उससे सफलता नहीं मिली है।

(ज) भारत में पारपत्र द्वारा आये हुए ऐसे पाकिस्तानी मुसलमानों को अविलम्ब पाकिस्तान भेजा जाय जो पारपत्र का पूरा समय हो जाने पर भी भारत में अवैध रूप से जमे हुए हैं।

[30 दिसम्बर 1963; अहमदाबाद, ग्यारहवां सा०अ०]

63.24. विदेश नीति का पुनरेक्षण व पुनर्निर्धारण

पिछले वर्ष कम्युनिस्ट चीन के भारत पर आक्रमण के बाद भारत सरकार की विदेश नीति की अयथार्थवादिता स्पष्ट हो गई थी। उस समय यह आशा की गई थी कि इस नीति की पुरानी असफलताओं को सुधारने तथा नयी परिस्थिति का सामना करने के उद्देश्य से उसका पुनरेक्षण एवं पुनर्निर्धारण किया जायेगा। यद्यपि इस बीच, देश में सैन्य-सज्जा की दृष्टि से कुछ पग उठाये गये हैं किन्तु विदेश नीति सम्बन्धी दृष्टिकोण को (जिसका देश की सुरक्षा के साथ सीधा संबंध आता है) ठीक करने के लिए कुछ नहीं किया गया है।

नेहरू की 'कल्पना का स्वप्न-जगत'— कम्युनिस्ट चीन ने तो भारत की भूमि पर अपना अवैध कब्जा कायम रखने के अतिरिक्त कूटनीतिक क्षेत्र में व प्रचार के क्षेत्र में भारत के विरुद्ध जोरदार अभियान प्रारम्भ कर दिया है पर शत्रु के आक्रमण को समाप्त करने एवं उसकी कूटनीतिक चुनौती का सामना करने के लिए प्रभावी पग उठाने के स्थान पर भारत सरकार उन नीतियों के ही औचित्य के गीत गाने में मग्न है जिनकी असफलता पूर्णतः प्रकट हो चुकी है। कम्युनिस्ट रूस और अमरीका के बीच निर्गुटीय नीति का भूत सरकार के ऊपर बुरी तरह सवार है जिसके परिणामस्वरूप वह वस्तुस्थिति को नहीं देख पाती और यह अनुभव नहीं कर पाती कि अब दिल्ली और पीकिंग के दो नये ध्रुव निर्माण हो गये हैं, जिनके चारों ओर विभिन्न देशों के नये मित्रमण्डल निर्मित हो रहे हैं। पाकिस्तान, इण्डोनेशिया और कम्बोदिया जैसे देशों को अपनी ओर आकृष्ट करने में पीकिंग सफल हुआ है तथा बड़ी तेजी से अफ्रीका और एशिया में अपने प्रभाव का विस्तार कर रहा है, तथा इस भांति भारत को अलग-थलग बनाने में भी वह कुछ सफल हुआ है। किन्तु भारत के प्रधानमंत्री चीन और रूस के बीच अनिश्चित सैद्धान्तिक मतभेदों पर ही सन्तोष बखान करते हुए चीन के अकेलेपन की बात गढ़कर स्वयं अपनी और देश की प्रवंचना कर रहे हैं। लगता है कि 'अपनी कल्पना के जिस कृत्रिम-जगत' में (अपनी ही स्वीकारोक्ति के अनुसार) वे कम्युनिस्ट चीन के आक्रमण के पूर्व तक विचरण कर रहे थे फिर वहीं पहुंच गये हैं। कम्युनिस्ट चीन द्वारा कोलम्बो प्रस्तावों के ठुकराये जाने तथा कोलम्बो शक्तियों के चीनी शिविर की ओर लुढ़कने के कारण उनकी तटस्थता का आवरण समाप्त होने के उपरान्त भी, प्रधानमंत्री श्री नेहरू इन प्रस्तावों के दामन से चिपके हुए हैं। इस नीति के ही परिणामस्वरूप चीन और पाकिस्तान द्वारा मिलकर भारत के विरुद्ध पैदा किया गया संकट और भी गम्भीर होता जा रहा है।

नये ध्रुव, नये लगाव—भारतीय जनसंघ का यह सुनिश्चित मत है कि बदली हुई अंतर्राष्ट्रीय स्थिति का सामना करने के लिए भारत की विदेश नीति का निम्नलिखित आधार पर पुनर्निर्धारण किया जाय :

(1) कम्युनिस्ट चीन के विस्तारवाद से संकटापन्न सभी देशों के बीच और विशेषकर हिन्द महासागर एवं दक्षिणी-पूर्वी एशिया के उन देशों में जो उसके विरुद्ध संगठित कार्यवाही करने के इच्छुक हैं, प्रभावी एकता प्रतिष्ठापित करने के लिए सुविचारित प्रयत्न किये जायें। फारमोसा के साथ कूटनीतिक संबंध स्थापित करने तथा उसके साथ विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग के लिए विशेष प्रयत्न किये जायें।

(2) पश्चिमी एशिया में बदलती हुई स्थिति की पृष्ठभूमि में (जो भारत के लिए अनुकूल नहीं कही जा सकती) भारत को इसराइल के प्रति जो कि इस भूभाग में एकमेव प्रजातंत्रीय देश है तथा जिसके हित भारत के साथ बहुत कुछ

मेल खाते हैं अपना दृष्टिकोण बदलना चाहिए।

(3) अमरीकी और कम्युनिस्ट गुटों के बीच के झगड़ों से दूर रहने की नीति का यथासम्भव पालन करते हुए भारत को पश्चिम के प्रजातंत्रीय देशों के साथ, विशेषतः अमरीका आदि के साथ, जिनकी स्वयं की सुरक्षा दक्षिणी-पूर्वी एशिया में कम्युनिस्ट चीन के विस्तारवाद के विरुद्ध मोर्चे के साथ जुड़ी हुई है, निकट संबंध बनाने चाहिए।

(4) प्रजातंत्रीय भारत तथा कम्युनिस्ट चीन के संघर्ष में उदित हुए लगावों को ध्यान में रखकर, एशिया व अफ्रीका के देशों के विश्व में बढ़ते हुए महत्व के कारण जो नवीन चुनौतियां उभर रही हैं— उनका सामना करने के लिए हमारी कूटनीतिक सेवाओं व विदेशी प्रचार विभाग का पुनर्गठन होना चाहिए।

(5) भारत सरकार चीन के साथ दौत्य संबंध विच्छेद करे, उसके संयुक्त राष्ट्रसंघ में दाखिले की वकालत अब बंद करे, दलाई लामा की सरकार को 'निर्वासित सरकार' की मान्यता दे तथा तिब्बत की मुक्ति के लिए सभी आवश्यक पग उठाये।

[30 दिसम्बर 1963; अहमदाबाद, ग्यारहवां सा०अ०]

63.26. बर्मा में भारतवंशियों की दुर्दशा

अप्रैल 1937 में भारत से अलग होने तक बर्मा भारत का ही एक प्रांत माना जाता था। उस समय बर्मा में रहने वाले 12 लाख के लगभग भारतीयों के पास अच्छी संपत्ति थी। परंतु बर्मा के स्वतंत्र होने पर शनैः-शनैः सब भारतीयों को चाहे उन्होंने बर्मा की नागरिकता स्वीकार की हो अथवा न की हो, बर्मा से निकालने के प्रयास होने लगे। तब से उनके भारत आने-जाने तथा भारत में रहने वाले अपने परिवार के लोगों की सहायता के लिए पैसा भेजने आदि पर बराबर एक के बाद दूसरे प्रतिबंध लगाये जाते रहे हैं। अब तो अनुमति प्राप्त करने पर भी केवल 20 रु० मात्र भारत भेजना संभव है। अनुमति लेने के लिए भी काफी व्यय और परेशानी उठानी पड़ती है। सभी बड़े सम्पत्तिवानों से चाहे वह व्यक्ति हो अथवा संस्थायें, बिना मुआवजे के सरकार ने संपत्ति ले ली है। किमनगर और जावावाडी के निवासियों को, जिनमें अधिकांश वे भारतीय हैं जो लगभग 120 वर्ष पूर्व बर्मा के कृषि उद्योग के विकास के लिए भारत से ले जाये गये थे, 'राज्यविहीन' बनाया जा रहा है।

बर्मा स्थित भारतीय नागरिक और भारतीय मूल के अन्य लोग सदा यह अनुभव करते रहे हैं कि हमारा दूतावास उनकी उचित मांगों के बारे में भी दिलचस्पी नहीं लेता। भारत लौटते समय वह कोई सहायता नहीं करता, उनको सामान सहित रंगून से किसी भारतीय बन्दरगाह तक पहुंचाने के लिए व्यवस्था करने में सहायक नहीं होता। भारतीय जनसंघ इस अवांछनीय स्थिति की ओर भारत सरकार का साग्रह ध्यान आकृष्ट करते हुए मांग करता है कि बर्मा सरकार

के साथ यह मसला उठाया जाये जिससे अपने परिवारों को धन भेजने आदि की भारतीयों की कठिनाई दूर हो सके। साथ ही यह भी मांग करता है कि रंगून और भारतीय बंदरगाहों के बीच नियतकालिक स्टीमर सेवा चालू की जाये।

[30 दिसम्बर 1963; अहमदाबाद, ग्यारहवां सा०अ०]

63.27. समुद्रपार भारतवंशियों की दुर्दशा

श्रीलंका के स्वतंत्र होने के पश्चात वहां के प्रवासी भारतीयों का सवाल गत 15 वर्षों में सतत उलझता ही रहा है। वास्तव में पिछले सौ से अधिक वर्षों में लंका के प्रवासी भारतीयों ने वहां की अर्थव्यवस्था को खड़ा करने में भारी योग दिया है। परन्तु अब, लंका सरकार, किसी न किसी प्रकार उन लोगों को बाहर निकालने के कठोर प्रयास कर रही है। कभी उनकी आजीविका के साधन छीने जाते हैं, कभी राशन-कार्डों पर रोक लगाई जाती है और कभी भाषा संबंधी प्रतिबंध लागू किये जाते रहे हैं। परंतु सर्वाधिक दुःख यह है कि उन लोगों के सम्मानपूर्वक जीवन बिताने की सुविधायें दिलाने के लिए नेहरू सरकार ने कभी कोई प्रभावी कार्यवाही नहीं की। उन लोगों को केवल, लंका सरकार की कृपा पर ही छोड़ रखा है। लगभग 10 वर्ष पूर्व जब श्री कोटलावाला लंका के प्रधानमंत्री थे, तब प्रधानमंत्री श्री नेहरू से बातचीत के पश्चात एक समझौता प्रस्तावित किया गया था। परंतु उसका कोई विशेष परिणाम नहीं निकला। अतः आज नतीजा यह है कि वहां के लगभग 10 लाख 'राज्यविहीन' प्रवासी भारतीय न तो लंका के ही माने जाते हैं और न भारत के। इस कारण उनकी बड़ी कठिन स्थिति है।

जनसंघ, भारत सरकार से मांग करता है कि प्रवासी भारतीयों के प्रति अपनी इस निर्दयी नीति को छोड़े, उनकी दुखद अवस्था को सुधारने के लिए त्वरित कार्यवाही करे तथा लंका स्थित भारतीयों के संबंध में देखे कि वे लोग सम्मान और सुरक्षापूर्वक अपना काम-धंधा करते हुए नागरिकों के नाते वहां रह सकें। इंडोनेशिया, वियतनाम तथा पूर्वी अफ्रीका आदि देशों में भी प्रवासी भारतीयों की स्थिति तेजी से बिगड़ती जा रही है। भारत सरकार को चाहिए कि उन लोगों का प्रश्न भी अपने हाथ में ले तथा उनके हितों की रक्षा करे।

[30 दिसम्बर 1963; अहमदाबाद, ग्यारहवां सा०अ०]

64.01. विभाजन का अन्त व पाकिस्तान की मुक्ति

विभाजन से कोई समस्या नहीं सुलझी—कांग्रेस ने अर्धशताब्दी से भी अधिक समय तक भारत के स्वाधीनता संग्राम का नेतृत्व किया। इस संघर्ष का उद्देश्य अखंड भारत को आजाद करना था। जब स्वतंत्रता संग्राम में विजयश्री दिखाई देने लगी तब मुसलमानों ने श्री जिन्ना के नेतृत्व में 'द्वि-राष्ट्रवाद के सिद्धांत' के आधार पर अपने लिए एक 'मादरे वतन' की मांग की। श्री नेहरू तथा कांग्रेस के दूसरे नेताओं ने इस मांग को 'बेहूदा' और 'अविचारणीय' कहकर ठुकरा दिया।

1946 का आम चुनाव भी कांग्रेस ने इसी कार्यक्रम के आधार पर लड़ा था कि वह इस मांग को कभी स्वीकार नहीं करेगी। लेकिन, चुनाव के बाद ही मुस्लिम लीग के झगड़ालू रवैये से भयभीत होकर कांग्रेस के हाथ-पैर फूल गये, क्योंकि श्रीजिन्ना ने 16 अगस्त 1946 को 'प्रत्यक्ष कार्यवाही' करने का फैसला किया। नेताओं ने चुनाव के दौरान जो वायदा किया था, वे उससे मुकर गये। उन्होंने लीग की धमकी पर घुटने टेक दिये और देश का विभाजन स्वीकार कर लिया। राष्ट्रवादी भारत और राष्ट्रीय कांग्रेस जिन सिद्धांतों को लेकर चले थे, उन सबके साथ यह भयंकर विश्वासघात था। यह मातृहत्या थी। कांग्रेस नेता सत्ता हथियाने को इस तरह भागे कि उन्होंने महात्मा गांधी, वीर सावरकर, डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी जैसे राष्ट्रवादी नेताओं तक की चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया। गत 16 वर्ष की घटनाओं ने इन नेताओं की चेतावनियों को सत्य सिद्ध किया है। विभाजन से कोई समस्या हल नहीं हुई। इससे न तो हिंदू-मुसलमान की एकता हुई और न दो देशों—भारत और पाकिस्तान—के बीच शांतिपूर्ण सहअस्तित्व कायम हो सका। इसके प्रतिकूल हालत इतनी बिगड़ी कि स्वयं भारत की सुरक्षा के लिए खतरा पैदा हो गया; क्योंकि पाकिस्तान अपनी स्थापना के दिन से ही भारत के प्रति शत्रुता की नीति अपनाये हुए है। उसने काश्मीर पर हमला किया, भारत के भीतर मुसलमानों को भड़काया और भारत के शत्रुओं के साथ जा मिला। इसके अलावा वह अपने यहां हिंदुओं तथा दूसरे अल्पसंख्यकों पर निरंतर अत्याचार कर रहा है और उनके साथ ऐसा व्यवहार कर रहा है जैसे वे पाकिस्तान के बंधक हों। वहां समय-समय पर भारी संख्या में अल्पसंख्यकों की आमहत्या की जाती रहीहै।

पूर्वी बंगाल में पश्चिमी पाकिस्तान का उपनिवेश— वस्तुतः सभ्य राष्ट्रों जैसा व्यवहार तक न करके पाकिस्तान खुलेआम एक बर्बर राज्य बन गया है। जहां तक पाकिस्तान के मुसलमानों का संबंध है, वे भी सैनिक तानाशाही के नीचे कराह रहे हैं। पूर्वी बंगाल को स्पष्टतः और खुल्लमखुल्ला पश्चिमी पाकिस्तान का एक उपनिवेश बना दिया गया है और वहां विद्रोह की स्थिति पैदा हो रही है। यह वस्तुस्थिति है और इसका सामना करना है। साफ है कि पाकिस्तान के अधिकारी एक ऐसे राज्य को बनाये रखने के लिए जो कि ऐसे दो भागों में बंटा है जो कि एक दूसरे से हजार मील अलग है और जो भौगोलिक दृष्टि से एक गर्भपात के समान है, जानबूझ कर ऐसी नीति अपना रहे हैं जिससे एक कृत्रिम एवं जनविरोधी प्रशासन को कायम रखा जा सके।

जनसंघ की प्रारंभ से ही यह मान्यता रही है कि विभाजन एक भयंकर भूल थी। पिछले 16 वर्ष की घटनाओं के प्रकाश में अब दूसरे लोग भी इस विचार को स्वीकार करने लगे हैं। अतः जनसंघ महसूस करता है कि देश का विभाजन खत्म किया जाय और पाकिस्तान को मुक्त कराया जाय। हमारे राष्ट्र का यह एक लक्ष्य होना चाहिए।

तुष्टीकरण की नीति—विभाजन के बाद से पाकिस्तान के प्रति भारत

सरकार की नीति नितांत शोचनीय रही। पाकिस्तान की भारत-विरोधी और कुकृत्यों से भरी नीति के जवाब में यह निरंतर ही तुष्टीकरण की नीति रही है। विभाजन के समय और उसके बाद 1950 में नेहरू-लियाकत समझौते के अधीन पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों की रक्षा करने के जितने आश्वासन दिये गये भारत सरकार उनको पूरा करने में शर्मनाक ढंग से विफल रही। इसके प्रतिकूल 1957 से लेकर आज तक के 7 वर्षों में उन हिंदुओं को जो पाकिस्तान से भागकर भारत आना चाहते हैं, निष्क्रमण की सुविधाएं देने से इनकार करके भारत सरकार ने उनके लिए अपने द्वार लगभग बंद कर दिये। इस प्रकार पाकिस्तान को बढ़ावा दिया गया कि वह अपने कुकृत्य जारी रखे। उसी का परिणाम है कि विभाजन के 16 साल बाद 1964 में भी वहां निरीह अल्पसंख्यकों पर व्यापक रूप से अत्याचार हो रहे हैं और भारत सरकार की दिलचस्पी अत्याचार की इन खबरों को दबाने में ही अधिक है।

जनसंघ मांग करता है कि पाकिस्तान को खुश करने की इस निंदनीय नीति को तत्काल त्यागा जाय। 'जैसे को तैसा' की दृढ़ नीति अपनाई जाय। पाकिस्तान का दिमाग दुरुस्त करने और उसे सभ्य राष्ट्रों की तरह व्यवहार करने के हेतु बाध्य करने के लिए आर्थिक बहिष्कार, राजनयिक संबंध-विच्छेद, पुलिस कार्यवाही आदि सभी कदम उठाये जायें।

पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं को बचाओ—इस समय, खासकर यह देखते हुए कि भारत सरकार अब तक पाकिस्तान को सभ्य राष्ट्रों की तरह व्यवहार करने के हेतु भी बाध्य नहीं कर सकी और यह देखते हुए कि पूर्वी बंगाल के हिन्दू जिस दयनीय और निस्सहाय स्थिति में फंसे हैं—30,000 से भी अधिक लोग मारे गये, हजारों महिलायें जबर्दस्ती भगाई गई और उनका शील भंग किया गया, हजारों हिंदुओं के मकान लूटे और जलाये गये—एवं जिसके बारे में भारत सरकार कोई प्रभावशाली कदम उठाने में अनिच्छा व्यक्त कर रही है, एकमात्र विकल्प यही नजर आता है कि यदि पाकिस्तान के अल्पसंख्यकों को विनाश से बचाना है और भारत की सुरक्षा की व्यवस्था करनी है तो सीमित आधार पर आबादी की अदला-बदली की जाय।

अतः जनसंघ मांग करता है कि :

(1) भारत सरकार इस बात की व्यवस्था करे कि सरकारी स्तर पर पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यकों का सामूहिक निष्क्रमण हो, उन्हें सुरक्षित ढंग से भारत लाया जाय और भारत आने के बाद भारत सरकार उनकी सहायता एवं पुनर्वास की व्यवस्था करे।

(2) स्वैच्छिक आधार पर और सरकारी स्तर पर आबादी की अदला-बदली हो; जो पाकिस्तानी घुसपैठिये भारत के पश्चिमी क्षेत्र, तथा पश्चिमी बंगाल असम और त्रिपुरा में घुस आये हैं, उन्हें तत्काल वापिस भेजा जाय। भारत के पूर्वी क्षेत्र की सुरक्षा की दृष्टि से भी यह कदम उठाना जरूरी है।

(3) पाकिस्तान में विस्थापित जो सम्पत्ति छोड़ आये हैं उसके मुआवजे की मांग की जाय और वसूल किया जाय।

जातिनाश के विरुद्ध विश्व जनमत का जागरण—जनसंघ मांग करता है कि पाकिस्तान में हिंदुओं तथा अन्य अल्पसंख्यकों के जातिनाश के खिलाफ विश्व-जनमत जगाने के लिए तत्काल निम्नलिखित कदम उठाये जाने चाहिए :

(1) पाकिस्तान में हिंदुओं तथा अन्य अल्पसंख्यकों के जातिनाश के खिलाफ संयुक्त राष्ट्रसंघ से विधिवत शिकायत की जाय।

(2) जेनेवा स्थित विधिवेत्ताओं की अन्तर्राष्ट्रीय परिषद से अनुरोध किया जाय कि वह पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों पर हो रहे अत्याचारों की मौके पर जाकर जांच करे।

जनसंघ संकल्प करता है कि पूर्वी बंगाल में पाकिस्तान के घोर अत्याचारों से—जिनके कारण से करोड़ों हिंदुओं तथा दूसरे अल्पसंख्यकों के अस्तित्व के लिए ही खतरा पैदा हो गया है—भारतीय जनभावनाओं को जो अकथनीय आघात पहुंचा है उसको एक सूत्र करने और उसका दिशा निर्देशन करने के लिए सभी संभव कदम उठायेगा। इस उद्देश्य से पहले कदम के रूप में जनसंघ दिल्ली में यथाशीघ्र एक अखिल भारतीय सम्मेलन आयोजित करने का सुझाव रखता है। यह सम्मेलन पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों की रक्षा के लिए उस देश के खिलाफ आवश्यक कदम व प्रभावशाली बंधन लगाने को भारत सरकार को बाध्य करने के उद्देश्य से पग सुझायेगा।

[1 मार्च 1964; दिल्ली, के०का०स०]

64.03. चीनी फंदे से सावधान

केन्द्रीय कार्य समिति देश को आगाह कर देना चाहती है कि भारत-चीन मोर्चे पर भी आत्मसमर्पण की तैयारी हो रही है। हाल में ही भारत सरकार के बिना विभाग के मंत्री ने संसद में जो बयान दिया है उससे, और श्री चाउ एन-लाई ने बर्मा और श्री लंका के प्रधानमंत्रियों के साथ रंगून और कोलम्बो में जो संयुक्त बयान जारी किये हैं—उनका स्वागत करते हुए भारत सरकार के विदेश मंत्रालय के एक प्रवक्ता ने जो वक्तव्य जारी किया है उससे, सरकार के इस उतावलेपन का पता चलता है कि वह पीकिंग के साथ किसी तरह का कोई समझौता करने के लिए अपनी आधार-स्थिति से हटने को तैयार है। भारत सरकार बार-बार कहती रही है कि चीन के साथ तब तक बातचीत नहीं हो सकती जब तक वह कोलंबो प्रस्तावों को पूरी तरह स्वीकार नहीं कर लेता। यद्यपि जनसंघ का मत यह रहा है कि भारत को तब तक चीन के साथ बातचीत नहीं करनी चाहिए जब तक वह भारतीय क्षेत्र पर हमलावर के रूप में मौजूद है, तथापि अब ऐसा प्रतीत हो रहा है कि भारत सरकार स्वयं अपनी ही स्थिति से भी पीछे हट रही है।

भारतीय संसद का संघर्ष-प्रण—कार्य समिति सरकार को उस संकल्प की

याद दिलाना चाहती है जो भारतीय संसद ने 14 नवम्बर 1962 को लिया था। संसद ने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक चीन द्वारा जबर्दस्ती दबाये गये क्षेत्र को वापस नहीं ले लिया जाता तब तक चैन नहीं लिया जायेगा। कार्य समिति जनता का भी आवाहन करती है कि वह चीनी जाल से सावधान रहे।

[1 मार्च 1964; दिल्ली, के०का०स०]

64.04. काश्मीर समस्या

गैर-कानूनी माउण्टबैटन प्रस्ताव—युगों से ऐतिहासिक, भौगोलिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से काश्मीर भारत का भाग रहा है। अक्तूबर 1947 में जब वहां के शासक ने राज्य को औपचारिक रूप से भारत में शामिल कर दिया तो इस भाग को कानूनी तथा संवैधानिक मान्यता प्राप्त हो गई। यद्यपि 'भारत स्वाधीनता अधिनियम', तथा 3 जून 1947 की 'माउण्टबैटन योजना' के अंतर्गत केवल शासक ही राज्य का भारत के साथ एकीकरण करने के अधिकारी थे, किंतु इस संबंध में उनके निर्णय का वहां की जनता ने, जिसमें शेख अब्दुल्ला भी थे, पूरी तरह समर्थन किया। शासक द्वारा एकीकरण-पत्र पर हस्ताक्षर करने तथा भारत सरकार द्वारा उसकी स्वीकृति के पश्चात् जम्मू-काश्मीर राज्य का भारत के साथ विलय संबंध पूर्ण, अंतिम तथा अटूट हो गया। उसके सशर्त अथवा अस्थाई होने का कोई प्रश्न पैदा नहीं होता। श्री माउण्टबैटन द्वारा महाराजा हरीसिंह को लिखे गये पत्र में जनमत संग्रह का सुझाव एकतरफा और जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश डा० मेहरचन्द महाजन ने कहा है, "भारत स्वाधीनता अधिनियम की धाराओं के प्रतिकूल तथा गैर-कानूनी" था।

जम्मू-काश्मीर राज्य जिसका लगभग आधा भाग आक्रमणकारियों द्वारा पदाक्रांत हो गया था, उस समय एक सैनिक प्रश्न था जिसका सामना करने में भारत की सेनायें पूर्णत: सक्षम थी। यदि राजनीतिज्ञ उनके मार्ग में आड़े न आते तो आक्रमणकारियों को खदेड़कर सेना ने समस्या का पूर्ण निराकरण कर दिया होता।

काश्मीर संबंधी श्री नेहरू की गलतियां—किंतु दुर्भाग्य से श्री नेहरू, जिन्होंने भारत सरकार की ओर से इस प्रश्न को अपने हाथ में ले रखा था और जो उसे लगभग एक व्यक्तिगत मामला मान रहे थे, निरंतर गलतियां करते गये। वे श्री जिन्ना के जाल में फंस गये। उसकी योजना थी कि काश्मीर की सैनिक-विजय कर इस प्रश्न को समाप्त कर दिया जाय। किंतु राज्य के भारत में विलय से और भारतीय सेनाओं के आजाने के कारण यह दुरभिसंधि असफल हो गई। फलत: श्री जिन्ना ने इस प्रश्न पर राजनीतिक दाव-पेंच का सहारा लिया। इस संबंध में नेहरू सरकार ने जो गलतियों पर गलतियां की उनमें से कुछ इस प्रकार हैं—जनमत संग्रह का एकतरफा तथा गैर-कानूनी प्रस्ताव करना और उसकी निरंतर रट लगाना, संयुक्त राष्ट्रसंघ में अपील करना और मूल शिकायत में पाकिस्तान

को स्पष्टतः आक्रमणकारी न कहना, सही व्यक्ति को संयुक्त राष्ट्रसंघ में भारत का पक्ष प्रस्तुत करने के लिए न भेजना, भारतीय भूमि से शत्रु को खदेड़ती हुई सेनाओं को अचानक युद्ध-विराम द्वारा रोक देना, पाकिस्तान अधिकृत काश्मीर से विस्थापित हिंदुओं को उनके अनुरोध के बावजूद काश्मीर में न बसाना, काश्मीर प्रशासन पर प्रभावी नियंत्रण रखना, शेख अब्दुल्ला को खुश करने के लिए भारतीय संविधान में अनुच्छेद 370 का समावेश करना।

इन भूलों का स्वाभाविक परिणाम यही हुआ कि शेख अब्दुल्ला का दिमाग फिर गया और वे जम्मू-काश्मीर राज्य का एक अलग विधान, अलग निशान और अलग प्रधान के साथ एक-एक 'आजाद सल्तनत' बनाने का सपना देखने लगे। यदि श्री प्रेमनाथ डोगरा के नेतृत्व में राज्य के अंतर्गत और भारतीय जनसंघ के तत्वावधान में बाहर राष्ट्रीय शक्तियों ने आन्दोलन न किया होता तो शेख अपने कुत्सित इरादों को पूरा कर लेते। डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी के महान बलिदान ने देश की आंखें खोलीं और श्री नेहरू को अपनी नीति बदलने को विवश किया। शेख अब्दुल्ला बंदी बनाये गये और राज्य में नई सरकार की स्थापना के साथ विलीनीकरण की प्रक्रिया आरंभ हुई और उस दिशा में कुछ प्रगति भी हुई।

युद्ध-विराम रेखा के आधार पर काश्मीर का विभाजन—किंतु प्रधानमंत्री पुनः डगमगा गये। यद्यपि सुरक्षा परिषद में भारत ने यह सही रूप से प्रतिपादित किया कि काश्मीर का भारत के साथ एकीकरण वहां के शासक के विलय-पत्र पर हस्ताक्षर के कारण पूर्ण, अंतिम, बिना शर्त और अटूट है तथा भारत के साथ उसके विलय की मात्रा एक आंतरिक प्रश्न है, किंतु सरकार ने प्रत्यक्ष में इस कथन को चरितार्थ नहीं किया। पिछले 10 वर्षों में संविधान के अनुच्छेद 370 को एकबारगी ही निरस्त करने में पं० नेहरू की असफलता इस बात का प्रमाण है कि वे मूलगामी प्रश्नों पर स्पष्ट और शीघ्र निर्णय नहीं ले सकते। सबसे बड़ी भूल तो यह हुई कि अक्तूबर-नवम्बर 1962 में कम्युनिस्ट चीन का आक्रमण होने पर, आंग्ल-अमरीकी दबाव में आकर इस प्रश्न पर पाकिस्तान के साथ उन्होंने बातचीत करना स्वीकार कर लिया और युद्ध-विराम रेखा के आधार पर राज्य का विभाजन करने का प्रस्ताव भी रखा।

अब्दुल्ला की पाकिस्तान यात्रा—जम्मू-काश्मीर राज्य की आंतरिक स्थिति को ठीक प्रकार से न सम्हालने के कारण आई राजनीतिक रिक्तता की अवस्था में यकायक शेख अब्दुल्ला की रिहाई से और उसको आसमान पर चढ़ाने का जिस प्रकार से यत्न किया गया है, उससे तथा उसके द्वारा राज्य के भारत के साथ एकीकरण को (जिसके लिए वे स्वयं भी कारणीभूत थे) चुनौती देने वाले पृथकतावादी वक्तव्यों के प्रधानमंत्री के ही निवास स्थान से दिये जाने से तथा श्री नेहरू का आशीर्वाद लेकर की गई पाकिस्तान की यात्रा से राज्य के भारत में विलय की प्रक्रिया रुक गई है और यह धारणा पैदा हुई है कि काश्मीर के प्रश्न पर कोई नया समझौता होने जा रहा है। शेख अब्दुल्ला के वक्तव्यों के विषय में

प्रधानमंत्री द्वारा जानबूझकर धारण किया गया मौन इस वातावरण को उत्पन्न करने के लिए मूलतः जिम्मेदार है।

शेख अब्दुल्ला के अनुसार नया समझौता ऐसा होना चाहिए जो काश्मीरियों के लिए सम्मानजनक हो, भारत और पाकिस्तान दोनों में से किसी में भी जय अथवा पराजय की भावना पैदा न करे और भारत के असाम्प्रदायिक आधार की रक्षा करे। शेख अब्दुल्ला के इतिहास और पिछले 17 वर्ष की घटनाओं की पृष्ठभूमि में यदि इस गूढ़ वक्तव्य का विश्लेषण किया जाय तो यही निष्कर्ष निकलेगा कि :

(1) वे काश्मीरियों का भारतीय नागरिक के रूप में बने रहना सम्मानजनक नहीं समझते।

(2) 1947 में काश्मीर को हड़पने के प्रयत्नों में मिली असफलता से उत्पन्न पराजय की भावना को पाकिस्तान के मन से मिटा देना चाहते हैं।

(3) भारत के असाम्प्रदायिक आधार की रक्षा की चर्चा उनके काश्मीर प्रश्न पर साम्प्रदायिक दृष्टिकोण को ढकने का दिखावा मात्र है; काश्मीर के मुस्लिम बहुल होने के कारण ही वे उसे भारत से अलग करना चाहते हैं।

केन्द्रीय कार्य समिति को आशंका है कि शेख अब्दुल्ला (जो अलीगढ़ विश्वविद्यालय में दीक्षित एक घोर साम्प्रदायवादी सार्वजनिक कार्यकर्ता रहे हैं) प्रेसीडेन्ट अयूब के साथ इस्लाम के आधार पर कोई सौदा कर आयेंगे और फिर उसे असाम्प्रदायिकता के नाम पर वे श्री नेहरू के गले के नीचे उतारने का यत्न करेंगे जो कि उसे मनवाने के लिए संसद को इसलिए बाध्य करेंगे कि वे अपने एक मित्र से वचनबद्ध हो चुके हैं।

काश्मीर प्रश्न पर पुनः चर्चा नहीं—काश्मीर के प्रश्न को किसी भी रूप में पुनः उठाने और उसके भारत का एकात्म अंग होने के संबंध में अभी तक जो आश्वासन दिये गये हैं उनसे पीछे हटना अनीतिमत्तापूर्ण और खतरनाक होगा। इससे जम्मू-काश्मीर राज्य के 13 लाख अल्पसंख्यकों का जीवन और सम्मान संकट में पड़ जायेगा। शेख अब्दुल्ला की वर्तमान गतिविधियों के प्रारम्भ होने के बाद, काश्मीर घाटी से अल्संख्यकों का निष्क्रमण शुरू हो गया है। इससे देश भर में विघटनकारी शक्तियां बलवती हो जायेंगी। द्वि-राष्ट्रवाद के आधार पर विभाजन के घाव अभी पूरी तरह भरे भी नहीं हैं कि शेख अब्दुल्ला ने क्षेत्रीय राष्ट्रवाद के आधार पर नये विभाजन की मांग शुरू कर दी है जिसे स्वीकार करने का अर्थ होगा, देश को और टुकड़ों में बांटना। देश के अनेक भागों में ऐसी विघटनवादी शक्तियां विद्यमान हैं जो इस बात की बाट देख रही है कि काश्मीर पर सरकार के झुकते ही वे सक्रिय हो जायें।

काश्मीर घाटी के 14 लाख मुसलमान जिनके विकास के लिए हमने सब कुछ किया है, यदि भारत के साथ नहीं रह सकते तो देश को हिन्दुस्तान के मुसलमानों के संबंध में जिनमें से 93 प्रतिशत से अधिक ने 1946 में पाकिस्तान का समर्थन

किया था, पुनः विचार करना पड़ेगा।

काश्मीर की रक्षा के लिए महान् बलिदान और पराक्रम के बाद आक्रमणकारियों पर विजय पाने वाली सेना को यदि किसी राजनीतिक समझौते के कारण वहां से हटना पड़ा तो चीन के हाथों हाल की पराजय के बाद इसके मनोबल पर भयंकर परिणाम होंगे जिससे राष्ट्र की सुरक्षा का एक प्रभावी साधन बने रहने के लिए उसका दिल टूट जायेगा।

भारत-पाक संयुक्त सुरक्षा—यह सोचना कि काश्मीर समर्पण करने से पाकिस्तान के साथ मित्रता हो जायेगी एक दुराशा और आत्मप्रवंचना मात्र है। पंजाब नहरी पानी समझौते के समय भी यही तर्क दिया गया था पर परिणाम क्या निकला? सत्य तो यह है कि पाकिस्तान एक कृत्रिम इकाई है जो भारत से विरोध और हिन्दुओं से विद्वेष पर ही खड़ी है। अपने अस्तित्व के लिए वह कोई दूसरा बहाना ढूंढ़कर इस विरोध को कायम रखेगा।

कम्युनिस्ट चीन के साथ पाकिस्तान के गठबंधन के बाद चीन के मुकाबले के लिए पाकिस्तान के साथ संयुक्त सुरक्षा समझौते का सुझाव अर्थहीन है। पाकिस्तान ने साफ बता दिया है कि भारत चाहे जितनी उसकी खुशामद करे वह चीन से नहीं लड़ेगा।

केन्द्रीय कार्य समिति का यह सुनिश्चित मत है कि भारत को काश्मीर पर अपना पक्ष नहीं छोड़ना चाहिए और वहां आक्रमण को समाप्त करना चाहिए और संविधान के अनुच्छेद 370 को समाप्त कर काश्मीर के पूर्ण विलय के अभिवचन का निर्वाह करना चाहिए। यदि इस वचन पालन में दुर्बलता दिखाई अथवा पीछे हटे तो नई उलझनों का एक क्रम आरंभ हो जायेगा व पुरानी समस्याएं कम नहीं होंगी। काश्मीर केवल एक भूखण्ड-मात्र नहीं है। वह भारत की स्वतंत्रता और एकता का प्रतीक है। आज प्रश्न श्री नेहरू की अब्दुल्ला के लिए मित्रता का नहीं है; भारत का सम्मान, सुरक्षा और अखण्डता दांव पर है। जनता और शासन का मार्ग भी स्पष्ट है। व्यक्ति के प्रति निष्ठा से देशनिष्ठा बड़ी है।

भारतीय जनसंघ मातृभूमि के प्रति अपने कर्तव्य का पूर्ण निर्वाह करेगा और वह काश्मीर को भारत से अलग करने अथवा विलय की प्रक्रिया को रोकने अथवा पीछे हटने के किसी भी प्रयत्न का अपनी सम्पूर्ण शक्ति से विरोध करेगा।

[25 मई 1964; दिल्ली, के०का०स०]

64.06. पूर्वी बंगाल के विस्थापितों की समस्या

पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यकों पर सम्मेलन—पूर्वी बंगाल में अल्पसंख्यकों की स्थिति अभी भी चिन्ताजनक बनी हुई है, हालांकि जनवरी के बाद हिन्दुओं के विरुद्ध हुए हिंसात्मक दंगों के 4 महीने बीत चुके हैं। यद्यपि, बताया जाता है, सामूहिक हत्यायें, लूट-पाट और आगजनी की घटनायें अब नहीं हो रहीं हैं, तथापि भारत की ओर आने वालों पर मार्ग में घोर अमानुषिक अत्याचार किये जा रहे

हैं। हाल ही में पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यकों की समस्या पर विचार करने के लिए आयोजित सम्मेलन की स्थायी समिति के सदस्य स्वयं सीमा पर पेतरापोल और हसनाबाद गये थे, जहां आमतौर पर पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यक आते हैं।

हृदय विदारक अत्याचार—उन्होंने भारत आने वाले अल्संख्यकों पर किये गये अत्याचारों का जो विवरण दिया है, वह अत्यन्त हृदयद्रावक है। इसमें सबसे अधिक लज्जाजनक, महिलाओं के साथ किये जाने वाले बलात्कार की घटनाएं हैं। ये घटनाएं बड़े पैमाने पर, खुले आम और प्रायः रोज हो रही हैं। कभी-कभी महिलाओं के साथ सार्वजनिक बलात्कार भी किये गये हैं। रिपोर्ट की एक प्रति गृहमंत्री श्री गुलजारी लाल नन्दा को भी विधिवत दी गई है। यह सचमुच अत्यन्त अपमानजनक है कि भारत सरकार और उसके अधिकारी मानवता और नारी जाति के साथ होने वाले अमानुषिक व्यवहार को असहाय मूकदर्शक की भांति देख रहे हैं। विस्थापितों का आना अभी भी जारी है और उसकी गति में कमी होने की कोई आशा भी नहीं है, क्योंकि पूर्वी बंगाल में अमानुषिक स्थितियां बनी हुई हैं। औसतन 4,000 विस्थापित प्रतिदिन भारत आ रहे हैं, और अब तक 4 लाख आ चुके हैं। ढाका स्थित भारतीय उप-उच्चायुक्त लोगों को निष्क्रमण-पत्र देने में जिस ढंग से पेश आ रहे हैं, वह घोर निन्दनीय है। जहां यह निष्क्रमण-पत्र जारी किये जाते हैं, वहां कार्यालय के सामने एक-एक मील तक लम्बी कतारें लग जाती हैं। ये प्रमाणपत्र भी बड़ी अनिच्छापूर्वक दिये जाते हैं। यद्यपि भारत सरकार घोषणाएं करती रही है कि निष्क्रमण-पत्र उदारतापूर्वक जारी करने के आदेश दिये गये हैं, पर वस्तुतः ये प्रमाण-पत्र बहुत कठिनाई से दिये जाते हैं।

विस्थापितों का पुनर्वास—भारत आने पर इन विस्थापितों के साथ किये जाने वाले व्यवहार के संबंध में, स्थायी समिति की रिपोर्ट में कहा गया है कि इस मामले में पूरी उदासीनता बरती जा रही है। पश्चिमी बंगाल सरकार अपनी बला दूसरे राज्यों पर टालने के लिए हमेशा यह कहती है कि नये विस्थापितों के लिए पश्चिमी बंगाल में जगह नहीं है, हालांकि अनेक जिम्मेवार व्यक्तियों ने बताया है कि पश्चिमी बंगाल में बहुत से ऐसे क्षेत्र हैं, उदाहरण के लिए सुन्दरवन, जहां काफी संख्या में विस्थापितों को बसाया जा सकता है। यह मांग भी जोर कर रही है कि कम से कम राज्य की सुरक्षा की ही दृष्टि से, सीमा पर बीस मील तक का क्षेत्र पाक-समर्थकों से खाली करा दिया जाय और इन सीमावर्ती क्षेत्रों में विस्थापितों को बसाया जाय। इसके अलावा अनुमान है कि पूर्वी क्षेत्र (पश्चिमी बंगाल, असम और त्रिपुरा) में लगभग 16 लाख पाकिस्तानी मुसलमान घुस आये हैं। यदि इन पाकिस्तानी घुसपैठियों को निकाल दिया जाता है, तो कम से कम उतने ही लोगों के लिए तो जगह निकल ही सकती है। पश्चिमी बंगाल और अन्य पूर्वी क्षेत्रों में इन विस्थापितों को बसाना अधिक व्यावहारिक होगा, क्योंकि कृषकों और मछुओं को अनुकूल वातावरण मिलेगा। यह सहज स्वाभाविक और मानवीय नीति होगी। यह प्रसन्नता की बात है कि अन्य राज्य भी पूर्वी बंगाल के विस्था-

पितों को अपने यहां बसाने को राजी हैं। लेकिन, बहुत बार यह पाया गया है कि वे क्षेत्र उनकी आवश्यकताओं के अनुकूल नहीं होते। ऐसी भी घटनाएं हुई हैं जब शिविरों को छोड़कर, बड़े पैमाने पर ये विस्थापित भाग गये। उदाहरण के लिए उड़ीसा के तेरुवली स्टेशन की घटना है, जहां कई ऐसे विस्थापित गोली के शिकार हुए। वास्तव में आवश्यकता इस बात की है कि पश्चिमी बंगाल या अन्य किसी राज्य में इन अभागे विस्थापितों के साथ जिनकी स्थिति भाग्यहीन फुटबॉल के समान हो गई है, मानवीय और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार हो।

भारतीय जनसंघ की कार्य समिति ऐसा अनुभव करती है कि इन परिस्थितियों में सरकार को अविलम्ब निम्नलिखित कदम उठाने चाहिए :

(1) पाकिस्तान की सरकार पर दबाव डालना चाहिए ताकि भारत आने वाले अल्पसंख्यकों पर मार्ग में होने वाले अत्याचार और अमानुषिक अनाचार की घटनाएं बंद हों। इसके लिए पाकिस्तान सरकार के साथ सरकारी स्तर पर ऐसी व्यवस्था की जाय कि भारतीय अधिकारी पाकिस्तान की सीमा में अन्दर तक जायें और भारत आने को इच्छुक अल्संख्यकों को सीमा तक सम्मानपूर्वक सुरक्षित ले आये।

(2) जो कोई भी भारत आना चाहें, उन्हें इसके लिए पूरी छूट हो और इस दृष्टि से निष्क्रमण संबंधी पाबंदियां, यदि पूरी तरह समाप्त न की जा सकें, तो यथासंभव ढीली की जायें।

(3) भारत आने पर विस्थापितों को यथासंभव पश्चिमी बंगाल में या पूर्वी राज्यों में ही बसाया जाय।

(4) भारत आने वाले विस्थापितों द्वारा वहां छोड़ी गई चल-अचल सम्पत्ति के लिए पूरा मुआवजा पाकिस्तान सरकार से मांगा जाय।

(5) चूंकि बड़ी संख्या में यह विस्थापित भारत आ गये हैं, तथा अभी और (सम्भवतः लगभग 1 करोड़) आने की सम्भावना है, पाकिस्तान से उन्हें बसाने के लिए भूमि मांगी जाय।

(6) जो पाकिस्तानी, भारत में घुस आये हैं, उन्हें अविलम्ब निष्कासित किया जाय, और इस क्रम में शिथिलता न आने दी जाय।

(7) पश्चिमी बंगाल तथा अन्य पूर्वी राज्यों की पाकिस्तान के साथ लगी सीमा से 20 मील तक के इलाके को पाक-समर्थकों से मुक्त करा दिया जाय और उस क्षेत्र में पूर्वी बंगाल के विस्थापितों को बसाया जाय। यह सुरक्षा की दृष्टि से भी आवश्यक है। साथ ही इस इलाके में पाकिस्तानी मुसलमानों की घुसपैठ और निरंतर होने वाली तस्करी को भी इस प्रकार रोका जा सकता है।

[25 मई 1964; दिल्ली, के०का०स०]

64.08. समुद्रपार भारतवंशियों की दुर्दशा

इतिहास साक्षी है कि संसार के विभिन्न भागों—एशिया, अफ्रीका, दूरस्थ दक्षिणी अमरीका, वैस्ट इंडीज और प्रशांत द्वीपों आदि—को भारतीय गये और वहां बस गये। कुछ क्षेत्रों में तो भारतीय बस्तियां सौ वर्ष से भी अधिक पुरानी हैं। भारतीय विभिन्न रूपों में विदेशों को गये। वे श्रमिकों के रूप में गये, व्यापारियों, क्लर्कों, अफसरों आदि के रूप में भी गये। विदेशों में आबाद ऐसे भारतीयों की संख्या बहुत बड़ी है। वर्तमान अनुमानों के अनुसार समुद्रपार भारतीयों की संख्या लगभग 70 लाख है।

उनकी हालत, खासकर जब से भारत आजाद हुआ है, निरंतर बिगड़ती जा रही है। दमन, निष्कासन, संपत्ति-अपहरण आदि के रूप में उनकी हालत में आने वाली गिरावट के विभिन्न देशों में विभिन्न रूप हैं। इस शताब्दी के आरंभ से ही दक्षिणी अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों के दमन की कहानियों से विश्व अवगत रहा और यही कारण था कि इस दमन के विरुद्ध वहां जो आंदोलन चला उसके दौरान महात्मा गांधी राजनीतिक नेता के रूप में उभरे। दूसरे अफ्रीकी देशों में खासकर ब्रिटेन के भूतपूर्व उपनिवेशों को—यथा केन्या, तांजानिका, जंजीबार आदि को—आजादी मिलने के बाद से वहां भी भारतीयों का दमन होने लगा और उन्हें निकाला जाने लगा। दक्षिणी अमरीका में ब्रिटिश गियाना, वैस्ट इंडीज में ट्रिनीडॉड व टोबागो में भी भारतीयों का यही हाल हुआ है।

श्रीलंका व बर्मा में भारतवंशी—इधर अपने देश के निकट, बर्मा और श्रीलंका में समस्या के ऐतिहासिक विकास का रूप कुछ भिन्न है। 1937 तक बर्मा ब्रिटिश भारत का एक प्रांत था। ब्रिटिश भारत के अन्य भागों से जो बर्मा में रोटी-रोजी के लिए जाकर बसे वे विदेशी नहीं थे। 1 अप्रैल 1937 को बर्मा, ब्रिटिश भारत से पृथक हुआ और पौ फटते ही बर्मा में बसे भारतीय विदेशी हो गये। कुछ साल बाद बर्मा पर जापानी हमला हुआ जिसमें भारतीयों और बर्मियों को समान रूप से कष्ट उठाने पड़े। अन्त में बर्मा पर फिर से ब्रिटिश कब्जा हुआ। कुछ वर्ष बाद बर्मा स्वतंत्र हुआ और वह राष्ट्रमंडल से अलग हो गया। इसके बाद बर्मा में विभिन्न सरकारें बनीं। वहां रहने वाले भारतीयों के प्रति सबका रवैया अमैत्रीपूर्ण रहा। वर्तमान बर्मी सरकार ने तो वहां भारतीयों का रह सकना सब तरह से दुष्कर बनाकर उन्हें निकाल बाहर करने का ही फैसला किया दिखता है। बड़े भारतीय व्यापारियों की बात तो दूर, उसने राष्ट्रीयकरण के नाम पर सभी भारतीयों की सारी संपत्ति ही छीन ली। छोटे पंसारियों, परचूनियों, दुकानदारों और क्लर्कों तक को नहीं छोड़ा गया। पचास और सौ क्यात (बर्मी रुपया) के नोटों का चलन अचानक बंद कर दिया गया, जिससे बचाकर रखा गया उनका नकद धन मिट्टी के मोल का हो गया। लखपती भी दिन अस्त होते-होते दरिद्र हो गये। भारतीयों को निकालने और नौकरियों में सिर्फ बर्मियों को रखने की प्रक्रिया सतत जारी है। इस सबका परिणाम यह है कि बर्मा में बसे लगभग 8 लाख भार-

तीयों में से अधिकांश को बर्मा छोड़ देना पड़ा। वे विस्थापित, बेसहारा और दीन बनकर भारत में अब आश्रय खोज रहे हैं।

श्रीलंका में भी लगभग इसी तरह की कहानी लंबे काल से चल रही है। अंग्रेजों ने डचों को हराकर श्रीलंका पर कब्जा किया। भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारी मद्रास में बैठकर श्रीलंका का प्रशासन चलाते थे। 1803 में ग्रामीन की संधि के अनुसार उसे भारतीय प्रशासनिक नियंत्रण से अलग करके 'ब्रिटिश सम्राट का उपनिवेश' बना दिया गया और इस प्रकार वह सीधा ब्रिटिश ताज के आधीन चला गया। यूरोपीयों ने वहां बड़े-बड़े बागान (चाय, रबर आदि) स्थापित किये और भारत से लाखों श्रमिक (खासकर दक्षिण के तमिल) इन बागानों में काम करने वहां गये। इनके अलावा पंसारी, व्यापारी आदि दूसरे लोग भी श्रीलंका गये और वहां बस गये। ऐसे लोगों—श्रमिकों व छोटे व्यापारियों आदि की संख्या आज 10 लाख से भी अधिक है। इन 10 लाख भारतवंशियों में अधिकांश को श्रीलंका सरकार ने राज्यविहीन घोषित कर दिया है। जिन 8 लाख लोगों ने श्रीलंका की नागरिकता पाने के लिए आवेदनपत्र दिये, उनमें से 1,30,000 (लगभग एक-छठे भाग को) लोगों को नागरिकता दी गई और बाकी (लगभग 83 प्रतिशत) के आवेदन रद्द कर दिये गये। श्रीलंका की वर्तमान सरकार अब और दबाव बढ़ाती जा रही है। वह भी लगभग बर्मा सरकार के ही पदचिह्नों पर चल रही है। अर्थात् भारतीयों की संपत्ति किसी न किसी बहाने छीनी जा रही है। जो भारतवंशी हमेशा के लिए श्रीलंका छोड़ देना चाहते हैं, उनके साथ तो अन्य लोगों के मुकाबले और भी अजीबो-गरीब भेदभाव भरा वर्ताव किया जाता है। श्रीलंका छोड़ने वाले अन्य लोगों की तुलना में भारतवंशियों को आधा धन और माल बाहर ले जाने दिया जाता है। 1948 से लेकर अब तक के लगभग 16 वर्षों में कई बार वार्ताएं हुई, प्रधानमंत्री सर जान कोटलावाला से लेकर उनके कई परवर्ती प्रधानमंत्रियों के साथ नेहरू सरकार ने समझौते किये, लेकिन सरकार की दुर्बल नीतियों के कारण इन सबका कोई प्रभावशाली परिणाम न निकला।

बर्मा पर नये व पुराने ऋण —स्थिति अब तो लगभग असह्य और भारत के लिए घोर अपमानजनक हो गई है। अब समय है कि भारत सरकार दृढ़ नीति अपनाये और इन देशों पर दबाव डाले जिससे भारतवंशियों के साथ होने वाले इस अपमानास्पद व्यवहार का तत्काल अन्त हो। जहां तक बर्मा का संबंध है (1937 में जब बर्मा भारत से पृथक हुआ था उस समय के देने-पावने के बंटवारे के अनुसार) भारत ने उससे 71 करोड़ रु० लेने हैं। इसके अलावा जब ऊ नू बर्मा के प्रधान-मंत्री थे तब भारत ने बर्मा को 20 करोड़ रु० का और कर्ज दिया था। 91 करोड़ की राशि में से बर्मा ने आज तक भारत को एक पैसा भी नहीं दिया। भारत सर-कार कम से कम इतना तो कर ही सकती है कि इस राशि की तत्काल अदायगी की मांग करे। जो संपत्ति भारतीय बर्मा में छोड़कर आये हैं उसका भी पूरा मुआ-वजा मांगा जाय।

भारतीय जनसंघ मांग करता है कि उन सब देशों के प्रति जो भारतीयों का दमन कर रहे हैं और जो भारतीयों को अपमानित करने पर आमादा हैं, भारत सरकार दृढ़ नीति अपनाये जिससे इस स्थिति का अन्त हो।

[10 अगस्त 1964; ग्वालियर, भा०प्र०स०]

64.11. अनुच्छेद 370 की समाप्ति

केन्द्रीय कार्य समिति को यह जानकर संतोष हुआ कि भारत के लोगों ने अपने दलगत राग-द्वेष के बावजूद भारतीय संविधान के अस्थायी अनुच्छेद 370 के बने रहने के खतरनाक फलितार्थों को समझा है। संसद में सब दलों के सदस्यों ने इस अनुच्छेद को समाप्त करने के लिए एक निजी विधेयक का जिस तरह खुला और बिना शर्त समर्थन किया वह इस संबंध में राष्ट्र के विचारों का एक शुभ संकेत है। इस संबंध में जनसंघ ने अपनी स्थापना के दिन से ही जो रवैया अपनाया है यह उसके सही होने का एक सबूत है।

लेकिन, यह गहरे दुःख का विषय है कि इस मामले में भारत सरकार एक बार फिर चूक गई। उसने इस अनुच्छेद को बनाये रखने का आग्रह करके अपने सांप्रदायिक एवं अयथार्थवादी दृष्टिकोण का ही परिचय दिया, क्योंकि काश्मीर के पृथकतावादी और सांप्रदायिक तत्वों के पृथकतावाद का यह अनुच्छेद प्रतीक बन गया है। उस राज्य में भारतीय संविधान के कुछ अन्य अनुच्छेदों का लागू किया जाना अच्छी बात है, किंतु इस सबके बावजूद इस बुनियादी तथ्य की उपेक्षा कर दी गई है कि इन तमाम कार्यवाहियों से इस अनुच्छेद के मनोवैज्ञानिक प्रभाव को मिटा सकना कठिन होगा, क्योंकि काश्मीर का शेष भारत के साथ भावात्मक दृष्टि से एकीकरण करने में यह अनुच्छेद ही मूल बाधा है।

पाकिस्तान के शासक इस अनुच्छेद को समाप्त करने के किसी कदम से जिस तरह बौखला उठते हैं उससे पता चलता है कि इसके बने रहने में भारत के लिए कितना खतरा छिपा है। इस संबंध में पाकिस्तानी धमकियों का व्यावहारिक और देशभक्तिपूर्ण उत्तर यही होगा कि इसे एक ही झटके में साफ कर दिया जाय। लेकिन, ऐसा करने से इनकार करके भारत सरकार ने एक बार फिर पाकिस्तान को खुश करने और उसके सामने समर्पण करने की अपनी नीति का परिचय दिया है। परन्तु इससे पाकिस्तान संतुष्ट होने वाला नहीं, क्योंकि वह 'काश्मीर में भारत की उपस्थिति' तक का विरोध करता है। यह अधिक यथार्थवादी और सब संबद्ध पक्षों के लिए अंतिम रूप से हितप्रद होगा कि पाकिस्तान को हमेशा चिल्लाते रहने का अवसर देने के बजाय, इस अनुच्छेद को एक ही झटके में साफ करके पाकिस्तान जितना होहल्ला मचाना चाहता है उसे एक बार में ही मचा लेने दिया जाय। पाकिस्तानी दुराग्रह के सामने इस तरह आगा-पीछा करने के मूल में यह गलत धारणा है कि भारत-पाकिस्तान तनाव का कारण काश्मीर है। सच तो यह है कि काश्मीर स्वयं कारण नहीं बल्कि उस तनाव का एक लक्षण है जो पाकिस्तान

के जन्म में ही निहित थे। अतः काश्मीर की कीमत पर पाकिस्तान को खुश करने या उसके साथ समझौता करने के किसी प्रयास का अंतिम परिणाम यह होगा कि भारत-पाकिस्तान तनाव कम होने के बजाय पाकिस्तान की आक्रामक भूख और बढ़ेगी।

अतः भारतीय जनसंघ भारत सरकार से अनुरोध करता है कि वह काश्मीर के संबंध में अपनी ढुलमुल नीति त्याग दे क्योंकि अनुच्छेद 370 को समाप्त करने के प्रश्न पर उसका वर्तमान रवैया इसी नीति का प्रत्यक्ष परिणाम है। यह अनुच्छेद यदि खोखला भी रह जाता है तो भी काश्मीर के पृथकतावादी और संप्रदायवादी तत्वों के लिए दुरुपयोग का एक साधन बना रहेगा। यथार्थ-वादिता और राष्ट्रीय हितों के साथ-साथ तात्कालिक आवश्यकता का तकाजा भी यही है कि संविधान से इस अनुच्छेद की शब्द, स्वरूप और भावना सहित अंत्येष्टि कर दी जाय जिससे भारत का संविधान ही जम्मू-काश्मीर राज्य का भी संविधान बन जाय। अब तक उठाये गये अन्य अनेक कदमों के मुकाबले इस एक कदम का उस राज्य की जनता के मस्तिष्क पर बड़ा स्थिरकारी प्रभाव पड़ेगा।

अब्दुल्ला की हज यात्रा--यह अब इसलिए और भी आवश्यक हो गया है क्योंकि शेख अब्दुल्ला और जनमत संग्रह मोर्चे की, जिसके वे वास्तविक नेता बन गये हैं, राष्ट्र-विरोधी गतिविधियां बढ़ गई हैं। राज्य सरकार ने राज्य की नीतियों में उदारता लाने के नाम पर उन्हें इतनी लंबी छूट दे दी है कि वे इसे सत्ता की दुर्बलता समझ बैठे हैं और अवसर से लाभ उठाकर, तथा पाकिस्तान और उसके एजेंटों के प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्रोत्साहन से अपनी स्थिति को मजबूत बना रहे हैं तथा राष्ट्रविरोधी शक्तियों का पुनर्संगठन कर रहे हैं। उनके हाल के बयानों और गतिविधियों के सन्दर्भ में यदि हज के बहाने पश्चिमी एशिया के देशों की उनकी हाल की यात्रा पर विचार किया जाय तो उसके पीछे छिपे खतरनाक उद्देश्य का पता चलता है। अतः कार्य समिति भारत और काश्मीर की सरकार से आग्रह करती है कि वे शेख अब्दुल्ला की राष्ट्रविरोधी गतिविधियों को रोकने के लिए प्रभावशाली कदम उठाये और उन्हें किसी भी बहाने देश छोड़कर न जाने दे।

[4 दिसम्बर 1964; पटना, के०का०स०]

64.14. बर्मा से उजड़े भारतीय

बर्मा सरकार ने हाल में ही जिस नये तरीके से राष्ट्रीयकरण किया उससे बर्मा में रहने वाले 8 लाख भारतवंशी अपनी जीविका के साधनों से वंचित हो गये हैं। उस देश में विदेशी मुद्रा विनिमय के जो नये नियम लागू किये गये और 98 प्रतिशत आयकर लागू किये जाने से अनेक लोगों को बाध्य होकर भारत में शरण लेनी पड़ी है। इसके परिणामस्वरूप बर्मा में उन्हें कुल मिलाकर अपनी 1500

करोड़ रु० मूल्य की अचल और 700 करोड़ रु० मूल्य की चल संपत्ति से हाथ धोना पड़ा है।

भारतीयों से भेदभाव—अपनी संपत्ति भारत लाने के मामले में बर्मा के भारतीयों के साथ जिस तरह का भेदभाव बरता गया उसमें भारत सरकार भार-तीयों का साथ देने में पूरी तरह विफल रही है। जबकि पाकिस्तानियों को उनके दूतावास के माध्यम से अपनी संपत्ति पाकिस्तान ले जाने दी गई और ब्रिटिश तथा अमरीकी नागरिकों को उनकी संपत्ति का पूरा मुआवजा उनके देश में और पौंड-स्टर्लिंग में दिया गया, भारतीयों को पैसे-पैसे का मोहताज बनाकर निकाला गया है।

जिन भारतीयों ने बर्मा को अपनी मातृभूमि स्वीकार किया और पिछले 125 वर्षों में बर्मा में समृद्धि लाने के लिए अपना खून और पसीना बहाया है, भारत सरकार की थोथी बातों से उन भारतीयों के जख्मों पर मरहम नहीं लगाया जा सकता।

अतः कार्य समिति भारत सरकार से अनुरोध करती है कि वह बर्मा में रहने वाले भारतीयों की संपत्ति के प्रश्न पर बर्मा सरकार से वार्ता करे और भारतीयों द्वारा छोड़ी गई संपत्ति के पूरे मुआवजे की मांग करे। रंगून स्थित भारतीय दूतावास से कहा जाय कि वह ऐसी व्यवस्था करें जिससे बर्मी अधिका-रियों द्वारा भारतीयों, विशेषकर महिलाओं, को अपमानित किया जाना रुके। बर्मा सरकार से कहा जाना चाहिए कि जो भारतीय बर्मा में रहना नहीं चाहते उनको देश छोड़ने में मदद दी जाय। इन भारतीयों को बसाने के लिए विशेष कदम उठाये जाने चाहिए।

[4 दिसम्बर 1964; पटना, के०का०स०]

64.16. श्रीलंका स्थित भारतवंशी

श्रीलंका में बसे भारतीयों के संबंध में हाल में ही भारत सरकार और श्रीलंका सरकार के बीच जो समझौता हुआ उसे श्रीलंका के प्रधानमंत्री की जीत और भारत के प्रधानमंत्री द्वारा भारतीय हितों के साथ विश्वासघात की संज्ञा दी जायेगी।

कोटलेवाला समझौता—स्मरणीय है कि 10 वर्ष पूर्व 1954 में भारत के श्री नेहरू और श्रीलंका के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जॉन कोटलेवाला के बीच इस विषय पर बातचीत हुई थी। इस बातचीत के दौरान श्रीलंका के प्रधान-मंत्री 4·5 लाख भारतवंशियों को तत्काल श्रीलंका की नागरिकता प्रदान करने को राजी हो गये थे। अन्य 2·5 लाख के संबंध में आश्वासन दिया गया था कि उन्हें भी कुछ वर्ष में श्रीलंका की नागरिकता दे दी जायेगी। भारत के प्रधान-मंत्री 2 लाख लोगों को भारतीय नागरिकता देने को राजी हो गये थे। मतभेद केवल 50,000 व्यक्तियों की स्थिति के बारे में था। लेकिन, इसके प्रतिकूल अब

जो समझौता हुआ है, उसमें श्रीलंका ने सिर्फ 3 लाख को नागरिकता देना मंजूर किया और भारत सरकार 5·5 लाख लोगों को लेने को राजी हो गई। 4 लाख लोगों के दर्जे को दोनों सरकारों के बीच वार्ता के अगले दौर में तय किया जायेगा। इन आंकड़ों के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट है कि भारत सरकार अंत तक घुटने टेकती गई और उधर श्रीलंका सरकार का रवैया कठोर एवं अपरिवर्तनीय होता गया। अतः अब यह कहना कि श्रीलंका के साथ हुआ यह समझौता भारतीय राजनयिकों की सफलता है, भारत की जनता को धोखा देना है। सच तो यह है कि भारतीय राजनयिक बुरी तरह असफल हुए हैं, और श्रीलंका में रहने वाले भारतीयों के हितों के साथ विश्वासघात किया गया है।

समझौते का उल्लंघन—फिर, श्रीलंका सरकार ने भारतीयों के लिए पृथक रजिस्टर रखने की व्यवस्था करके हाल के समझौते का भी उल्लंघन किया है। समझौते का दूसरा उल्लंघन हाल में ही आयात नियंत्रण कानून लागू करके किया गया है। यह कानून 1 जनवरी 1965 से लागू समझा जायेगा।

अतः कार्य समिति महसूस करती है कि भारत सरकार घोषणा करे कि चूंकि समझौते की एक के बाद दूसरी व्यवस्था को तोड़ा जा रहा है, अतः हाल में हुआ भारत-श्रीलंका समझौता भारत पर लागू नहीं किया जा सकता। ऐसी घोषणा करके ही श्रीलंका में भारतीयों को और अधिक अपमानित होने से तथा कष्टों से बचाया जा सकता है। इसके बिना हाल में ही हुए समझौते से श्रीलंका में रहने वाले भारतीयों की स्थिति और कठिन एवं संकटापन्न हो जायेगी।

[4 दिसम्बर 1964; पटना, के०का०स०]

65.01. विदेशी नीति पर वक्तव्य

संघर्ष के नये केन्द्र—पिछले एक वर्ष में विश्व में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। पूर्व और पश्चिम के बीच का तनाव कम होता जा रहा है। ख़ुश्चेव के हटने का इस नीति पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। चीन की आक्रामक कार्यवाहियाँ बराबर जारी हैं। उसके द्वारा अणु बम के विस्फोट से उससे संकट और बढ़ गया है। फलतः एशिया और अफ्रीका में संघर्ष के नये केन्द्र पैदा हो गये हैं। भारत के विरुद्ध कम्युनिस्ट चीन का पाकिस्तान के साथ गठबंधन और दृढ़ हुआ है तथा उन्होंने भारत के खिलाफ विश्व भर में प्रचार और कूटनीतिक स्तर पर जिहाद छेड़ दिया है। चीन ने तिब्बत में तथा पाकिस्तान ने काश्मीर में युद्ध-विराम रेखा पर सेना का भारी जमाव किया है। युद्ध-विराम रेखा के उल्लंघन तथा भारतीय सीमा में घुसपैठ की घटनाएं बढ़ती जा रही हैं। यह सब तनाव को बनाये रखने के इरादे से किया जा रहा है।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में मजहब—एक और उल्लेखनीय बात सामने आयी है। मजहब और जाति अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों में महत्वपूर्ण बनते जा रहे हैं। सोमालिया में हाल में विश्व मुस्लिम कान्फ्रेंस हुई है। मिस्र की संरक्षता में

मुसलमानों द्वारा तथा रोम के पोप और अन्य पश्चिमी देशों के सहारे ईसाई मिशनों द्वारा एशियाई और अफ्रीकी जनता को अपने पक्ष में करने के उद्देश्य से बड़ी तेजी से मत-परिवर्तन की योजनाएं चलाई जा रही हैं। इसराइल के विरुद्ध अरब राष्ट्रों की एकता तथा सेण्टो के होते हुए भी पाकिस्तान, ईरान और तुर्की की सैनिक संधि इस विषय के कुछ और उल्लेखनीय उदाहरण हैं।

भारत की विदेश नीति के निर्माता बराबर इन घटनाओं की ओर दुर्लक्ष करते आ रहे हैं तथा वे अपनी नीतियों के मूल्यांकन तथा पुनर्निर्धारण के लिए तैयार नहीं हैं। वे शांति, सहअस्तित्व, बिन-लगाव अदि शब्दों के मोह में फंसे हैं। यह भी विचार नहीं किया जाता कि इनका वर्तमान परिस्थिति से कहां तक तथ्यगत संबंध रह गया है। आज हम मास्को और वाशिंगटन के बीच चलनेवाले शीत-युद्ध के दर्शक मात्र नहीं बल्कि स्वयं चीन के साथ संघर्ष-रत हैं। एशिया में संघर्ष और शक्ति के दो नये एवं सक्रिय केन्द्र नई दिल्ली और पीकिंग बन गये हैं। इस स्थिति में हमारे लिए बिन-लगाव की नीति की रट लगाते जाना निरर्थक है। लगता है कि हम बदलती हुई परिस्थिति के साथ अपनी नीति को बदलने लायक गतिमान एवं चैतन्य नहीं रहे। हमारे दूतावासों ने, जो अभी तक केवल श्री नेहरू की नीति और व्यक्तित्व का ही प्रचार करने के आदी रहे हैं, इस हालत को और भी बिगाड़ दिया है। चीन के आक्रमण और काश्मीर जैसे प्रश्नों पर भी वे सदैव ही दबी जबान में अपनी बातें रखते हैं। वे भारतीय दृष्टिकोण से स्थितियों का विश्लेषण कर उनकी महत्ता का आंकलन करने की क्षमता खो बैठे हैं।

विदेश नीति में आवश्यक बदल—फलतः हमारे मित्र भी इन महत्वपूर्ण प्रश्नों पर हमारी नीति के संबंध में संदेहशील हैं। इस स्थिति को बदलना होगा। जैसा कि स्वयं श्री नेहरू ने कहा था 'अपनी कल्पना के कृत्रिम जगत' से हमें बाहर निकलकर यथार्थ का सामना करना होगा। हम समझें कि विदेश नीति केवल नीति है, अपरिवर्तनीय सिद्धांत नहीं। यदि उसे भारत के उदात्त हितों का संरक्षण करना है, जो कि किसी भी देश की विदेश नीति का मूल उद्देश्य रहता है, तो उसे बदलती हुई स्थितियों में बदलना भी चाहिए। इस नीति निर्धारण के साथ ही नीति की व्याख्या तथा उसका व्यवहार भी अति महत्व का है। इस दृष्टि से भी विदेश विभाग में आवश्यक परिवर्तन करने होंगे।

भारतीय जनसंघ का सुनिश्चित मत है कि भारत के हितों की तथा उसकी अखंडता और सीमाओं की रक्षा करने के लिए, देश की विदेश नीति का निम्नलिखित आधार पर पुनर्निर्धारण होना चाहिए :

(1) कम्युनिस्ट चीन और पाकिस्तान के आक्रमण का संकट इच्छा मात्र से नहीं टल सकता और न उनके साथ शांतिपूर्वक रहने की हमारी कामना से उसे कम किया जा सकता है। अतः उनके संयुक्त संकट का मुकाबला करने के उद्देश्य से हमें निम्नलिखित पग उठाने चाहिए :

(क) कम्युनिस्ट चीन के साथ दौत्य संबंध तोड़ दिये जायें तथा उसके

संयुक्त राष्ट्रसंघ में प्रवेश की वकालत बन्द कर दी जाय। संयुक्त राष्ट्रसंघ में आने पर निषेधाधिकार मिलने के कारण चीन की शरारत की शक्ति बहुत बढ़ जायेगी। फॉरमोसा की चीनी सरकार को मान्यकर उसके साथ दौत्य संबंध स्थापित किये जायें।

(ख) दक्षिणी-पूर्वी एशिया के तथा अन्य देशों के साथ (जो कम्युनिस्ट चीन के विस्तारवाद से आक्रांत हैं अथवा जो वैचारिक अथवा अन्य किसी कारण से कम्युनिस्ट चीन के विस्तार को रोकना चाहते हैं) हमें अपने संबंध निकट के बनाना चाहिए। हमें स्पष्ट बताना चाहिए कि हम मलेशिया द्वारा अपनी अखंडता की रक्षा के लिए किये जाने वाले प्रयत्नों में उसके साथ है।

(ग) कम्युनिस्ट चीन तथा पाकिस्तान के अपप्रचार को रोकने के लिए प्रभावी पग उठाये जायें तथा चीन द्वारा तिब्बत में और पाकिस्तान द्वारा पूर्वी बंगाल में की गई नृशंसताओं के तथ्यों से विश्व के सभी देशों को अवगत किया जाय।

(घ) शस्त्रास्त्रों का निर्माण बढ़ाकर, निरोधक उपाय के रूप में अणु अस्त्रों का निर्माण कर, सभी युवकों की दो वर्षों के लिए सैनिक भर्ती की व्यवस्था कर तथा कम से कम 20 लाख की स्थायी सेना बनाकर हमें देश को सुरक्षा के लिए पूर्ण सज्ज करना चाहिए।

(ङ) शत्रुओं द्वारा आक्रांत भूभाग की मुक्ति के लिए सभी आवश्यक पग उठाये जायें।

(च) दलाई लामा की निर्वासित सरकार को मान्यता देकर तिब्बत की स्वतंत्रता के उनके प्रयत्नों को पूर्ण समर्थन देना चाहिए।

(2) **अफ्रीकी राष्ट्रों का आर्थिक विकास**—अफ्रीकी महाद्वीप का एक नई शक्ति के रूप में आविर्भाव हुआ है। वहां के नये राष्ट्र विश्व राजनीति में महत्व का भाग अदा करेंगे। भारतीय प्रवासियों ने इन देशों के विकास तथा राजनीतिक स्वतंत्रता के संघर्ष में बहुत योगदान दिया है। इनमें से अनेक देश अपने स्वतंत्रता संग्राम में भारत से स्फूर्ति और प्रेरणा भी ग्रहण करते रहे हैं। भारत को इन देशों के आर्थिक विकास में अधिक रुचि लेनी चाहिए तथा उनके साथ निकट के संबंध बनाने चाहिए।

(3) पश्चिमी एशिया में इसराइल ही सही अर्थ में आज एक प्रजातंत्रीय देश है। उसने विकास का एक ऊंचा स्तर प्राप्त किया है। वह अफ्रीका के नये देशों के आर्थिक विकास में महत्व का भाग ले रहा है। उनके साथ उसके निकट के संबंध भी प्रस्थापित हो रहे हैं। इसराइल के साथ भारत निकट के संबंध लाकर पश्चिमी एशिया को स्थिरता दे सकेगा तथा अफ्रीकी देशों में भी उसकी स्थिति सुधरेगी। अतः आवश्यक है कि इसराइल के साथ पूर्ण दौत्य संबंध स्थापित किये जायें।

(4) **सांस्कृतिक बंधन**—संस्कृति के बंधन राष्ट्रों के बीच के संबंधों को

अधिक स्थायी बनाते हैं। अवसर विशेष के अनुसार की गई आर्थिक एवं राजनीतिक संधियों के स्थान पर सांस्कृतिक सूत्र दृढ़तर होते हैं। भारत को अपने सांस्कृतिक संबंधों के विषय में स्पष्ट होना चाहिए तथा पुराने सूत्रों को पुनर्संस्थापित करना चाहिए। इस दृष्टि से नेपाल तथा दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों का भारत के साथ विशेष संबंध है। हमें इनको सब प्रकार से मजबूत बनाना चाहिए।

(5) **स्वतंत्रता देने से अंग्रेजों का इनकार**—मॉरीशस, त्रिनीडाड तथा ब्रिटिश गायना में भारतीय प्रवासियों का बहुमत है। भारत उनकी ओर कुछ ध्यान दे, यह उनकी सहज अपेक्षा है। उन्हें स्वतंत्र करने में ब्रिटिश शासन की विलंब की नीति निश्चित ही विभेदपूर्ण है तथा भारतीय प्रवासियों के प्रति अंग्रेजों के पूर्वाग्रह की द्योतक है। भारत को अपने प्रभाव का उपयोग कर इन देशों को स्वतंत्र कराना चाहिए।

(6) बर्मा लंका, तनजानिया तथा मोजंबीक की सरकारों कि भारतीय प्रजावासियों, जिन्होंने इन देशों के विकास में बहुत कुछ काम किया, के प्रति नीति अत्यन्त खेदजनक है। भारत सरकार की इन प्रवासियों के हितों के प्रति उपेक्षा और विश्वासघात की नीति से इन सरकारों की ओर भी हिम्मत बढ़ी है तथा उन्होंने उनके प्रति अधिकाधिक अन्याय एवं विभेदपूर्ण व्यवहार रखा है। इन देशों में स्थित भारतीय दूतावासों का कार्य भी कुछ सुखद नहीं रहा। सरकार को इन प्रवासियों के हित में अधिक रचनात्मक रुचि लेनी चाहिए। इन देशों से लौटने वाले प्रजावासियों की सहायता तथा पुनर्वास की व्यवस्था होनी चाहिए।

(7) **भारतीय दूतावासों का भारतीयकरण**—भारत के अधिकांश दूतावास खर्चीले हैं। वहां का वातावरण तथा तौर-तरीका भारतीय के स्थान पर अंग्रेजी अधिक है। इनका भारतीयकरण करना चाहिए। आवश्यकता है कि विदेश विभाग का एक विशेष संवर्ग प्रशिक्षित किया जाय, जो भारतीय जीवन, आदर्शों और आकांक्षाओं से अनुप्राणित हो।

[24 जनवरी 1955; विजयवाड़ा, बारहवां सा०अ०]

65.13. विदेशों में अब्दुल्ला की गतिविधियां

अब्दुल्ला की प्रस्तावित पीकिंग यात्रा—विदेशों में शेख अब्दुल्ला की भारत विरोधी गतिविधियों, अलजीयर्स में कम्युनिस्ट चीन के प्रधानमंत्री श्री चाऊ एन-लाई के साथ उसकी भेंट और चीन सरकार के निमंत्रण पर उसके पीकिंग जाने के निश्चय ने भारतीय जनसंघ द्वारा उसकी विदेश यात्रा के विषय में अभिव्यक्त आशंकाओं को अक्षरशः सत्य सिद्ध कर दिया है। केन्द्रीय कार्य समिति को इस बात का खेद है कि भारत सरकार ने इस संबंध में जनसंघ द्वारा दी गई मौखिक तथा लिखित चेतावनी की उपेक्षा कर शेख अब्दुल्ला को पारपत्र देकर न केवल इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति के पैदा करने में सीधा योगदान दिया है, अपितु उसे काहिरा तथा अन्य स्थानों पर स्थित भारतीय दूतावासों ने शाही सम्मान देकर

उसकी शरारत करने की क्षमता को और भी बढ़ावा दिया है।

अपने भाषणों, वक्तव्यों और गतिविधियों से शेख अब्दुल्ला ने अपने वास्तविक रूप को, जिसके विषय में भारतीय जनसंघ को कभी भी कोई भ्रांति नहीं थी, संसार के सामने खुले रूप में पेश कर दिया है। अब यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया है कि भारत और पाकिस्तान में सद्भावना पैदा करने और कम्युनिस्ट चीन के संयुक्त रूप से मुकाबला करने के लिए दोनों को निकट लाने की उसकी घोषणाएं केवल धोखा मात्र थीं। पाकिस्तान के विदेश मंत्री की यह घोषणा कि यदि भारत ने शेख को पीकिंग के लिए पारपत्र न दिया तो पाकिस्तान उसे पारपत्र देगा और यह कि पाकिस्तान शेख का अपना घर है, जहां वह हर समय बिना किसी रोक टोक के आ जा सकता है, यह स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त है कि शेख अब्दुल्ला पाकिस्तान का खेल खेल रहा है और वह पाकिस्तान के इशारे पर कम्युनिस्ट चीन के साथ बातचीत करके गंभीर भारत-विरोधी षड्यंत्र रच रहा है।

अब्दुल्ला-पिण्डी-पीकिंग षड्यंत्र—यह स्थिति जहां भारत के शासकों के लिए एक चुनौती है, वहां पश्चिमी राष्ट्रों के लिए भी आंख खोलने वाली है। उन्हें अब तो यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि कम्युनिस्ट चीन के साथ अपनी सांठ-गांठ पक्की करने के लिएपाकिस्तान काश्मीरऔर शेख अब्दुल्ला का प्रयोग कर रहा है। वास्तव में कम्युनिस्ट चीन को जम्मू-काश्मीर राज्य के लद्दाख इत्यादि क्षेत्रों की रिश्वत देकर वह उसे भारत विरोधी कार्यवाहियों के लिए प्रोत्साहन देना चाहता है। इन परिस्थितियों में काश्मीर को पाकिस्तान और कम्युनिस्ट चीन के पंजों में पड़ने से रोकना, संपूर्ण दक्षिणी एशिया की सुरक्षा के लिए आवश्यक हो गया है।

भारतीय जनसंघ भारत सरकार से बलपूर्वक अनुरोध करता है कि वह काश्मीर तथा शेख अब्दुल्ला के विषय में अपनी अनिश्चितता की नीति को त्याग-कर, शेख के प्रति एक राष्ट्रद्रोही के अनुरूप आवश्यक व कठोर नीति अपनाये। जनसंघ पश्चिमी राष्ट्रों से भी अपील करता है कि वे पाकिस्तान और शेख अब्दुल्ला के मनसूबों को ठीक रूप से समझें और उन्हें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रोत्साहन देने की नीति का परित्याग करें।

काश्मीर में अब्दुल्ला-समर्थक तत्वों की गतिविधियों को बड़ी दृढ़ता से दबाया जाय। उदार नीति के नाम पर भारत-विरोधी तत्वों को अपनी गति-विधियों को जारी रखने देना अव्यावहारिक और राष्ट्रहितों के प्रतिकूल है।

दूसरे, भारत सरकार को अरब राष्ट्रों को स्पष्ट रूप में बता देना चाहिए कि उनके द्वारा शेख अब्दुल्ला को दी गई किसी भी प्रकार की सहायता अथवा समर्थन को भारत अपने प्रति अमैत्रीपूर्ण कार्यवाही समझेगा।

[3 अप्रैल 1965; जयपुर, के०का०स०]

65.14. कच्छ समझौता रद्द करो

लज्जाजनक समर्पण—प्रधानमंत्री तथा अन्य सरकारी प्रवक्ता अब कितनी भी सफाई क्यों न दें, इस तथ्य को छिपाया नहीं जा सकता कि कच्छ-सिंध सीमा के प्रश्न पर भारत-पाक समझौता पाकिस्तान के नग्न आक्रमण के सम्मुख एक लज्जाजनक समर्पण है। केन्द्रीय कार्य समिति समझौते की तीव्र भर्त्सना करती है और शास्त्री सरकार पर राष्ट्रहितों के साथ अक्षम्य विश्वासघात करने का आरोप लगाती है।

इस समझौते के द्वारा भारतीय हितों पर मुख्यतः तीन दृष्टियों से कुठारा-घात हुआ है। प्रथम, पाकिस्तान को भारतीय क्षेत्र में गश्त लगाने का अधिकार देकर और कच्छ में अपनी सेना रखने के अपने अधिकार का परित्याग कर, भारत की प्रभुसत्ता का उल्लंघन किया गया है। द्वितीय, समझौता पाकिस्तान के दावे को मान्य करता है कि कच्छ का रण एक 'विवादास्पद क्षेत्र' है; भारत सरकार अब तक इस दावे को अस्वीकार करती रही है। तीसरी बुरी बात यह है कि कच्छ के प्रश्न को एक अंतर्राष्ट्रीय न्यायाधिकरण को सौंपना स्वीकार करके शास्त्री सरकार ने एक आत्मघाती परंपरा डाली है जो आंतरिक मामलों में विदेशियों को शरारत के लिए खतरनाक अवसर देती है। यह विवाद सारहीन है कि न्यायाधिकरण के संबंध में समझौते का प्रावधान पंच फैसले की व्यवस्था करता है कि नहीं। भारत सरकार ने यह स्वीकार किया है कि न्यायाधिकरण का निर्णय अनिवार्यतः लागू होगा और यह कि न्यायाधिकरण तब तक कार्य करेगा जब तक उसका निर्णय पूर्णतः लागू नहीं हो जाता। किसी भी शाब्दिक मायाजाल से यह तथ्य ओझल नहीं किया जा सकता कि इस समझौते के द्वारा भारत की प्रभुसत्ता विदेशी शक्तियों के निर्णय का विषय बन गई है। सरकार ने इस समझौते पर हस्ताक्षर करके अपने संवैधानिक अधिकारों का अतिक्रमण किया है।

आक्रमणपूर्व की यथास्थिति—सरकार ने संसद को आश्वासन दिया था कि जब तक कच्छ में आक्रमण के पूर्व की स्थिति पूर्णतया कायम नहीं हो जाती, पाकिस्तान के साथ किसी प्रकार का समझौता नहीं किया जायेगा। संसद को बताया गया था कि कच्छ पर पाकिस्तान का पहला अतिक्रमण 25 जनवरी 1965 को हुआ था। इसी संदर्भ में सरकारी प्रवक्ताओं ने 1 जनवरी 1965 के पूर्व की स्थिति कायम होने की बात कही थी। अब यह कहा जा रहा है कि चूंकि पाकिस्तान डिग, कन्जरकोट व सुराई की 20 मील की पट्टी में 1 जनवरी 1965 के पूर्व गश्त लगाता रहा है, अतः यथापूर्व स्थिति के कायम होने का अर्थ यह है कि पाकिस्तान के उपर्युक्त अधिकार को स्वीकार किया जाय। यह तर्क बड़ा अजीब है। यदि वस्तुतः पाकिस्तान 1 जनवरी 1965 के पूर्व इस क्षेत्र में प्रवेश कर चुका था, तो उसकी उपस्थिति गैर-कानूनी और एक आक्रमणकारी के ही रूप में थी। ऐसी स्थिति में आक्रमण के यथापूर्व की स्थिति कायम करने के सरकार के संकल्प का 1 जनवरी 1965 की तारीख से कोई संबंध नहीं रह जाता। एक बात और। यह स्वीकार

करना कि पाकिस्तान 1 जनवरी 1965 के पूर्व गश्त करता रहा था, सरकार द्वारा आत्मनिंदा करने जैसा है, क्योंकि इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सरकार को कच्छ में पाकिस्तान के आक्रमण के बारे में बहुत दिनों तक पता भी नहीं था।

भावी आक्रमण के लिए पाक व्यूह रचना—इस समझौते के बारे में पाकिस्तान में हुई प्रतिक्रियाओं से उनकी आंखें खुल जानी चाहिए जो इसे भारत-पाक संबंधों में सुधार का श्रीगणेश समझने की कल्पना कर रहे हैं। पाकिस्तान में इस समझौते को भारत की 'सैनिक पराजय' का परिणाम और काश्मीर समस्या के समाधान के लिए 'एक आदर्श' कहकर प्रचारित किया जा रहा है। पाकिस्तान ने प्रधानमंत्री शास्त्री के 'अयुद्ध' प्रस्ताव के प्रति जैसी उपेक्षा दिखाई है उससे भी यह स्पष्ट है कि पाकिस्तान कच्छ समझौते को भारत-पाक तनावों को कम करने का एक साधन नहीं, अपितु अपने भावी आक्रमणकारी मंतव्यों को पूरा करने की एक चाल मात्र समझता है।

भारतीय जनसंघ अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं को शांतिपूर्ण वार्ता द्वारा हल करने का हामी है। किंतु उसका यह भी दृढ़ मत है कि आक्रमण का सभी उपायों से प्रतिरोध होना चाहिए। आक्रमणकारी का तुष्टीकरण दूरगामी दृष्टि से शांति को ही संकट में डाल देता है। कच्छ में पाकिस्तान का आचरण स्पष्टतः एक ऐसा मामला है जिसमें पड़ौसी देश की भूमि पर अपने बेहूदा दावे को मनवाने के लिए नग्न बल प्रयोग से काम लिया गया है। इस बल प्रयोग का पूर्ण शक्ति के साथ प्रतिकार होना चाहिए था। यह खेद का विषय है कि पाकिस्तान को उचित पाठ पढ़ाने के बजाय उसके गुनाह पर पर्दा डाला जा रहा है और यह धारणा पैदा होने दी जा रही है कि भारत सैनिक शक्ति के सम्मुख झुक गया। इससे न तो भारत-पाक संबंधों में सुधार होगा और न सच्ची शांति की ही स्थापना होगी।

केन्द्रीय कार्य समिति अनुभव करती है कि अभी समय है। सरकार को संपूर्ण परिस्थितियों का पुनरावलोकन कर सारे मामले पर पुनर्विचार करना चाहिए और विभिन्न क्षेत्रों, विशेषतः पाकिस्तान की प्रतिक्रियाओं के प्रकाश में तथा जन भावनाओं का आदर करते हुए इस समझौते को रद्द कर देना चाहिए।

अंतर्राष्ट्रीय समझौते को रद्द करने में सरकार के मार्ग में कोई नैतिक कारण बाधक नहीं बनना चाहिए। विश्व इतिहास में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं जब कि अंतर्राष्ट्रीय समझौतों को रद्द किया गया है। स्वयं भारत सरकार ने हाल में ही 'वायस आफ अमेरिका' समझौते पर हस्ताक्षर होने के बाद भी पुनर्विचार करना आवश्यक समझा था। कच्छ समझौते को रद्द करके भारत सरकार राष्ट्रीय मनीषा का ही सम्मान करेगी और जनता को दिये गये आश्वासनों को पूर्ण करेगी।

यदि सरकार अपनी भूल का परिमार्जन करने में विफल रहती है तो संसद का, जो राष्ट्र की सर्वोच्च जन-प्रतिनिधि संस्था है और जिसकी इस मामले में कार्य-

पालिका (सरकार) द्वारा उपेक्षा की गई है—यह कर्तव्य है कि वह इस अपमान-जनक समझौते को ठुकरा दे।

जनसंघ जनता का आवाहन करता है कि वह कच्छ समझौते की गंभीर संभावनाओं को समझे। सरकार को इस प्रकार देश की अखंडता तथा प्रभुसत्ता को खतरे में डालने का कोई अधिकार नहीं है। जनता अपनी सत्ता प्रस्थापित करे और सरकार को इस बात के लिए बाध्य करे कि वह या तो इस समझौते को रद्द करे अथवा त्याग-पत्र दे दे।

[10 जुलाई 1965; जबलपुर, के०का०स०]

65.19. कच्छ समझौता विरोधी विराट प्रदर्शन

भारतीय जनसंघ के आवाहन पर कच्छ समझौते के विरुद्ध दिनांक 16 अगस्त को देश के कोने-कोने से जिस विशाल संख्या में भारत के नागरिकों ने एकत्र होकर संसद भवन के समक्ष अत्यंत ही शांतिपूर्ण, अनुशासित तथा प्रभावी प्रदर्शन किया उसके लिए हम उन सबका अभिनंदन करते हैं, जिनके प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष योगदान से यह प्रदर्शन सफल हुआ है।

इस महान जन-प्रदर्शन से एक बार पुनः यह प्रमाणित हो गया है कि भारत की जनता अपनी स्वतंत्रता और राष्ट्रीय अखंडता की रक्षा के लिए सब प्रकार से कृतसंकल्प है। प्रदर्शन ने प्रजातंत्र में लोगों की आस्था को प्रकट किया है। इस प्रदर्शन से यह स्पष्ट हो गया है कि प्रजातंत्रात्मक शक्तियां उन तत्वों से भली-भांति मोर्चा ले सकती हैं जो विभिन्न समस्याओं को हल करने में शासन की विफलता से उत्पन्न व्यापक जन-असंतोष का लाभ उठाकर देश की एकता तथा प्रजातंत्र को आघात पहुंचाना चाहती हैं।

विदेश मंत्रियों की बैठक स्थगित—प्रदर्शन का तत्काल परिणाम यह हुआ है कि शासन को भारत-पाक विदेश मंत्रियों की 20 अगस्त की प्रस्तावित बैठक स्थगित करनी पड़ी है। यदि जनता इसी प्रकार क्रियाशील तथा जागरूक रही तो कच्छ-समझौता कोरा कागज मात्र ही रह जायेगा।

अत्यंत दुःख का विषय है कि संसद के कांग्रेसी तथा कुछ अन्य सदस्यों ने जन-भावना का आदर नहीं किया। समझौते पर अपनी मुहर लगाकर उन्होंने जनता का विश्वास खो दिया है। अतः आवश्यक है कि वे संसद से त्यागपत्र देकर जनता का पुनः विश्वास प्राप्त करें। यदि वे स्वेच्छा से पद-त्याग नहीं करते तो हम राष्ट्रपति महोदय से मांग करेंगे कि वे लोकसभा को भंग करें और पुनः चुनाव करवाकर जनता को राष्ट्र की सार्वभौमसत्ता से संबंधित इस महत्वपूर्ण विषय पर अपना मत प्रकट करने का अवसर दें।

भारतीय जनसंघ राष्ट्र को विश्वास दिलाता है कि वह राष्ट्र-जीवन के सभी संघर्षों में सदैव हरावल दस्ते का काम करेगा और भारतीय स्वाधीनता

और सम्मान की रक्षा के लिए सर्वस्व का समर्पण करने में भी संकोच नहीं करेगा।

जनसंघ के कार्यकर्ताओं ने इस अवसर पर अपनी कर्तव्यनिष्ठा, अध्यवसाय तथा कष्ट सहिष्णुता का जो परिचय दिया है वह भविष्य के दायित्वों का निर्वाह करने में हमारी पूंजी है जिसे हमें बढ़ाना होगा। परिस्थिति की मांग है कि हमारा कदम और तेजी से बढ़े और गांव-गांव में जाकर हम राष्ट्रीय जनमत को इतना प्रभावी तथा प्रबल बनायें कि फिर किसी को उसकी अवहेलना करने का दुस्साहस न हो।

प्रतिनिधि सभा केन्द्रीय कार्य समिति को आदेश देती है कि आंदोलन को आगे बढ़ाने के लिए, जो भी पग आवश्यक समझे, उठाये।

[17 अगस्त 1965; दिल्ली, भा०प्र०स०]

65.26. भारत-पाक युद्ध

पाकिस्तानी आक्रमण की चुनौती का राष्ट्र— शासन, सुरक्षा सेनाओं, राजनीतिक दलों तथा जनता— ने जैसा शानदार उत्तर दिया है उस पर भारतीय जनसंघ को गर्व है। स्वतंत्रता के 18 वर्षों में शासन की नीतियां तथा गतिविधियां जनभावना के कभी इतनी अनुकूल नहीं रही जितनी कि पिछले कुछ सप्ताह रही हैं। कोई आश्चर्य नहीं कि सारा देश पाकिस्तान के मनसूबों को चकनाचूर करने के लिए एक व्यक्ति की तरह उठ खड़ा हुआ है।

यह बड़े गौरव का विषय है कि पाकिस्तान द्वारा युद्ध की लम्बी तैयारी, श्रेष्ठतर शस्त्रास्त्र और चीन के युद्धकालीन दबाव के बावजूद भारतीय सेनाएं युद्ध को शत्रु की भूमि के भीतर ले जाने में और उसकी टैंक तथा विमान शक्ति को गहरा आघात पहुंचाने में सफल हुई हैं। इससे हमारी सेनाओं को अक्षय कीर्ति प्राप्त हुई है और वे सारे राष्ट्रों के अभिनंदन की पात्र बनी हैं। किन्तु यह सोचना गलत होगा कि पाकिस्तानी सेना को अपंग कर दिया गया है। पाकिस्तान का आक्रामक रवैया अभी तक शान्त नहीं हुआ है। युद्ध-विराम के योजनाबद्ध उल्लंघनों तथा पाकिस्तानी नेताओं के धमकी से भरे हुए भाषणों से यह स्पष्ट है कि पाकिस्तान का इरादा काश्मीर समस्या को राजनीतिक स्तर पर पुनर्जीवित करने के लिए सशस्त्र दबाव बनाये रखना है।

इस स्थिति में असावधान होने के लिए कोई भी गुंजाइश नहीं है और न किसी प्रकार की ढिलाई के लिए ही स्थान है। आने वाले दिन कठिनाई से पूर्ण हैं और देश को एक लम्बे संघर्ष के लिए तैयार रहना है।

सुरक्षा परिषद की विफलता—यह बड़े खेद तथा निराशा की बात है कि सुरक्षा परिषद पाकिस्तान को, जिसने 5 अगस्त 1965 को जम्मू-काश्मीर में दोबारा अकारण आक्रमण आरंभ किया, आक्रमणकारी घोषित करने में विफल रही है। इस प्रकार परिषद ने संघर्ष के मूल प्रश्न को टाल दिया है। जम्मू-काश्मीर

में वर्तमान युद्ध-विराम रेखा से भारतीय सेनाएं हटाने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता क्योंकि समूचा जम्मू-काश्मीर राज्य कानूनी तथा वैधानिक दृष्टि से भारत का अटूट अंग है। संयुक्त राष्ट्रसंघ के आग्रह पर भारत ने 1948 में जो पुरानी युद्ध-विराम रेखा स्वीकार की थी, वह पाकिस्तान द्वारा बल प्रयोग करने के पश्चात समाप्त हो चुकी है। हाजी पीर दर्रा, करगिल की चौकियां तथा अन्य सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान जिन पर अब भारतीय सेनाओं का कब्जा है, भारतीय भूमि का भाग है। वहां से सेनाएं हटाने का प्रश्न ही नहीं उठता। इसके अतिरिक्त करगिल की चौकियां लद्दाख को शेष भारत से जोड़ने वाली जीवन-नलिका की रक्षा के लिए आवश्यक है। पाकिस्तान और कम्युनिस्ट चीन की सांठगांठ तथा चीन के आक्रामक रवैये को ध्यान में रखते हुए श्रीनगर-लेह सड़क की रक्षा न केवल भारत की सुरक्षा के लिए अपितु इस संपूर्ण क्षेत्र को पीकिंग के विस्तारवाद से बचाने के लिए आवश्यक है।

विदेश नीति का पुनर्मूल्यांकन—पाकिस्तानी आक्रमण के पूर्व तथा पश्चात् की घटनाओं तथा चीनी युद्ध सामग्री के प्रयोग और राजनैतिक तथा सैनिक स्तर पर पाकिस्तान व चीन के पारस्परिक परामर्श से यह भली भांति सिद्ध हो गया है कि पाकिस्तान और चीन के बीच मिलीभगत का उद्देश्य भारतीय लोकतंत्र को उध्वस्त करना और देश के भीतर विघटन तथा अराजकता पैदा करना है। समय आगया है जब भारत को चीन तथा पाकिस्तान के प्रति अपनी अब तक की नीतियों का पुनर्मूल्यांकन करना चाहिए। यह स्पष्ट है कि जिस तुष्टीकरण की नीति के अन्तर्गत हमने तिब्बत पर चीन के बलात् कब्जे पर चुप्पी साध ली और पख्तूनों की पख्तूनिस्तान की मांग का समर्थन नहीं किया वह गलत और नीतिमत्ता से रहित थी। अतः भारत को स्पष्ट रूप से तिब्बत की आजादी और पख्तूनिस्तान की स्थापना का समर्थन करना चाहिए।

काश्मीर के प्रश्न को पाकिस्तानी दबाव अथवा अमरीकी और रूसी प्रभाव में आकर पुनर्जीवित करना बिल्कुल गलत होगा। काश्मीर भारत का अभिन्न अंग है जिसके बारे में पाकिस्तान को कोई अधिकार प्राप्त नहीं है। जनसंघ आशा करता है कि सरकार काश्मीर को प्रश्न को किसी बाहरी दबाव में आकर पुनर्जीवित न करने के अपने बहुत बार दोहराये गये अश्वासन पर दृढ़ रहेगी।

यह सन्तोष का विषय है कि वर्तमान नीतियों को अनुभव के प्रकाश में पुर्ननिर्धारित करने की आवश्यकता अधिकाधिक अनुभव की जा रही है। प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने, राष्ट्र के नाम अपने हाल के संदेश में इसका संकेत दिया है। पुनर्विचार की आवश्यकता सभी राष्ट्रीय नीतियों, विशेषतः नियोजन, प्रतिरक्षा व विदेशी मामलों से संबंधित नीतियों को है। नियोजन के क्षेत्र में चौथी पंचवर्षीय योजना की रचना इस प्रकार होनी चाहिए जिससे प्रतिरक्षा की आवश्यकताओं तथा खाद्योत्पादन को प्राथमिकता मिल सके। शस्त्रों तथा खाद्यान्नों की दृष्टि से आत्मनिर्भर होने की आवश्यकता की अब न तो उपेक्षा ही

की जा सकती है और न उसे टाला ही जा सकता है।

प्रतिरक्षा की दृष्टि से 20 लाख की सेना का संगठन, सभी नौजवानों के लिए सैनिक शिक्षा की व्यवस्था और अणु-अस्त्रों का निर्माण भारत के लिए आवश्यक हो गया है।

पीकिंग-पिण्डी-जकार्ता धुरी— पीकिंग-पिण्डी तथा जकार्ता की अधिनायकवादी धुरी का (एशिया में लोकतंत्र के बुर्ज) भारत के विरुद्ध उदय होना विदेश नीति के क्षेत्र में एक कटु तथ्य है। यह तीनों देश अंतर्राष्ट्रीय प्रश्नों को हल करने के लिए सशस्त्र बल प्रयोग करने में संकोच नहीं करते और संयुक्त राष्ट्रसंघ के प्रति समान रूप से विरोध की भावना रखते हैं। यह त्रिगुट विश्वशांति के लिए एक बढ़ता हुआ खतरा है।

पाकिस्तानी आक्रमण के बारे में अमरीका तथा ब्रिटेन का रवैया सर्वथा निराशाजनक है। पाकिस्तान द्वारा अमरीकी शस्त्रों के दुरुपयोग से यह सिद्ध हो गया है कि भारत ने पाक-अमरीकी सैनिक संधि का जो कड़ा विरोध किया था, और यह कहा था कि पाकिस्तान इन शस्त्रों का उपयोग केवल भारत के विरुद्ध करेगा, वह उचित था। ब्रिटेन के घोर पक्षपात पूर्ण रवैये से देश में गहरा असंतोष उत्पन्न हुआ है। इस परिस्थिति में यह आवश्यक है कि भारत उदात्त राष्ट्रीय हितों तथा सम-सहयोग के आधार पर अपनी विदेश नीति का पुर्नानिर्धारण करे। इसके लिए राष्ट्रमण्डल के साथ भारत के संबंधों पर फिर से विचार करना तथा इसराइल तथा जापान जैसे देशों के साथ निकट के संबंधों का विकास जरूरी है।

विदेशों में प्रचार—विदेशों में भारत के प्रचार तथा भारतीय दूतावासों के कार्यों पर भी पुनः दृष्टि डालना जरूरी है। भारत को न केवल सही तथा यथार्थवादी नीतियों की आवश्यकता है बल्कि उन्हें कार्यान्वित तथा सर्वविदित करने के लिए एक सक्षम तथा प्रभावी तंत्र भी जरूरी है।

[27 सितम्बर 1965; दिल्ली, के०का०स०]

66.01. ताशकन्द घोषणा

भारत-पाक शिखर-सम्मेलन के उपरान्त ताशकन्द में प्रसारित घोषणा से देश को बड़ी निराशा हुई है। इसमें भारत और पाकिस्तान के बीच स्थायी और सच्ची शांति की कोई आश्वस्ति नहीं है। पाकिस्तान ने भारत के 'अयुद्ध संधि' के असंदिग्ध प्रस्ताव को अमान्य कर केवल संयुक्त राष्ट्रसंघ घोषणा-पत्र के आधार पर समस्याओं के हल के लिए बल प्रयोग न करने के सिद्धांत का पुनरुच्चारण किया है। संयुक्त राष्ट्रसंघ का सदस्य होते हुए तथा उसके घोषणा-पत्र में उल्लिखित दायित्व से बंधे रहते हुए भी पाकिस्तान ने पिछले 18 वर्षों में तीन बार भारत पर आक्रमण कर बलपूर्वक अपनी बात मनवाने का यत्न किया है। 'अयुद्ध संधि' के प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए पाकिस्तान ने यह स्पष्ट संकेत दिया है कि जब तक काश्मीर का निर्णय उसके पक्ष में नहीं हो जाता तब तक

वह बल प्रयोग का इरादा नहीं छोड़ेगा। अतः ताशकन्द घोषणा के आधार पर यह आशा बांधना कि पाकिस्तान की आक्रामक वृत्ति समाप्त हो गई, आत्मवंचना मात्र होगी।

अपेक्षा तो यह थी कि ताशकन्द वार्ता में जम्मू-काश्मीर में पाकिस्तान के आक्रमण को पूर्णतया समाप्त कराने पर भारत जोर देगा। आक्रमण की समाप्ति तो दूर, उल्टे 5 अगस्त की रेखा तक सेना की वापसी स्वीकार कर भारत ने अपने उस भूभाग से भी हटना मान लिया है जो कानून तथा संवैधानिक दृष्टि से भारत का अविच्छिन्न अंग है और जिसे हमारे जवानों ने मुक्त किया था। यह निर्णय देश को दिये गये आश्वासनों के सर्वथा विपरीत है। सामरिक दृष्टि से इन भूभागों पर हमने इसलिए अधिकार किया था कि हम पाकिस्तानी घुसपैठियों को प्रभावी रूप से रोक सकेंगे और लद्दाख में चीनी आक्रमण के विरुद्ध अपनी सुरक्षा के दायित्व का ठीक तरह से निर्वाह कर सकेंगे। पाकिस्तान ने न तो घुसपैठियों की जिम्मेदारी स्वीकार की है और न यह वचन दिया है कि वह भविष्य में जम्मू-काश्मीर में घुसपैठ अथवा तोड़-फोड़ के लिए अपने लोग नहीं भेजेगा। इस बात की भी कोई गारंटी नहीं मिली है कि भारत के विरुद्ध पाकिस्तान की चीन के साथ सांठगांठ समाप्त हो जायेगी। प्रत्युत ताशकन्द-वार्ता के समय चीन ने असैनिकीकृत क्षेत्र में अपनी सेनाएं भेजकर और 90 हजार वर्ग किलोमीटर भारतीय भूमि पर अपना बेहूदा दावा दोहराकर नये आक्रमण का संकेत दिया है। इस परिस्थिति में 5 अगस्त की रेखा तक सेना की वापसी सैद्धांतिक दृष्टि से गलत तथा व्यावहारिक दृष्टि से सुरक्षा को संकटापन्न करने वाली होगी।

पाकिस्तानी प्रवक्ता ताशकन्द घोषणा की जो व्याख्या कर रहे हैं, उससे उनके इरादों का स्पष्ट पता चल जाता है—जैसा कि राष्ट्रपति अयूब ने कहा है, कि वे इस घोषणा का उपयोग काश्मीर को हथियाने के लिए एक साधन के रूप में समझते हैं। भारत और पाकिस्तान के बीच अब तक हुए अनेक समझौतों की तरह यह घोषणा भी पाकिस्तान की आक्रामक प्रवृत्ति को बढ़ावा ही देगी।

यह खेद का विषय है कि श्री लालबहादुर शास्त्री के आकस्मिक व दुःखद निधन से उत्पन्न शोकपूर्ण वातावरण का लाभ उठाकर ताशकन्द घोषणा को जनता के गले के नीचे उतारने का प्रयत्न हो रहा है। आवश्यक है कि घोषणा का तथ्यात्मक विश्लेषण कर उसके दूरगामी परिणामों को समझा जाय।

भारतीय जनसंघ देशवासियों का आवाहन करता है कि जिस दृढ़ता तथा संकल्प शक्ति से उन्होंने पाकिस्तान के आक्रमण का सामना किया उसी प्रकार कटनीति के क्षेत्र में भारत के हितों तथा सम्मान का बलिदान करने वाली इस ताशकन्द घोषणा का विरोध करें। संसद से हमारी अपेक्षा है कि वह सरकार द्वारा दिये गये आश्वासनों और अपने द्वारा किये गये संकल्पों का स्मरण कर ताशकन्द घोषणा को अस्वीकार कर देगी।

[15 जनवरी 1966; कानपुर, के०का०स०]

66.04. बर्मा स्थित भारतवंशियों की संपत्ति

बर्मा से आये विस्थापितों की कठिनाइयां—पिछले बहुत दिनों से और विशेषत: 1963 से बर्मा के भारतीय विस्थापितों का प्रश्न लोगों के सामने बना हुआ है। जब गत मास स्वर्गीय श्री शास्त्री जी बर्मा गये थे तो अपेक्षा थी कि इस सवाल को नये सिरे से उठाकर उसे हल करने और इन विस्थापितों की निम्न-लिखित कठिनाइयों के निराकरण के लिए भी उनकी इस यात्रा का लाभ उठाया जायेगा :

(क) कानून द्वारा संपत्ति की जब्ती, जिसके अनुसार नकदी का 93 प्रतिशत छीन लिया गया है।

(ख) सब प्रकार की तरल परिसंपत्ति के बर्मा से बाहर ले जाने और भारत में लाने पर प्रतिबंध।

(ग) बिना क्षतिपूर्ति के अचल संपत्ति का छीना जाना।

(घ) भारत में ले आये गये, आभूषण जवाहरात और नकदी के संबंध में भारत सरकार की नीति।

खेद है कि श्री शास्त्री की यात्रा के दौरान इस संबंध में कुछ भी नहीं किया गया। इन बातों पर सविस्तार विचार करने के पश्चात् केन्द्रीय कार्य समिति प्रस्ताव करती है कि :

(1) क्योंकि बर्मा में संपूर्ण व्यापार और उद्योग का राष्ट्रीयकरण किये जाने के कारण वहां से भारी संख्या में भारतीय वापस आये हैं, और क्योंकि यह लोग भारी मात्रा में नकदी, कीमती वस्तुएं, आभूषण और जवाहरात आदि की संपत्ति बर्मा में ही छोड़कर आये हैं, और क्योंकि भारत सरकार ने 2,50,000 तक नकद रुपये लाने की रियायत दी है परन्तु कीमती जवाहरात आदि ला सकने वालों को कोई रियायत नहीं दी गई है, अत: कार्य समिति का मत है कि जो विस्थापित जून 1963 और दिसम्बर 1965 के बीच 2,50,000 रु० तक के मूल्य के आभूषण और जवाहरात अपने साथ ले आये हैं, उन्हें अपने पास रखने की अनुमति दी जाय और इन भारतीयों के विरुद्ध तटकर अधिनियम के अंतर्गत की गई कार्य-वाही और जुर्माने वापिस किये जायें तथा जब्त की गई वस्तुएं भी उन्हें लौटा दी जायें।

(2) क्योंकि बहुत से भारतीय विस्थापितों ने अपने जेवर और जवाहरात बर्मा में भारतीय दूतावास के पास जमा करा दिये थे, उनके भारत लाने के लिए पग उठाये जायें जिससे वह उनके मालिकों को लौटाये जा सकें।

(3) क्योंकि संपत्ति जब्त किये जाने वाले लोगों को नियमानुसार क्षति-पूर्ति मिलनी चाहिए परंतु अब तक नहीं दी गई है, भारत सरकार से मांग की जाय कि यह बर्मा सरकार के साथ इस बात को उठाकर इन लोगों को आवश्यक सहायता दिलाये।

(4) बहुत से भारतीय केवल प्रावधानिक अपराधों के कारण बर्मा जेलों

में बंद हैं। अत: भारत सरकार से कहा जाय कि वह इस विषय में भी बर्मा सरकार से बात करके उपलब्ध स्थिति में जो भी सुविधायें संभव हों इन लोगों को दिलाये।

[15 जनवरी 1966; कानपुर, के०का०स०]

66.15. पाकिस्तान फिर युद्ध की ओर

पाकिस्तान की फिर सैनिक तैयारियां—गत जनवरी के ताशकन्द समझौते के पश्चात पाकिस्तान के भीतर घटी तथा पाकिस्तान से संबंध रखने वाली अन्य बातों से भारत और पाकिस्तान के संबंधों के लिए अच्छे लक्षण दिखाई नहीं दे रहे हैं। समझौते के अंतर्गत भारतीय फौजों से लाहौर, सियालकोट, हाजीपीर तथा करगिल क्षेत्र खाली करा लेने के पश्चात् राजनयिक और सैनिक दोनों दृष्टि से लड़ाई के दूसरे दौर की पाकिस्तान, तेजी से तैयारी कर रहा है। उसने न केवल चीन से मिग हवाई जहाजों का एक स्क्वेड्रन, टैंक तथा भारी मात्रा में अन्य सैनिक सामग्री प्राप्त की है, वरन सऊदी अरब, पुर्तगाल और सैंटो संधि के साझीदारों से भी सामान लेने और रूस से हथियारों का सौदा करने में भी सफल हुआ है। प्राप्त जानकारी के अनुसार पाकिस्तान ने पिछली सितम्बर की लड़ाई में हुई क्षतिपूर्ति से कहीं अधिक तैयारी कर ली है। यह भी समाचार मिले हैं कि पूर्वी बंगाल में चीनी सेना अधिकारियों के प्रशिक्षण में और चीनी शस्त्रों से लैस वह एक नई सेना खड़ी कर रहा है। साथ ही पश्चिमी पाकिस्तान की सशस्त्र सेना की संख्या भी बढ़ाई है जो मुख्यत: अमरीकी शस्त्रास्त्र से सज्ज है। पेशावर, गिलगित और असकर्द को चीनी तुर्किस्तान स्थित काशगर से मिलने के लिए हुनजा होते हुए सड़क तैयार की है तथा असकर्द और गिलगित के निकट जैट जहाजों के लायक हवाई अड्डे भी तैयार किये हैं। वह युद्ध-विराम रेखा पर मोर्चे मजबूत कर रहा है और रेखा से सटे सम्पूर्ण क्षेत्र में हजारों मुजाहिदों को गुरिल्ला युद्ध की शिक्षा दी जा रही है। नागा और मिजो विद्रोहियों को भी हथियार और प्रशिक्षण की वह सहायता दे रहा है।

पाकिस्तान ने राजनयिक मोर्चे पर भी काफी संवर्धन किया है। उसने कम्युनिस्ट चीन के साथ संबंध और मजबूत किये हैं; अमरीका के साथ संबंध पहले की अपेक्षा सुधारे हैं तथा रूस के साथ नये सूत्र जोड़े हैं। पाकिस्तान की इस सैनिक तैयारी तथा शत्रुतापूर्ण रवैये के विपरीत भारत सरकार तथाकथित ताशकन्द भावना की रट लगाये जा रही है। व्यापार संबंधों को पुन: स्थापित करने की इकतरफा बातें कर रही है। लड़ाई के दिनों में पकड़ा गया पाकिस्तान का व्यापारिक माल छोड़ दिया गया है, जबकि उसकी ओर से इस प्रकार की कोई कार्यवाही नहीं की गई है। इसी प्रकार पाकिस्तानी घुसपैठियों को सहायता देने वाले लोगों को पकड़ने और सजा देने के आन्तरिक विषय में भी जम्मू-काश्मीर की और केन्द्रीय दोनों सरकारें पूर्णत: विफल रही हैं। स्वभावत: इससे पाकिस्तान और उसके

एजेंटों को अपनी कार्यवाहियां पहले से भी अधिक तेज करने के लिए प्रोत्साहन मिल रहा है। काश्मीर घाटी में स्थान-स्थान पर छिपे हथियारों के नये-नये ढेरों का पकड़ा जाना तथा मुख्यमंत्री सादिक की हत्या की चेष्टा से इशारा मिलता है कि सैनिक महत्त्व के इस प्रदेश में फिर गंभीर हालत पैदा हो रही है।

भारत-पाक संबंध—केन्द्रीय कार्य समिति इन घटनाओं पर चिन्ता अनुभव करते हुए जनता और सरकार दोनों को सचेत करना चाहती है कि यदि जम्मू-काश्मीर के इन हालात को ठीक करके तथा पाकिस्तान के साथ अपने संबंधों को यथार्थता के अनुरूप बनाकर स्थिति का डटकर मुकाबला न किया गया तो 1965 में अगस्त मास में पाकिस्तानी घुसपैठियों ने जो हालात पैदा किये थे, उनसे भी खराब हालात पैदा हो सकते हैं। जनसंघ की मांग है कि :

(1) देश में प्रतिरक्षा की तैयारियों की गति और तेज की जाय। सेना की संख्या बढ़ाने तथा अपनी स्वतंत्र प्रभावी आणविक शक्ति विकसित करने के लिए तेजी से योग्य पग उठाये जायें। हमें यह भी भली प्रकार समझ लेना होगा कि अंतर्राष्ट्रीय जगत में स्वयं की शक्ति के बराबर कोई दूसरी चीज नहीं हो सकती।

(2) भारत को तेजी से बदलती हुई स्थिति के अनुसार अपनी विदेश नीति को भी नया रूप देना चाहिए। रूस की नीति में आये नये परिवर्तन के लिए उसे दोष देना अनुचित होगा क्योंकि उसके अपने राष्ट्रीय हित उसकी विदेश नीति का मुख्य आधार हैं। इस सबसे भारत एक बात सीख सकता है, जो उसे अवश्य सीख लेनी चाहिए और वह यह कि हम भी पुराने नारों और घोषणाओं से चिपके रहने के बजाय, राष्ट्रीय हितों के आधार पर अपनी विदेश नीति का पुनर्गठन करें।

(3) यह बात भी स्पष्ट रूप से बुद्धिगत कर लेनी होगी कि किसी भी बाह्य अथवा अंदरूनी दबावों में आकर जम्मू-काश्मीर के विषय में पाकिस्तान के साथ बात करने से मित्र देशों की दृष्टि में जहां हम गिर जायेंगे वहां सीमा स्थित सैनिक महत्त्व के इस राज्य में रहने वाले लोगों के मन में भी दुविधा और अनिश्चितता का भाव पैदा होगा। अतः पाकिस्तान और शेष सारी दुनिया को एक बार अंतिम रूप से यह बता देना चाहिए कि काश्मीर किसी भी प्रकार की वार्ता और समझौते का विषय नहीं हो सकता।

(4) जम्मू-काश्मीर राज्य के भीतरी प्रशासन को भी सुधारना चाहिए। संदिग्ध निष्ठा वाले लोगों को बिना रियायत और संकोच के प्रशासन में से निकाला जाना चाहिए। ऐसे लोगों तथा पृथकतावादी तत्त्वों को दबाने के लिए पृथक्करण-विरोधी अध्यादेश कठोरता के साथ व्यवहार में लाया जाना चाहिए।

(5) पाकिस्तानी मुजाहिदों और छापामारों की पुनः घुसपैठ को रोकने के लिए सम्पूर्ण युद्ध-विराम रेखा पर इसराइल के 'नहाल' के समान सैनिक बस्तियां बसाई जानी चाहिए तथा हर व्यक्ति के विषय में ठीक जांच पड़ताल करने के बाद सीमा पर बसे नागरिकों को हथियार चलाने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

(6) जम्मू-काश्मीर में बैठे अपने एजेंटों को हर प्रकार की सहायता देकर तथा नागा और मिजो विद्रोहियों को हथियार और प्रशिक्षण की सुविधाएं पहुंचाकर पाकिस्तान ने एक दूसरे के अन्दरूनी मामलों में हस्तक्षेप न करने संबंधी ताशकन्द समझौते की धारा को भंग किया है। अतः अब कोई कारण नहीं कि भारत सरकार, पश्चिमी पाकिस्तान की उपनिवेशवादी गुलामी से छुटकारा पाने के लिए संघर्ष करने वाली पूर्वी बंगाल की जनता का हर प्रकार से समर्थन क्यों न करे।

पूर्वी बंगाल में स्वतंत्रता आन्दोलन—पाकिस्तान जिस प्रकार पूर्वी बंगाल को चीनियों का अड्डा बनाता जा रहा है उसे देखते हुए स्वयं अपनी सुरक्षा के लिए भी आवश्यक है कि भारत पूर्वी बंगाल में स्वतंत्रता के लिए आंदोलन करने वालों की सहायता करे। इसी भांति पख्तूनिस्तान की जनता और उसके बहादुर नेता श्री अब्दुल गफ्फार खां के प्रति भी भारत का नैतिक कर्तव्य है। पख्तूनों और उनके लिए न्याय प्राप्त करने के अफगानिस्तान सरकार के प्रयत्नों में भारत को अफगानिस्तान सरकार की सहायता करनी चाहिए।

[12 जुलाई 1966; लखनऊ, के०का०स०]

66.17. मॉरीशस का स्वतंत्रता संग्राम

बानवेल आयोग की शरारत—भारतीय जनसंघ मॉरिशस की महान जनता का अभिनंदन करता है जो कि अपनी स्वतंत्रता की लड़ाई के अंतिम दौर में गुजर रही है और साम्राज्यवादियों के षडयंत्रों का दृढ़ता और साहस के साथ सामना कर रही है।

भारतीय जनता ने मॉरिशस के स्वाधीनता संग्राम और उसके उतार-चढ़ाव को, सदैव ही बड़ी आत्मीयता और सहानुभूति के साथ देखा है। गत सितम्बर में जब ब्रिटिश सरकार ने 31 दिसम्बर 1966 के पूर्व ही मॉरिशस को पूर्ण रूप से स्वतंत्र करने की घोषणा की तो भारतीयों को बड़ा आनन्द हुआ था और हमने सोचा था कि देर से ही क्यों न हो, शीघ्र ही मॉरिशस एक स्वतंत्र तथा अखण्ड राष्ट्र के नाते विश्व में अपना स्थान ग्रहण कर लेगा। किन्तु बाद की घटनाओं से भारत की जनता को और विश्व के सभी स्वतंत्रताप्रिय तथा प्रगतिशील तत्वों को गहरा धक्का लगा है। ब्रिटिश साम्राज्यवादियों की 'बांटों और राज्य करो' की नीति, जिसका स्वयं भारत को बड़ा कटु अनुभव है, मॉरिशस में इस सीमा तक जा पहुंची है कि वहां बहुसंख्या को अल्पसंख्या में बदलने का षडयंत्र हो रहा है। अल्पसंख्यकों को संरक्षण देने के नाम पर चुनाव क्षेत्रों के परिसीमन के संबंध में सिफारिशें करने के लिए जो बानवेल आयोग नियुक्त किया गया था उसने वहां संख्या में कम किन्तु आर्थिक दृष्टि से सशक्त वर्ग के हाथ में निषेधाधिकार रखने का यत्न किया है।

यदि बानवेल आयोग की सिफारिशें कार्यान्वित की गई तो मॉरिशस राष्ट्र, छोटे-छोटे गुटों और जातियों में बंट जायेगा और ब्रिटेन को वहां अपना प्रभुत्व बनाये रखने का मौका मिलेगा।

मॉरिशस के प्रधानमंत्री डा० रामगुलाम ने सभी राष्ट्रमंडलीय देशों से अनुरोध किया है कि वे मॉरिशस की समस्या को ठीक तरह से समझें और उसे अपनी सहायता दें। भारत सरकार का कर्तव्य है कि वह इस मामले में मूक दर्शक न रहे और ब्रिटिश सरकार पर बानवेल आयोग की रिपोर्ट को रद्द करने के लिए दबाव डाले। भारतीय जनसंघ मॉरिशस की सरकार तथा जनता को आश्वासन देता है कि विदेशी दासता से मुक्ति के उनके इस अंतिम संघर्ष में भारत उसके साथ है और उसे अपना पूर्ण नैतिक समर्थन देता है। हम आशा करते हैं कि वर्षान्त के पूर्व ही मॉरिशस अपनी स्वाधीनता प्राप्त कर लेगा।

[12 जुलाई 1966; लखनऊ, के०का०स०]

67.09. अरब-इसराइल युद्ध

केन्द्रीय कार्य समिति पश्चिमी एशिया के संघर्ष में भारत सरकार द्वारा अपनाई गई इकपक्षीय नीति से अपनी असहमति प्रकट करती है। अरबों और इसराइलियों के बीच किसी सशस्त्र संघर्ष को भड़कने से रोकने तथा संघर्ष आरंभ होने पर उसे शांत करने के लिए अपने प्रभाव का उपयोग करने के बजाय, भारत सरकार ने शुरू से ही अरबों का अंध-समर्थन करने का रवैया अपनाया। इससे न तो पश्चिमी एशिया में शांति कायम रखने में ही सहायता मिली और न भारत के उदात्त हितों का ही संरक्षण हुआ।

महाशक्तियों की पश्चिमी एशिया में कूटयुक्ति—पश्चिमी एशिया के संघर्ष में बड़ी शक्तियों ने जो भूमिका निभाई है उससे सभी छोटे तथा विकासशील देशों की आंखें खुल जानी चाहिए। यद्यपि सोवियत रूस ने स्वयं इसराइल की स्थापना में पूरा योग दिया था और इस आधार पर यहूदी राष्ट्र को 'आंग्ल-अमरीकी कूटनीति का परिणाम' कहना युक्तियुक्त न होगा, किंतु आज सोवियत नेता अपने अंतर्राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अरबों के कठमुल्लापन को उभाड़ रहे हैं। दूसरी ओर तेल-भण्डारों पर अपना शिकजा बनाये रखने के लिए सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण इस क्षेत्र में अमरीका तथा ब्रिटेन एक ओर तो इस्लामी गुट के निर्माण को प्रोत्साहन दे रहे हैं और इसके लिए जॉर्डन तथा सऊदी अरब जैसे प्रतिक्रियावादी राजतंत्रों को बल प्रदान कर रहे हैं और दूसरी ओर इसराइल को पूरी तरह शस्त्रों से लैस कर उसे अपनी कूटनीति का मुहरा बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं। आवश्यक है कि पश्चिमी एशिया के सभी देश बड़ी शक्तियों की इस चालबाजी को समझें और उनके हाथों में खेलने के बजाय शांति सहअस्तित्व तथा भाईचारे के आधार पर अपने विवादों को आपसी समझौते द्वारा हल करने का प्रयत्न करें।

पश्चिमी एशिया में शांति के लिए—पश्चिमी एशिया में स्थायी शांति

बनाये रखने के लिए यह जरूरी है कि :

(1) अरब देश इसराइल को नष्ट-भ्रष्ट करने के सभी इरादों का परित्याग कर दें और उसके अस्तित्व को स्वीकार कर उसके साथ शांतिपूर्ण तथा सहयोगात्मक संबंधों का विकास करें।

(2) इसराइल को भी यह समझना चाहिए कि वह मूलत: एक अफ्रेशियाई राष्ट्र है और पश्चिम की कूटनीति का हथियार मात्र बनने के बजाय उसे पश्चिमी एशिया में अधिक सम्मानजनक सार्थक भूमिका अदा करना है। आर्थिक दृष्टि से समृद्ध और विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की दृष्टि से अत्यधिक उन्नत इसराइल एशिया तथा अफ्रीका के विकासशील देशों के लिए एक शक्ति का स्रोत सिद्ध हो सकता है। किंतु इसके लिए उसे यूरोप और अमरीका की ओर देखने की बजाय एक अपने स्वयं के नये व्यक्तित्व का विकास करना होगा।

(3) इसराइल की स्थापना से जो अरब विस्थापित हुए हैं, उनके पुनर्वास के लिए इसराइलियों को बड़े पैमाने पर सहयोग देना होगा। विस्थापितों की दयनीय दशा अरब तथा इसराइलियों के बीच कटुता तथा तनाव का स्थायी कारण है, जिसे दूर करना चाहिए।

(4) स्वेज नहर तथा अक्बा की खाड़ी सभी राष्ट्रों के जहाजों के आवागमन के लिए खुली रहनी चाहिए। अरब गणराज्य को स्वेज नहर से गुजरने वाले जहाजों से कर वसूल करने का अधिकार होना चाहिए, किंतु नहर को इकतरफा कार्यवाही से बंद करने की उसे छूट नहीं मिलनी चाहिए। विश्व के अन्य इसी प्रकार के जल मार्गों को भी अंतर्राष्ट्रीय जलमार्ग करार दिया जाय।

(5) हाल के संघर्ष में इसराइल की सेनाओं ने अरब देशों की जिस भूमि पर अधिकार करने में सफलता पाई है वह मुक्त कर देनी चाहिए।

भारतीय जनसंघ भारत सरकार से मांग करता है कि वह पश्चिमी एशिया के प्रति अपनी वर्तमान नीति में परिवर्तन करे जिससे भारत, अरब और यहूदियों का समान रूप से मित्र रहकर पश्चिमी एशिया में स्थायी शांति कायम करने में अपना योगदान दे सके। इसी संदर्भ में जनसंघ अपनी इस मांग को दोहराता है कि भारत को इसराइल के साथ पूर्ण दौत्य संबंध स्थापित करने के लिए शीघ्र कदम उठाना चाहिए।

[30 जून 1967; शिमला, के०का०स०]

67.13. चीन के साथ दौत्य संबंधों का विच्छेद

पीकिंग में भारतीय राजनयिकों के प्रति कम्युनिस्ट सरकार द्वारा प्रेरित तथा संगठित लालरक्षकों के अपमानजनक व्यवहार तथा भारतीय दूतावास के अमानुषिक घेराव की और नई दिल्ली स्थित चीनी राजनयिकों की भारत विरोधी गतिविधियों तथा आपत्तिजनक आचरण से एक बार फिर यह स्पष्ट हो गया है कि कम्युनिस्ट चीन के साथ कूटनीतिक संबंध कायम रखने का कोई औचित्य नहीं है। भारत के सम्मान तथा गौरव का यह तकाजा है कि चीन के साथ अविलम्ब दौत्य

संबंध तोड़ लिए जायें। यह भी आवश्यक है कि भारत सरकार, कम्युनिस्ट चीन को संयुक्त राष्ट्रसंघ में स्थान दिलाने के प्रयत्नों को अपना समर्थन प्रदान करना बंद कर दें।

चीन के साथ 1954 संधि की समाप्ति— चीनी शासकों ने तिब्बत की स्वायत्तता को पूर्णतया समाप्त कर (जिसका समादर करने के लिए वे भारत के साथ 1954 में हुई संधि के अनुसार वचनबद्ध थे) भारत को ऐसी स्थिति में ला दिया है कि वह उपयुक्त संधि को समाप्त घोषित कर दे और तिब्बत की स्वाधीनता का खुला समर्थन करें। तिब्बत की 'निर्वासित सरकार' के प्रमुख के रूप में श्री दलाई लामा को, चीन के विस्तारवादी शिकंजे से अपना देश मुक्त कराने के लिए, भारत सरकार को अपना समर्थन तथा सहायता देनी चाहिए।

[30 जून 1967; शिमला, के०का०स०]

67.20. प्रतिरक्षा व विदेश नीतियों के लिए संयुक्त समिति

पाक-चीन सांठगांठ—ताशकंद घोषणा के बाद देश के अंदर और बाहर जो घटनाएं घटी हैं उनसे भारत की सुरक्षा को अधिक खतरा पैदा हो गया है। जैसा कि पाक-प्रधान जनरल अय्यूब खां ने व्यक्त किया है, पाकिस्तान ताशकंद घोषणा का इतना ही उपयोग समझता था कि हमारी सेनायें उन सभी क्षेत्रों से हट जायें जिन्हें या तो पाकिस्तान से जीता गया था अथवा उसके अवैध कब्जे से मुक्त किया गया था। इस उद्देश्य की प्राप्ति के बाद पाकिस्तान ने ताशकंद घोषणा को रद्दी की टोकरी में फेंक दिया और फिर से भारत विरोधी अभियान और युद्ध की तैयारी जोर-शोर से प्रारंभ कर दी। उसने न केवल युद्ध के दिनों में रोके हुए माल और पोतों को ही जब्त किया है बल्कि पाक-स्थित भारतीय बैंकों, औद्योगिक संस्थानों, एवं भारतीय नागरिकों की रोकड़ पूंजी को भी जब्त कर लिया है। कम्युनिस्ट चीन और अपने पश्चिमी तथा अरब मित्रों से प्राप्त विदेशी मुद्रा से हथियार खरीद कर उसने अपनी शस्त्र-सज्जा में भी भारी वृद्धि की है। उसकी स्थल सेना दुगुनी हो गई है और हवाई जहाजों तथा टैंक दस्तों में हुई क्षति को उसने पूरा कर लिया है। एक ओर कम्युनिस्ट चीन से व दूसरी ओर पश्चिमी देशों के साथ अपने संबंधों को कायम रखते हुए उसने सोवियत रूस के साथ भी नई कड़ियां जोड़ ली हैं। स्वभावतः इससे पाकिस्तान की शरारत और आक्रमण की क्षमता काफी बढ़ गई है जो कि उसके रेडियो और समाचारपत्रों के रुख से स्पष्ट होती है।

कम्युनिस्ट चीन की आक्रामकता में भी उसके द्वारा परमाणु अस्त्रों में प्रगति एवं आंतरिक संघर्ष में माओ गुट की विजय के उपरांत भारी वृद्धि हो गई है। गत सितम्बर में नाथू-ला और चोला में उसके सुनियोजित और अकारण आक्रमण तथा पाकिस्तान और नागा विद्रोहियों को बढ़ती हुई सहायता उसके खतरनाक इरादों के प्रमाण हैं। कम्युनिस्ट चीन और पाकिस्तान के गठबंधन के

अनुसार ही दोनों देशों के एजट भारत में सहयोग से काम कर रहे हैं। यह दोनों मिलकर देश में तोड़-फोड़ और अराजकता की कार्यवाहियों में संलग्न हैं। यह ऐसी भयावह स्थिति है जिसकी ओर भारत सरकार और जनता का अविलंब ध्यान जाना चाहिए।

प्रतिरक्षा व विदेश नीतियों के विभिन्न परिक्रमा-पथ—यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि भारत सरकार ने देश की पर्याप्त सैनिक तैयारी की ओर दुर्लक्ष्य ही नहीं किया, अपितु वह जिस विदेश नीति का पालन कर रही है वह भारत के हितों और प्रतिरक्षा की आवश्यकताओं के आधार पर नहीं है। वास्तव में भारत की विदेश और प्रतिरक्षा नीतियां भिन्न-भिन्न परिक्रमा-पथों में चल रही हैं तथा उनके बीच कोई तालमेल नहीं है। अरब इसराइल संघर्ष में भारत ने जिस प्रकार पूरी तरह अरबों का साथ दिया, उसे न तो राष्ट्रीय हितों के संवर्धन और ना ही प्रति-सहयोग की नीति के आधार पर न्यायोचित ठहराया जा सकता है। इसी प्रकार भारत ने ताइवान, जो कम्युनिस्ट चीन का कट्टर शत्रु और उसकी जानकारी देने का प्रमुख साधन है, के प्रति जो नीति अपनायी है, वह भी हमारे राष्ट्रीय हितों के प्रतिकूल है और हमारी चीन विषयक नीति के खोखलेपन को सिद्ध करती है।

अतः भारतीय जनसंघ का सुविचारित मत है कि भारत की प्रतिरक्षा और विदेश नीतियों का, तीव्र गति से बदलते हुए घटनाक्रम की पृष्ठभूमि में, पुनर्निर्धारण किया जाय। इस पुनर्निर्धारण की प्रमुख रूपरेखा निम्नलिखित है :

(1) कम्युनिस्ट चीन और पाकिस्तान के मुकाबले में भारत को मित्रों का संचय करना चाहिए। हमें सैनिक सहायता और कूटनीतिक समर्थन देने वाले दोनों ही प्रकार के देशों का इन मित्रों में समावेश करना चाहिए।

(2) दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों के प्रति, जिनके साथ हमारे युगों पुराने नाते हैं, हमें अपने संबंधों को सुदृढ़ बनाने का विशेष उद्योग करना चाहिए। यूरोपीय उपनिवेशवाद के चंगुल से मुक्त यह देश पीकिंग के विस्तारवादी मंसूबों से संकटापन्न हैं। इनके साथ मिलकर भारत न केवल लाल चीन के बढ़ते हुए दबाव को रोक सकता है, बल्कि इस क्षेत्र में किसी भी प्रकार के विदेशी हस्तक्षेप को अनावश्यक बना सकता है।

(3) संयुक्त राज्य अमरीका तथा सोवियत रूस के साथ मित्रता के गहरे संबंध रखते हुए हमें स्वतंत्र विदेश नीति का अवलंबन करना चाहिए। पूर्वी यूरोप, दक्षिणी अमरीका तथा अफ्रीका के देशों के साथ मास्को, वाशिंगटन तथा लंदन के माध्यम से मित्रता कायम करने के बजाय भारत को अपने सीधे संबंध विकसित करने चाहिए।

(4) तिब्बत, सिक्यांग, दक्षिणी मंगोलिया और पख्तूनिस्तान की स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत शक्तियों को भारत ने अपना समर्थन देना चाहिए। श्री दलाईलामा की 'निर्वासित सरकार' को मान्यता प्रदान की जाय और संयुक्त

राष्ट्रसंघ में तिब्बत की स्वतंत्रता के प्रश्न को उठाने में भारत पहल करे। ताइवान सरकार को मान्यता देना उचित होगा।

(5) प्रतिरक्षा की दृष्टि से भारत को आत्मनिर्भर बनाने के लिए दूरगामी तथा अल्पकालिक उपाय-योजना आवश्यक है। परंपरागत हथियारों, विशेषत: हल्के तथा भारी टैंक, भारी तोपखाने तथा हवाई सेना की साज-सज्जा के निर्माण में हमें तुरंत आत्मनिर्भता प्राप्त करनी चाहिए। भारतीय नौसेना को आधुनिक ढंग से सुदृढ़ करने के लिए आवश्यक सामग्री उपलब्ध करनी चाहिए। भारतीय सेना के गुप्तचर विभाग को आधुनिकतम उपायों से प्रवीण बनाकर उसका पुनर्गठन करना चाहिए। भारत के स्वतंत्र आणविक प्रतिरोध के विकास को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

(6) संसद तथा मंत्रिमंडल, दोनों के स्तर पर प्रतिरक्षा तथा विदेश नीतियों के विशेषज्ञों की एक संयुक्त समिति बनाई जाय जो एक दूसरे की आवश्यकताओं के अनुरूप उनका निर्धारण और समन्वय करे।

(7) भारत में चीनी तथा पाकिस्तानी हथियारों तथा एजेंटों के अवैध प्रवेश को रोकने के लिए अविलंब प्रभावी कार्यवाही की जाय। सीमावर्ती क्षेत्रों से संदिग्ध निष्ठा वाले सभी तत्वों को हटाने और वहां भूतपूर्व सैनिकों को बसाने के लिए सभी आवश्यक कदम उठाये जायें और इस सुरक्षात्मक कार्यवाही में किसी भी भ्रांत धारणा को बाधक न बनने दिया जाय।

[26 दिसम्बर 1967; कालीकट, चौदहवां सा०अ०]

67.26. गोवा स्वतंत्रता सेनानियों की रिहाई

जनसंघ का यह चौदहवां अधिवेशन केन्द्रीय सरकार से मांग करता है कि गोवा मुक्ति आंदोलन के सेनानी श्री मोहन रानाडे तथा डा० मसकरीन्स को, जो अभी तक पुर्तगाल की जेलों में हैं, रिहा कराने के लिए उचित कार्यवाही करे।

[26 दिसम्बर 1967; कालीकट, चौदहवां सा०अ०]

68.03. ब्रिटिश पारपत्रधारी भारतवंशी

ब्रिटिश आव्रजन कानून—भारतीय जनसंघ पूर्वी अफ्रीका के भारतीयों की दुर्दशा पर गंभीर चिंता प्रकट करता है जिनके लिए वहां रहना निरंतर कठिन होता जा रहा है और जो ब्रिटिश पारपत्र होते हुए भी अपने लिए ब्रिटेन के द्वार बंद पा रहे हैं। ब्रिटेन का नया आव्रजन-कानून निश्चय ही रंगभेद पर आधारित एक ऐसा कानून है जिसका उद्देश्य ब्रिटेन में ऐसे एशियाइयों का प्रवेश रोकना है जिन्हें ब्रिटेन ने स्वेच्छा से वहां की नागरिकता के पूर्ण अधिकार दिये थे। जिन परिस्थितियों में ये लोग पूर्वी अफ्रीका ले जाये गये और जिन कठिनाइयों में इन्होंने

उस समय के ब्रिटिश उपनिवेशों को समृद्ध बनाने में अपना योगदान दिया, वे किसी से छिपी हुई नहीं है। इन एशियाइयों के प्रति अपना आभार प्रकट करने के बजाय ब्रिटेन इनका प्रवेश प्रतिबंधित कर न केवल दोहरे विश्वासघात का दोषी सिद्ध हो रहा है, बल्कि मूलभूत मानवीय अधिकारों के हनन तथा अंतर्राष्ट्रीय कानून और न्याय के सिद्धांतों को भी ताक पर रखने का अपराध कर रहा है। नये ब्रिटिश कानून ने ब्रिटिश न्याय तथा नैतिकता के बहुचर्चित तथा बहुघोषित दावों की धज्जियां तो उड़ा ही दी हैं, उसने विभिन्न जातियों तथा राष्ट्रों की स्वतंत्रता तथा समता की कल्पना पर आधारित राष्ट्रमंडल की प्रतिमा को भी गहरी ठेस पहुंचाई है।

यह खेद का विषय है कि भारत सरकार ने इन अभागे भारतवंशियों के प्रति होने वाले ब्रिटिश अन्याय को रोकने के लिए कोई प्रभावी तथा ठोस कार्यवाही नहीं की है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि यह लोग भारत से ही गये हैं और अंततोगत्वा इन्हें भारत लौटने के लिए विवश होना पड़ सकता है, भारत सरकार को इनकी दुर्दशा पर केवल संवेदना प्रकट करके अथवा ब्रिटेन को केवल विरोध-पत्र भेजकर अपने कर्तव्य की इतिश्री नहीं समझ लेनी चाहिए। समय आ गया है जब भारत सरकार को यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि यदि ब्रिटेन अपना पग पीछे लौटाने के लिए तैयार नहीं है तो भारत को बदले की कार्यवाही के लिए विवश होना पड़ेगा और यह कार्यवाही राष्ट्रमंडल से अलग होने के कठोर कदम तक जा सकती है। साथ ही यह प्रश्न मानवीय अधिकार आयोग के सम्मुख लेजाने के बारे में भारत सरकार को गंभीरता से विचार करना चाहिए। उसे ब्रिटिश सरकार से उन भारतीयों के पुनर्वास के लिए मुआवजा भी मांगना चाहिए जो उसके द्वारा ठुकराये जाने पर अपने मूल देश भारत को आने के लिए विवश होंगे।

[22 मार्च 1968; भोपाल, के०का०स०]

68.14. रूसी रवैया

गत कुछ महीनों में अंतर्राष्ट्रीय स्थिति में कुछ ऐसे महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं जो भारत के लिए विशेष महत्व रखते हैं। अपने राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखकर हमें इनकी बड़ी गहराई से छानबीन करनी होगी और यथार्थवादी दृष्टिकोण से इनका आंकलन करना होगा।

पाकिस्तान को रूसी हथियार—प्रथम महत्वपूर्ण परिवर्तन सोवियत रूस की विदेश नीति में वह बदल है जिसकी परिणति पाकिस्तान को शस्त्र देने के निश्चय के रूप में हुई है। रूस की नीति में यह परिवर्तन आकस्मिक नहीं है। 1965 के प्रारंभ में कच्छ पर हुए पाकिस्तान के आक्रमण के पूर्व ही इस परिवर्तन के संकेत मिलने लगे थे तथा ताशकंद में यह स्पष्ट रूप में हमारे सामने आया। यह दुःख का विषय है कि भारत के विदेश मंत्रालय के कर्ताधर्ता इस परिवर्तन को नहीं भांप सके और भारतीय संसद तथा भारतीय जनता को अपनी इस आशय की

ऊंची-ऊंची उद्‌घोषणाओं से कि रूस की नीति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, उस समय तक गुमराह करते रहे जब तक कि पाकिस्तान को शस्त्र देने की स्वयं रूस की घोषणा ने ही इस सत्य को छिपाये रखना असंभव नहीं कर दिया।

सोवियत रूस के इस नीति-परिवर्तन में भारत के लिए अनेक महत्वपूर्ण संभावनाएं निहित हैं। इससे एक बार फिर पुरानी यह उक्ति सत्य सिद्ध हो गई है कि *अन्तर्राष्ट्रीय जगत में न तो स्थायी मित्र होते हैं और न स्थायी शत्रु, केवल राष्ट्रहित ही विदेश नीति के निर्धारण का एकमात्र स्थायी आधार होता है।* भारत की विदेश नीति के निर्माता यदि अब भी इस सीख को ग्रहण कर लें और भारत की विदेश नीति का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए तैयार हो जायें तो रूस की नीति में हुई यह बदल भारत के लिए परोक्ष रूप में वरदान बन सकती है।

असमान देशों में मैत्री नहीं—रूस के इस नीति-बदल से दूसरी बात सीखने के योग्य यह है कि कभी भी दो असमान देशों के बीच वास्तविक मैत्री नहीं होती। जब तक भारत दो महाशक्तियों की भारी सहायता पर निर्भर रहेगा तब तक उनके साथ बराबरी के आधार पर सही नाता नहीं जोड़ सकता।

रूस की नीति में बदल का तीसरा परिणाम यह हुआ है कि पाकिस्तान की युद्ध पिपासा में वृद्धि हुई है तथा भारत के प्रति उसके आक्रामक इरादे और अधिक खुल कर सामने आ रहे हैं। जिस तिरस्कारपूर्ण तरीके से पाकिस्तान ने भारत के प्रधानमंत्री के 'अयुद्ध प्रस्ताव' को ठुकराया उससे पाकिस्तान की इच्छाएं और इरादे और भी स्पष्ट हो गये हैं। पाकिस्तान के विदेशमंत्री श्री अरशाद हुसेन की हाल की पीकिंग यात्रा तथा चीन के प्रधानमंत्री की प्रस्तावित पाकिस्तान यात्रा को यदि सोवियत नीति के बदल की पृष्ठभूमि में देखें तो पाकिस्तान की संयुक्तराष्ट्र संघ में काश्मीर संबंधी हलचलें, पूर्वी और पश्चिमी सीमाओं पर उसकी युद्ध की तैयारियों में वृद्धि, शेख अब्दुल्ला और मौलवी फारुख की काश्मीर में राष्ट्र विरोधी कार्यवाहियां तथा पूर्वी क्षेत्रों में नागा और मिजो बागियों की व चीनी और पाकिस्तानी एजेंटों की गतिविधियों से उत्पन्न संकट को भारत सरकार और जनता स्वयं को खतरे में डालकर ही दृष्टि से ओझल कर सकती है।

चेकोस्लोवाकिया पर रूसी हमला—तीसरी महत्वपूर्ण घटना सोवियत रूस और उसके वारसा संधि के चार साथियों द्वारा कुछ चेक नेताओं के निमंत्रण का बहाना बनाकर, चेकोस्लोवाकिया पर किया गया वह नग्न आक्रमण है जो केवल चेकोस्लोवाकिया के नेताओं को साम्यवादी शासन में उदारता लाने से रोकने के लिए किया गया था। यह आक्रमण संयुक्त राष्ट्रसंघ के घोषणापत्र का खुला उल्लंघन तथा बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के अपनी इच्छानुसार अपने भाग्य निर्माण के हर देश के अधिकार का शर्मनाक हनन है।

साम्यवाद व नाजीवाद में अन्तर नहीं—सोवियत रूस के इस बलप्रयोग से भारत को अनेक महत्वपूर्ण निष्कर्ष सीखने हैं। प्रथम यह बात स्पष्ट हो गई है कि रूसी भालू अपने स्वभाव और स्वरूप को बदलने में असमर्थ है। वह अब भी

एकाधिकारवादी, असहिष्णु और मानव स्वतंत्रता का पहले जैसा ही शत्रु है। अपने घर में तथा अपने प्रभाव क्षेत्र के छोटे देशों में वह स्वतंत्रता की प्रत्येक लहर को अवरुद्ध करने के लिए कटिबद्ध है। इससे यह भी स्पष्ट है कि रूस में स्टालिन-वाद पुनः जीवित हो रहा है जिससे रूस और कम्युनिस्ट चीन के बीच समझौते का मार्ग तैयार हो सकता है। यह भी सिद्ध हो गया है कि कम्युनिज्म और नाजी-वाद में कोई अंतर नहीं है; वस्तुतः दोनों समान ही हैं।

भारत की दृष्टि से और भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि जिस समय चेकोस्लोवाकिया रूसी टैंकों के नीचे रौंदा जा रहा था, अमरीका व नाटो संधि के उसके साथियों ने विरोध स्वरूप एक उंगली तक उठाना स्वीकार नहीं किया। इससे केवल यह सिद्ध होता है कि इन दोनों महाशक्तियों ने सम्पूर्ण संसार को अपने-अपने प्रभाव क्षेत्रों में बाँट लिया है, और चाहे इनके बीच शीतयुद्ध भले बढ़ भी जाय तो भी किसी बड़े देश द्वारा छोटे देशों पर आक्रमण के समय, छोटे देश की सहायता करने के लिए महाशक्तियां उस समय तक उद्यत नहीं होंगी जब तक कि स्वयं उनके राष्ट्रीय हितों के लिए ऐसा करना अनिवार्य न हो। इस घटना से उन लोगों के तर्कों की धज्जियां उड़ गई हैं जो भारत को यह सलाह देते रहे हैं कि वह अमरीकी आणविक छतरी अथवा सोवियत संरक्षण के आश्वासनों पर भरोसा कर आणविक प्रतिरोधक विकसित करने के अपने अधिकार का परित्याग कर दे। अब स्पष्ट है कि पाकिस्तान तथा चीन के अलग-अलग अथवा दोनों के संयुक्त तथा अप्रत्याशित आक्रमण के विरुद्ध अपनी रक्षा के लिए भारत किसी बाहरी शक्ति पर भरोसा नहीं कर सकता। आज के शीत युद्ध-विभक्त संसार में भारत को अपनी स्वतंत्रता, अखंडता और सार्वभौमिकता को यदि सुरक्षित बनाये रखना है तो स्वयं अपने पैरों पर खड़ा होना होगा।

चेकोस्लोवाकिया से संबंधित घटनाचक्र में भारत सरकार का अनुसेवी स्वरूप खुलकर सामने आया। जिस प्रकार भारत की प्रधानमंत्री 'निन्दनीय' तथा 'शोचनीय' शब्दों का खिलवाड़ करती रहीं तथा इस विषय पर सुरक्षा परिषद में भारत के प्रतिनिधि ने मतदान नहीं किया, उससे यह स्पष्ट हो गया है कि सरकार किसी ऐसे मामले में जिससे रूस का संबंध हो अथवा उसकी दिलचस्पी हो, स्वयं का अपना स्वतंत्र और सिद्धांतवादी निश्चय करने की क्षमता खो चुकी है। यह एक ऐसा दिशा संकेत है कि जिसकी खतरनाक संभावनाओं के विषय में भी देशभक्तों को विचार करना होगा।

रूस के साथ बढ़ता हुआ व्यामोह—इन अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं से हमें आश्चर्य नहीं हुआ। भारतीय जनसंघ ने सर्वप्रथम रूस के इस नीति-बदल को भांपकर 1964 में ही जनता और भारत सरकार का ध्यान आकृष्ट किया था। भारतीय जनसंघ पिछले बहुत वर्षों से लगातार इस बात पर जोर देता रहा है कि भारत को अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए और विदेशी सहायता पर अपनी निर्भरता घटानी चाहिए। जनसंघ देश के भीतर और बाहर कम्युनिस्टों के असली

स्वरूप और इरादों को समझने की आवश्यकता पर भी बल देता रहा है तथा भारत के नेताओं में रूस के प्रति बढ़ते हुए मोह के विरुद्ध चेतावनी देता रहा है।

भारतीय जनसंघ अनेक बार उद्घोषित अपने इस मत को पुनः दोहराता है कि भारत को अपनी विदेश नीति का पुनः आंकलन करना चाहिए तथा विदेश नीति और प्रतिरक्षा की आवश्यकताओं के बीच स्वस्थ तालमेल बैठाया जाना आवश्यक है। भारतीय जनसंघ सरकार और जनता को विशेष रूप से सचेत करना चाहता है कि आगे आने वाले दिनों में पाकिस्तान और चीन तथा देश के भीतर बैठे उनके एजेंटों से, देश की अखंडता और सुरक्षा को भारी खतरा पैदा होने की संभावना है। पाकिस्तान के पक्ष में रूस की नीति में हुए बदल के कारण अरब देशों की पाकिस्तान के प्रति दोस्ती के रवैये में और अधिक वृद्धि होना अत्यंत स्वाभाविक है। अतः भारत को पश्चिमी एशिया के देशों, विशेषतः इसराइल के संबंध में अपनी नीति पर पुनर्विचार करना चाहिए।

भारतीय जनसंघ देश की सभी राष्ट्रवादी तथा प्रजातांत्रिक शक्तियों से अपील करता है कि अंतर्राष्ट्रीय स्थिति में परिवर्तन से उत्पन्न हो सकने वाले राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए संकट का मुकाबला करने के लिए सचेत और संगठित रहें।

[7 सितम्बर 1968; इंदौर, भा०प्र०स०]

69.07. विदेश नीति का पुनरेक्षण व पुर्नानिर्धारण

गत एक वर्ष में अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति में भारी परिवर्तन हुआ है। बड़े देशों की विदेश नीतियों में जो बदल आया है और उनके रुझानों में जो परिवर्तन हुआ है उसका छोटे तथा मध्यम दर्जे के देशों पर पड़ने वाला प्रभाव, जिसका स्वरूप अस्पष्ट था, अब एक ठोस तथा निश्चित रूप ले चुका है।

रूस-चीन संघर्ष—सोवियत रूस तथा कम्युनिस्ट चीन के बीच तनाव (जो ख्रुश्चोव-युग से प्रारम्भ हुआ था) अब कम्युनिस्ट विश्व के दो दैत्याकार देशों के मध्य सशस्त्र तथा खूनी संघर्ष का रूप ले चुका है। यह कौतुक का विषय है कि दोनों कम्युनिस्ट-अधिनायकवादी देश एक छोटे से भूखण्ड पर अपना अधिकार बनाये रखने के लिए, रूसी तथा चीनी राष्ट्रवादों को जगाने की जोरदार अपीलें कर रहे हैं। रूसी-चीनी संघर्ष ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है। दोनों देश मध्य एशिया तथा साइबेरिया के छोटे-छोटे राज्यों के मूल्य पर विगत दो वर्षों में अपनी सीमाओं में धीरे-धीरे तथा निरन्तर विस्तार करते रहे हैं। फलतः इन दो महादेशों के मध्य जो छोटे-छोटे राज्य थे और जो दोनों को एक दूसरे से अलग रखने का काम करते थे, समाप्त हो गये हैं, जिससे अब दोनों के बीच सीधे संघर्ष की स्थिति है। यह स्थिति एक दृष्टि से तिब्बत पर कम्युनिस्ट चीन के कब्जे से उत्पन्न भारत तथा चीन के संबंधों में आये परिवर्तन से मिलती-जुलती है। रूस के इस नये संकट में हमारी सहानुभूति उसके प्रति हो सकती है, लेकिन हम यह

भी आशा करते हैं कि रूसी नेता अब कम्युनिस्ट चीन के बारे में भारत के पक्ष को अधिक अच्छी तरह समझेंगे।

इस बड़ी घटना ने प्रायः अन्य सभी देशों की नीतियों में या तो नये मोड़ दिये हैं अथवा परिवर्तन की प्रक्रिया को गति प्रदान की है।

स्वेज के पूर्व से पश्चिमी शक्तियों का हटना— संयुक्त राज्य अमरीका तथा सोवियत रूस के बीच जिस मेल-मिलाप का स्पष्ट परिचय चेकोस्लोवाकिया के विरुद्ध सोवियत आक्रमण के समय मिला था, अब और अधिक स्पष्ट तथा निश्चित रूप ले चुका है। अमरीका तथा ब्रिटेन द्वारा स्वेज के पूर्व में स्थित क्षेत्र से धीरे-धीरे हटने के निर्णय ने, रूस तथा चीन दोनों के लिए विस्तार के नये क्षेत्र तथा नयी सम्भावनाएं खोल दी हैं। दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों में चीनी तथा उनके पक्षपातियों द्वारा अपनी तोड़-फोड़ की गतियों में वृद्धि किये जाने को और पाकिस्तान, टर्की तथा ईरान के प्रति सोवियत नीति में भारी परिवर्तन को इसी संदर्भ में समझा जा सकता है। सोवियत रूस दक्षिण में स्थित हिंदूकुश के पार हिंदमहासागर से सीधा नाता जोड़ने की अपनी ऐतिहासिक अकांक्षा को पूर्ण करने के वर्तमान अवसर से लाभ उठाना चाहता है। सिएटो तथा सैण्टो का दुर्बल होना और पाकिस्तान के भीतर इन सैनिक संगठनों (जिनमें अमरीका का प्रभुत्व है) के प्रति विरोध का बढ़ते जाना इस नई परिस्थिति का स्वाभाविक परिणाम है।

पिण्डी-पीकिंग गठबंधन के कारण पाकिस्तान के लिए सिएटो अनावश्यक हो गया है। मास्को-पिण्डी गठबंधन के फलस्वरूप (जो अब स्पष्टतः दिखाई दे रहा है) पाकिस्तान के लिए सेण्टो भी उतना ही निरुपयोगी हो जायेगा।

स्वाधीन पूर्वी बंगाल की मांग—पूर्वी बंगाल में स्वतंत्रता की बढ़ती हुई मांग तथा पाकिस्तान द्वारा अन्ततोगत्वा अपना पूर्व बाजू खो दिये जाने की सम्भावना से, रूस तथा चीन के प्रति पाकिस्तान की नीतियों में जो आधारभूत अंतर्विरोध तथा संघर्ष है, उसके हल हो जाने की आशा है। किन्तु जब तक पाकिस्तान अपने वर्तमान रूप में विद्यमान है, यह समझना ठीक होगा कि वह चीन के साथ अपने वर्तमान संबंधों को बनाये रखते हुए रूस के प्रति नई मैत्री जोड़ने का काम करता रहेगा। किन्तु दीर्घकाल में पाकिस्तान की पश्चिमी बाजू की सरकार अपने देश की नीति का निर्धारण दक्षिणी पूर्वी एशियाई राष्ट्र के नाते करने के बजाय, पश्चिमी एशियाई राष्ट्र के नाते करने की ओर अधिक झुकती रहेगी। अरब-इसराइलियों के बीच में उत्पन्न गतिरोध को हल करने के लिए चार बड़े देशों का प्रयत्न इसी दिशा की ओर संकेत करता है।

वियतनाम में अनुभव—वियतनाम के अनुभव ने संयुक्त राज्य अमरीका में अलग रहने के समर्थकों को नई शक्ति प्रदान की है। यद्यपि प्रथम विश्वयुद्ध के ढंग का अलगाव आज अमरीका के लिए संभव नहीं है, तथापि अमरीकी सरकार पर एशिया में अपने उत्तरदायित्वों को कम करने के लिए जो दबाव पड़ रहा है उसको कम नहीं आंका जाना चाहिए। इससे अमरीका के पूर्वी एशिया के साथियों

को नये मित्रों तथा साथियों की खोज करने अथवा अमरीका से पृथक, एक क्षेत्रीय प्रतिरक्षा व्यवस्था की खोज करने के लिए विवश होना पड़ेगा।

भानमती का कुनबा—राष्ट्रमण्डल— जहां तक ब्रिटेन का संबंध है वह एक बड़ी शक्ति नहीं रहा है और फ्रांस तथा पश्चिमी जर्मनी की तुलना में एक मध्यम दर्जे की शक्ति बने रहने के लिए संघर्ष कर रहा है। यूरोपीय सझा बाजार में शामिल होने की उसकी उतावली तथा उसके प्रवक्ताओं द्वारा भारत तथा अन्य देशों के साथ द्विपक्षीय संबंधों पर बल देना इसी स्थिति का परिचायक है। यह भानमती के कुनबे राष्ट्रमण्डल के अंत का आरंभ है।

इस घटनाचक्र का सभी देशों पर प्रभाव हो रहा है। पूर्वी यूरोप में रूसी प्रभुत्व के विरुद्ध और पश्चिमी यूरोप में अमरीकी प्रभुत्व के विरुद्ध प्रतिरोध बढ़ रहा है। लेटिन अमेरिका के देश भी अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व को प्रस्थापित करने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं।

भारत, जिसमें एक महान देश बनने की सभी संभावनाएं निहित हैं और जो एशिया में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है, अपने चारों ओर घटने वाली घटनाओं के प्रति उदासीन नहीं रह सकता। जिन धारणाओं और आधारों पर श्री नेहरू ने स्वाधीनता के बाद भारत की विदेश नीति का निर्धारण किया था, वे अब प्रसंगोचित नहीं रही हैं। गत कुछ वर्षों में एक नया विश्व नयी संभावनाओं, नये तनावों, नयी अपेक्षाओं तथा नये शक्ति-संबंधों को लेकर हमारे सामने उभरा है। यह खेद का विषय है कि भारत की विदेश नीति के निर्माता अब तक 1950 के युग में रह रहे हैं और घिसेपिटे नारों तथा मुहावरों में उलझे हुए हैं। सही सूचना पर आधारित स्थिति का सही मूल्यांकन ही शुद्ध तथा पूर्वाग्रह से मुक्त नीतियों का एकमेव आधार बन सकता है। किन्तु भारत के नीति-निर्माता उन तथ्यों का सामना करने अथवा उस जानकारी को प्राप्त करने को तैयार नहीं हैं जो उनकी बंधी-बंधाई धारणाओं से मेल नहीं खाती है। गलत तथा अधूरी जानकारी के आधार पर और निष्पक्ष दृष्टि के बजाय, मतवादवाले रवैये अपनाने के फलस्वरूप जो मूल्यांकन किया जाता है वह गलत परिणामों और गलत नीतियों को जन्म देता है।

समय आगया है जबकि भारत की विदेश नीति को पुरानी भूलभुलैयों से निकालकर एक नया रूप तथा नई दिशा दी जानी चाहिए जिससे कि वह तीव्र गति से बदलने वाले और अत्यधिक मित्रता न रखने वाले आज के विश्व में भारत के व्यापक राष्ट्रीय हितों का संरक्षण तथा संवर्धन कर सके।

विदेश नीति का पुनर्निर्धारण—भारतीय जनसंघ ने सदैव एक राष्ट्रीय विदेशी नीति पर बल दिया है जो दलबंदी तथा सिद्धांतवादी दृष्टिकोणों से ऊपर उठ सके। सरकार तथा जनता को इस संबंध में हमने अपनी सामर्थ्य भर संसद के बाहर तथा भीतर शिक्षित तथा प्रभावित करने का प्रयास किया है। भारतीय जनसंघ का यह निश्चित मत है कि विश्व की बदली हुई परिस्थिति को ध्यान में रख-

कर भारत की विदेश नीतिका निम्नलिखित आधारों पर अविलंब पुनर्निर्धारण होना चाहिए।

(1) सत्ताधीशों द्वारा गुट निरपेक्षता के पक्ष में ऊंची घोषणाओं के बावजूद भारत को रूस के प्रभाव-क्षेत्र में लेजाने का प्रयत्न हो रहा है जिसे रोका जाना चाहिए। हमें संयुक्त राज्य अमरीका तथा सोवियत रूस दोनों महाशक्तियों के प्रति समानता, स्वाभिमान तथा परस्पर हित-संबंधों के आधार पर अपनी स्वतंत्र नीति का विकास करना चाहिए। इसका अर्थ यह है हम दोनों महाशक्तियों पर अपनी निर्भरता कम करें और अपने पैरों पर खड़ा होना सीखें।

(2) अब जब कि रूसी भालू को भी चीनी अजगर का स्वाद मिल गया है और उसके नीति-निर्माताओं में कम्युनिस्ट चीन के विस्तारवादी इरादों और तिब्बत के प्रति किये गये उसके अपराधों के प्रति एक नई अनुभूति जाग रही है, भारत को तिब्बत के मामले को विश्व के सम्मुख उपस्थित करने में पहल करनी चाहिए। तिब्बत का प्रश्न मूलतः उपनिवेशवाद का प्रश्न है—एक ऐसे उपनिवेशवाद का प्रश्न जो कि विश्व द्वारा देखे गये अब तक के सभी उपनिवेशवादों से अधिक बुरा है। संयुक्त राष्ट्रसंघ की उपनिवेशवाद विरोधी समिति में भारत सरकार को तिब्बत के प्रश्न को उठाना चाहिए और तिब्बत की मुक्ति के लिए विश्व के जनमत को संगठित करने की दृष्टि से सभी सम्भव उपाय अपनाने चाहिए। यह आवश्यक है कि तिब्बत की 'निर्वासित सरकार' के प्रमुख के रूप में श्री दलाई लामा को मान्यता दी जाय और उन्हें विश्व के जनमत को शिक्षित तथा संगठित करने के लिए सभी सुविधाएं दी जायें।

(3) इस बात को ध्यान में रखते हुए कि स्वेज के पूर्व के क्षेत्रों से ब्रिटेन तथा अमरीका के हट जाने से हिन्दमहासागर क्षेत्र में एक शक्तिशून्यता पैदा हो गई है, भारत को दक्षिणी-पूर्वी एशिया, विशेषतः हिन्दमहासागर से लगे देशों के बीच क्षेत्रीय समझौते तथा सहयोग के लिए प्रयत्न करने चाहिए जिससे इस सम्पूर्ण भूखण्ड की चीनी विस्तारवाद से रक्षा की जा सके। इनका मुख्य भार भारत, आस्ट्रेलिया तथा जापान को सम्भालना है, जिन्हें इस क्षेत्र के व्यापक हितों को ध्यान में रखकर एक दूसरे के साथ अधिक सहयोग से काम करना है। इस क्षेत्र में ताइवान की महत्वपूर्ण स्थिति है क्योंकि उसे कम्युनिस्ट चीन के उद्देश्यों और साधनों के बारे में गहरी जानकारी है। ताइवान के साथ घनिष्ठ संबंध होना इस क्षेत्र में होने वाले किसी भी सहयोग का एक आवश्यक अंग है।

(4) अन्य देशों की अपेक्षा भारत के हितों की दृष्टि से इस बात की अधिक त्वरित आवश्यकता है कि पश्चिमी एशिया में शांति की स्थापना हो व स्वेज नहर का रास्ता खुले। अतः भारत को अरब-इसराइल संघर्ष में एक पक्ष का साथ देने के बजाय, मध्यस्थ तथा शांति के स्थापक की भूमिका निभानी चाहिए। इसराइल के प्रति भारत सरकार की अस्पृश्यता की वर्तमान नीति न तो तर्कसंगत है और न राष्ट्रीय है। यह एक दलीय नीति है, जिसके मूल में सांप्रदायिकता निहित है।

इस नीति को बदला जाय और इसराइल के साथ संबंधों को सामान्य बनाने के लिए कदम उठाये जायें।

(5) पाकिस्तान में हाल में हुए परिवर्तन भविष्य में आने वाले संकट के संकेत हैं। पाकिस्तान के नये तानाशाह जैसे ही पूर्वी बंगाल की जनता को या तो दबा पाने या संतुष्ट कर लेने में सफल होंगे वैसे ही वह पश्चिमी पाकिस्तान में अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए भारत-विरोधी भावनाएं भड़काने का यत्न कर सकते हैं। पाकिस्तान सरकार द्वारा काश्मीर के प्रश्न को सुरक्षा परिषद् में उठाने का निर्णय उसकी मनःस्थिति का सूचक है। पाकिस्तान को जिस बड़े पैमाने पर विदेशों से निरंतर शस्त्रास्त्र प्राप्त हो रहे हैं, और सोवियत रूस ने जिस भांति उसके प्रति अपने प्रेम का प्रदर्शन किया है उससे भारत-पाकिस्तान और भारत-रूस संबंधों के लिए कठिनाई पैदा होगी। भारत की विदेश नीति का उद्देश्य, एक ओर पाकिस्तान के इरादों का भंडाफोड़ करना, तो दूसरी ओर उसके आक्रामक इरादों के विरुद्ध विश्वस्त मित्र तथा साथियों की तलाश करना होना चाहिए। पाकिस्तान की भीतरी घटनाओं के कारण किसी प्रकार के समाधान का अनुभव करना या लापरवाही बरतना अनुचित होगा।

(6) अफगानिस्तान तथा पाकिस्तान के हितों का परस्पर टकराव तथा ईरान और अरब देशों के मध्य बढ़ती हुई खाई—पश्चिमी एशिया की स्थिति की एक कठोर वास्तविकता है। अफगानिस्तान तथा ईरान दोनों के साथ सदियों से हमारे पुराने सांस्कृतिक, आर्थिक तथा राजनैतिक संबंध हैं, जिन्हें मजबूत किया जाना चाहिए। पख्तूनिस्तान के प्रश्न पर अफगानिस्तान को भारत की सहानुभूति का विश्वास दिलाने के लिए कुछ ठोस पग उठाने की आवश्यकता है।

(7) भारत को अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में सांस्कृतिक कड़ियों के स्थायी महत्व को समझना चाहिए। उसे चाहिए कि हिंदू-बौद्ध परंपरा तथा संस्कृति को मानने वाले देशों का एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाये।

(8) राष्ट्रमंडल की उपयोगिता अब ब्रिटेन के लिए भी समाप्त हो चुकी है। वह अनुपयोगी तथा निरर्थक रह गया है। भारत को उसका परित्याग कर ब्रिटेन तथा राष्ट्रमंडल के अन्य देशों के साथ समसहयोग तथा परस्पर हित संबंधों के आधार पर अपने द्विपक्षीय संबंधों का विकास करना चाहिए।

(9) पूर्वी यूरोप में यूगोस्लोवाकिया तथा रूमानिया, पश्चिमी यूरोप में पश्चिमी जर्मनी तथा फ्रांस और लैटिन अमरीका में ब्राजील और चीली अपने विशिष्ठ व्यक्तित्व और स्वतंत्र सत्ता को प्रस्थापित कर रहे हैं। भारत को सभी दृष्टि से इन देशों की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए।

(10) भारत को विदेशों में बसे भारतीयों के भविष्य के प्रति ही नहीं अपितु उन भारतमूलक लोगों के भविष्य के प्रति भी अधिक रुचि लेनी चाहिए जो मॉरिशस, सुरीनाम, ब्रिटिश गयाना और फिजी जैसे स्वतंत्र देशों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। जिस ढंग से ब्रिटेन फिजी और गयाना में भारतमूलक लोगों के

बहुमत को कुटिल चुनाव-पद्धति में जोड़-तोड़ के द्वारा अल्पमत में बदलने का प्रयास कर रहा है, उससे न केवल उन लोगों के प्रति गंभीर अन्याय हो रहा है अपितु ब्रिटेन का यह कार्य लोकतांत्रिक विश्व के लिए भी एक चुनौती है। रोडेशिया में अल्पमत की सरकार में सहयोगी होने के पश्चात् अंग्रेजों को भारतमूलक लोगों के साथ इसी प्रकार का व्यवहार कहीं पर भी करने में किसी लज्जा का अनुभव नहीं होगा। किंतु भारत सरकार को यह धारणा पैदा नहीं होने देनी चाहिए कि वह इस मामले में असहाय है। उसे सभी कूटनीतिक उपायों द्वारा भारतमूलक लोगों के हितों का संरक्षण करने के लिए प्रयत्न करने चाहिए। भारत को ब्रिटेन पर भी इस बात का दबाव डालना चाहिए कि वह पूर्वी अफ्रीका में रहने वाले उन एशियाई लोगों के प्रति, जिनके पास ब्रिटिश पारपत्र हैं, अपने दायित्व का पालन करें।

[26 अप्रैल 1969; बम्बई, पन्द्रहवां सा०अ०]

70.04. पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यक

देश के विभाजन के समय 1947 में विभक्त भारत में काफी संख्या में मुसलमान और पाकिस्तान में बड़ी संख्या में हिंदू अल्पसंख्यक शेष रह गये थे। श्री जिन्ना और डॉ० अम्बेडकर का सुझाव था कि विभाजन की युक्तिसंगति के रूप में, भारत और पाकिस्तान में रह गये हिंदू और मुसलमानों की जनसंख्या का, विनिमय कर लिया जाय परंतु बाद में अंग्रेजों की उत्तराधिकारिणी कांग्रेस और मुस्लिम लीग ने फैसला किया कि दोनों क्षेत्रों में बचे हुए हिंदुओं और मुसलमानों को सुरक्षा और समान अधिकारों की गारंटी दी जाय। वास्तव में यह विभाजन के समझौते का मूल आधार था और विभक्त भारत में हिंदू और मुस्लिम अल्पसंख्यकों के विषय में जो वास्तविक तथा उचित चिंताएं और आशंकाएं थीं उनको दूर करने के लिए दोनों ओर से सार्वजनिक रूप में इस जिम्मेदारी को स्वीकार किया गया था।

पूर्वी पंजाब और पश्चिमी पाकिस्तान की हिंदू और मुस्लिम जनसंख्या के अनौपचारिक विनिमय के पश्चात् भारत में लगभग 3 करोड़ मुसलमान तथा पाकिस्तान में 1·5 करोड़ हिंदू रह गये थे।

अल्पसंख्यकों की वृद्धि की गति—भारत के लिए यह गर्व का विषय है कि उसने अपने वचन और अल्पसंख्यक मुसलमानों की पूरी रक्षा की है तथा उन्हें बराबरी के अधिकार दिये हैं। भारत में मुसलमानों की तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या इस बात की साक्षी है। 1961 की जनगणना के अनुसार यह जनसंख्या 5 करोड़ थी और अब लगभग 6 करोड़ होगी।

पाकिस्तान में भी जनसंख्या वृद्धि की गति भारत के समान ही है। यदि पाकिस्तान ने भी अपनी हिंदू अल्पसंख्या की सुरक्षा के लिए दिये गये आश्वासनों का समादर किया होता तो 1961 की जनगणना में हिंदुओं की जनसंख्या 2·5

करोड़ हो जानी चाहिए थी। परंतु 1961 में पाकिस्तान में हिंदुओं की जनसंख्या उलटे घटकर 90 लाख रह गई थी जो निरंतर घटती ही जा रही है।

इसका मुख्य कारण पाकिस्तान के शासकों द्वारा आतंक के जरिये हिंदुओं को निकाल बाहर करने अथवा उनका धर्म-परिवर्तन करने की योजनाबद्ध नीति का अपनाया जाना है। लगभग 50,000 हिंदू 1950 में मौत के घाट उतार दिये गये तथा 1·5 करोड़ के लगभग कुछ ही महीनों में निकाल बाहर किये गये। 1964 में पुनः एक गंभीर स्थिति पैदा हुई थी जब 30,000 से अधिक लोगों की हत्या कर दी गई। उस समय श्रीनगर की एक मस्जिद से हजरत मुहम्मद के बाल की तथाकथित चोरी हो जाने की इसे प्रतिक्रिया बताया गया था।

दिसम्बर 1969 से, पूर्वी पाकिस्तान से हिंदुओं के निष्क्रमण ने पुनः चिंताजनक रूप धारण कर लिया है। तब से लगभग 2 लाख लोग आ चुके हैं। बाहर धकेलने की इस कार्यवाही के लिए कोई प्रत्यक्ष कारण दिखाई नहीं देता। मौके पर जाकर एकत्र की गई जानकारी के अनुसार, हिंदुओं की संपत्ति को लूटने और उनकी महिलाओं का हर प्रकार का अपमान कर उन्हें भयातंकित करके निष्कासित किया जा रहा है। पाकिस्तान सरकार इस षड्यंत्र में सम्मिलित है। ऐसा लगता है कि पाकिस्तान ने शेष बच रहे कुछ लाख हिंदुओं और बौद्धों का धर्म-परिवर्तन करने, उन्हें समाप्त करने अथवा उन्हें बाहर निकालने का निश्चय कर लिया है।

इतिहास का निकृष्टतम जाति विनाश—इन 20 वर्षों में 1 करोड़ हिंदुओं के नरसंहार और पाकिस्तान से बाहर धकेले जाने का इतिहास में दूसरा उदाहरण नहीं मिलेगा। विश्व इतिहास में निकृष्टतम जाति-विनाश की यह भयावह घटना है।

भारतीय जनसंघ के संस्थापक-प्रधान डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी पाकिस्तान स्थित हिन्दुओं के भाग्य के बारे में बहुत चिन्तित और बेचैन थे। पाकिस्तान के हिन्दुओं के प्रश्न पर श्री नेहरू की दुर्बल और अयथार्थवादी नीति के विरोधस्वरूप उन्होंने 1950 में नेहरू मंत्रिमण्डल से त्यागपत्र दे दिया था। स्वभावतः भारतीय जनसंघ अपने प्रारम्भ से इस समस्या को एक राष्ट्रीय समस्या के रूप में देखता रहा है। उसका मत है कि सरकार तथा जनता का पाकिस्तान में बचे तथा वहां से भागकर आये हिन्दुओं के प्रति एक उत्तरदायित्व है। खेद का विषय है कि भारत सरकार पूर्वी बंगाल में बचे तथा वहां से आये हिन्दुओं के प्रति अपने कर्तव्य-पालन में अब तक विफल रही है।

जनसंघ का निश्चित मत है कि पाकिस्तान के विस्थापितों की सहायता और पुनर्वास तथा पाकिस्तान में शेष हिन्दुओं के जीवन, सम्मान और सम्पत्ति की रक्षा के लिए भारत सरकार को अल्प और दीर्घकालीन दोनों प्रकार के पग उठाने चाहिए। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जनसंघ मांग करता है कि :

(1) यह देखते हुए कि नेहरू-लियाकत समझौते के समान अनेक समझौतों और विरोधपत्रों को पाकिस्तान सरकार रद्दी की टोकरी में फेंकती चली आई है और उस पर उनका कोई प्रभाव नहीं हुआ है, पाकिस्तान में बचे हिन्दुओं के प्रति न्याय की कोई आशा नहीं है। अतः जनसंघ स्वर्गीय सरदार वल्लभभाई पटेल द्वारा सर्वप्रथम की गई इस मांग को, कि पूर्वी बंगाल से आये विस्थापितों को बसाने के लिए भूमि मांगी जाय, पुनः दुहराता है। यह भी आवश्यक है कि विस्थापित हिन्दुओं द्वारा पाकिस्तान में छोड़ी गई सम्पत्ति और भारत में उनके पुनर्वास के लिए पाकिस्तान से पर्याप्त क्षतिपूर्ति की भी मांग की जाय।

(2) पाकिस्तान में चल रहे इस जाति-विनाश और हिन्दुओं को निर्वासित करने की प्रक्रिया के विरुद्ध अपने देश में तथा दुनिया भर में जनमत का प्रशिक्षण तथा जागरण किया जाय। भारत सरकार इस मामले में अपना कर्तव्यपालन करने के बजाय उल्टे पाकिस्तान के इस (तथ्यों के विरुद्ध) दोषारोपण की सफाई देने में प्रयत्नशील है कि भारत में मुसलमानों का जातिविनाश किया जा रहा है। सरकार को अपना प्रचार तेज करना चाहिए तथा पाकिस्तान के हिन्दुओं का विषय हिम्मत के साथ संयुक्त राष्ट्रसंघ तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर उठाना चाहिए।

(3) सरकार को स्पष्ट कर देना चाहिए कि वह पाकिस्तान के साथ किश्तों में तथा केवल उसके अनुकूल विषयों पर उस समय तक बात नहीं करेगी जब तक पाकिस्तान के हिन्दुओं का प्रश्न सुलझ नहीं जाता। यह एक बुनियादी और राष्ट्रीय समस्या है जिसे भारत और पाकिस्तान के बीच वार्ता और समझौतों के सब प्रश्नों के ऊपर प्राथमिकता देनी चाहिए।

(4) पाकिस्तान से विस्थापित हिन्दुओं के पुनर्वास का कार्य राष्ट्रीय आधार पर युद्ध-स्तर पर किया जाय। प० बंगाल के बशीरहाट, हसनाबाद, बोनगांव स्थित विस्थापित शिविरों की स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। उन्हें सुधारा जाना चाहिए।

[18 जुलाई 1970; चंडीगढ़, भा०प्र०स०]

70.09. विदेश नीति के सार व स्तर में गिरावट

केन्द्रीय कार्य समिति को यह देखकर भारी विस्मय है कि सरकार की विदेश नीति का ही सार और स्तर दोनों सतत् गिरते जा रहे हैं। माओ की मुस्कान और कोसीगिन की भृकुटि पर यह नीति थिरकती है। धौंस और धमकी देने वाले देशों के साथ भारत का पल्ला, तटस्थता के नाम पर भारत सरकार ने बांध दिया है। भारत को दो महाशक्तियों के दुगड्डे का पिछलग्गू मात्र बना दिया गया है।

चीन द्वारा पाकिस्तान को शस्त्र देना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। परन्तु अमरीका और रूस का भी इस दौड़ में निस्संकोच सम्मिलित होना प्रकट करता है कि इन देशों का भारत सरकार के प्रति कितना हेय भाव है। वास्तव में सारी दुनिया ही यह मानने लगी है भारत को चाहे जैसा चलाया जा सकता है। भारत की प्रतिष्ठा इतनी गिर गई है कि श्रीलंका भी भारतमूलक नागरिकों के

साथ घोर दुर्व्यवहार कर रहा है।

अमरीका द्वारा पाकिस्तान को पुनः शस्त्र देना भारत पर सबसे ताजी चोट है। पाकिस्तान की इस घोषणा के संदर्भ में कि भारत ही उसका एकमात्र शत्रु है, अमरीका का यह फैसला भारी अमैत्रीपूर्ण कृत्य है। पाकिस्तान के हाथों अमरीकी हथियारों से भारत का रक्त पहले ही बहाया गया है और यदि समय रहते अमरीका ने अपना हाथ न खींचा तो पाकिस्तान फिर ऐसा करने से बाज नहीं रह सकता।

रूस की घिरती छाया—सर्वाधिक चिन्ता की बात यह है कि भारत पर रूस की छाया निरंतर घिरती जा रही है। पंगु बना देने वाली रूस पर हमारी सैनिक निर्भरता अत्यंत लज्जास्पद और खतरनाक है। रूस के भारत-विरोधी नक्शे उसके इरादों की चेतावनी है। उद्योगों, आकाशवाणी और टेलीविजन से लेकर प्रशासन के भीतर तक तथा भारतीय जीवन के कई क्षेत्रों में कम्युनिस्टों की घुसपैठ भविष्य के संकट की पूर्व-सूचना है। रूसी रेडियो लगातार भारतीय नेताओं को बदनाम कर रहा है तथा निर्लज्जतापूर्वक भारत के घरेलू मामलों में हस्तक्षेप कर रहा है।

चीन का हाल का यह दुराग्रह कि भारत फार्मूसा को मान्यता न दे हमारी विदेश नीति के विषय में हमें निर्देश देने के बराबर है। तिब्बत की स्वतंत्रता को विस्मृत करने की मांग भी हिमालय के क्षेत्र में स्थायी शांति के मुख्य आधार को ही मिटा देने के बराबर है। इससे यह स्पष्ट है कि चीन के रवैये में कोई सुधार नहीं हुआ और वह पहले की भांति हमारा शत्रु बना हुआ है। आश्चर्य है कि इस पर श्रीमती गांधी केवल इस कारण चीन की नीति में परिवर्तन समझ रही हैं कि उनके एक कर्मचारी को माओ की मुस्कान भरी चितवन दिखाई दी है। अंतर्राष्ट्रीय मामलों में इस प्रकार का बचकाना रवैया भारत की सुरक्षा के लिए बड़े संकट का कारण बन सकता है। भारत की जनता और संसद चीन के आक्रमण से अपनी भूमि की मुक्ति कराने के लिए शपथबद्ध है। चीन के प्रति अपनी नीति के इन मूल तत्वों से हटकर काहिरा में अथवा अन्यत्र,चीन के साथ किसी प्रकार की गुप्त वार्ता करने के विरुद्ध भारतीय जनसंघ सरकार को चेतावनी देना चाहता है।

[6 नवम्बर 1970; दिल्ली, के०का०स०]

71.02. स्वाधीन बंगलादेश को मान्यता

बेतुका पाकिस्तान—गत 1 दिसम्बर को शेख मुजीबुर्रहमान की आवामी लीग द्वारा नेशनल एसेंबली एवं पूर्वी बंगाल की एसेंबली में भारी बहुमत प्राप्त करने के पश्चात से बंगलादेश में घटी अत्यन्त बर्बरतापूर्ण घटनाएं यद्यपि आकार और प्रकार में अभूतपूर्व हैं फिर भी वे मुस्लिम लीग और कांग्रेस द्वारा 24 वर्ष पूर्व स्वीकृत द्विराष्ट्रवाद के आधार पर बेतुके रूप से गठित पाकिस्तान का सहज परिणाम हैं। कलकत्ता की तुलना में ढाका से 1200 मील दूर स्थित लाहौर

और इस्लामाबाद को अधिक निकट मानना तथा पूर्वी बंगाल के नागरिक के लिए अपने पड़ौसी गैर-मुस्लिम बंगाली से अधिक घनिष्ट नाता रखने वाला पश्चिमी पंजाब के निवासी को मानना—यह विचारधारा तर्कहीन, अवैज्ञानिक और अव्यावहारिक है।

द्विराष्ट्रवाद की अन्त्येष्टि—विभाजन के तुरन्त पश्चात द्विराष्ट्रवाद की यह विचारधारा ढहने लगी थी। पख्तूनिस्तान के आंदोलन का पुनः प्रारम्भ होना, ढाका में उर्दू-विरोधी दंगे, 1954 के पाकिस्तान के प्रथम चुनाव में श्री फ़ज़लुलहक की भारी विजय होना तथा 'मुस्लिम भावना' अथवा 'पाकिस्तानी भावना' से भिन्न सिंध में 'सिंधी भावना' का पुनरोदय, पूर्वी बंगाल की वर्तमान घटनाओं के और सिंध, बिलोचिस्तान और पख्तूनिस्तान में उनकी प्रतिध्वनियों के आरंभिक संकेत थे। इन घटनाओं ने द्विराष्ट्रवाद की जितनी धज्जियां उड़ाईं उतनी शायद और किसी बात से नहीं उड़ीं। इससे वह आधार ही प्रायः समाप्त हो गया जिस पर भारत के टुकड़े करके पाकिस्तान का निर्माण हुआ था। ये घटनाएं पाकिस्तान की परिसमाप्ति और विधाता तथा निसर्ग द्वारा निर्मित अखंड भूखंड के पुनरपि एकीकरण की अग्रदूत हैं।

भारत की कोई भी राष्ट्रवादी सरकार इन घटनाओं का स्वागत करती और मानवीय व लोकतांत्रिक मूल्यों और मान्यताओं के संरक्षण को तथा राष्ट्रीय हितों की रक्षा को ध्यान में रखते हुए आवामी लीग को सब प्रकार की नैतिक, राजनयिक और साजो-सामान की सहायता देती। यदि सरकार ने समय पर कार्यवाही की होती तो बंगलादेश आज ठोस सचाई होता और जो नरसंहार और जातिविनाश, बच्चों पर अत्याचार, महिलाओं पर सामूहिक बलात्कार वहां हुआ है उसको तथा 70 लाख शरणार्थियों को भारत में धकेलने की प्रक्रिया को किसी हद तक रोका जा सकता था।

पाकिस्तानी नरमेध के तीन उद्देश्य—भारत सरकार के अनिश्चय और अकर्मण्यता से पाकिस्तान के फौजी तानाशाहों को यह प्रोत्साहन मिला कि वे इस प्रकार के नरमेध का कार्यक्रम अपनायें जो इतिहास में अद्वितीय है। इसके तीन उद्देश्य थे :

पहिला, जैसा कि श्री ऐंथोनी मैस्करेन्हास ने स्पष्ट शब्दों में कहा है, उन सब तत्वों को पूर्णतः नष्ट करना था जो पाकिस्तान की मौलिक विचारधारा को चुनौती दे रहे थे। इसी कारण उन्होंने बुद्धिजीवियों, विद्यार्थियों, प्राध्यापकों और उन सभी युवकों के, जो बंगलादेश के स्वाधीनता-आंदोलन के अगुआ थे, संहार के विशेष प्रयत्न किये।

दूसरा उद्देश्य पूर्वी बंगाल की जनसंख्या को कम करना था ताकि भविष्य में पाकिस्तान में चाहे किसी भी प्रकार का संविधान बने पश्चिमी पाकिस्तान और पूर्वी बंगाल की जनसंख्या बराबर रहे।

तीसरा लक्ष्य यह था कि जिस भांति पश्चिमी पंजाब से सभी हिंदुओं को

धकेल दिया गया था,उसी भांति पूर्वी बंगाल से भी एक-एक हिंदू को निकाल दिया जाय, जिससे सारा क्षेत्र शुद्ध इस्लामी इलाका बन जाय, जहां किसी विधर्मी का नामोनिशान न हो। इसी उद्देश्य से पूर्वी बंगाल से लगभग 1 करोड़ हिंदुओं को निकाल दिया गया, या उन्हें समाप्त कर दिया गया। हिंदुओं को मारने या बाहर निकालने की यह योजना इस्लामाबाद में सर्वोच्च स्तर पर बनाई गई थी। यह बात पाकिस्तान सरकार के मुखपत्र *'पाकिस्तान टाइम्स'* के लेखों और लंदन टाइम्स में 23 जून 1971 को *'हिंदुओं का विधिवत शिकार'* शीर्षक से प्रकाशित ढाका स्थित उसके संवाददाता माइकेल हार्नबी के वृत्त से स्पष्ट हो जाती है।

पाकिस्तान की इस नीति का एक लक्ष्य यह भी प्रतीत होता है कि सिंध, बिलोचिस्तान और पख्तूनिस्तान के राष्ट्रभक्तों के मन में ऐसा आतंक बैठा दिया जाय कि वे बंगलादेश के राष्ट्रभक्तों का अनुकरण करने का साहस न कर सकें।

प्रकारांतर से पाक आक्रमण—आज स्थिति स्पष्टतः यह है कि पाकिस्तान के तानाशाहों ने 70 लाख शरणार्थियों को हिंदुस्तान में धकेल दिया है। शरणार्थियों का यह अभूतपूर्व प्रवाह (जो अभी जारी है) और उससे उत्पन्न होने वाले सारे आर्थिक, राजनैतिक तथा भावोत्तेजक परिणामों को भुगतने के लिए भारत को विवश करके पाकिस्तान ने एक प्रकार का उस पर आक्रमण किया है। इसके साथ ही पाकिस्तान की सेनाएं भारत की सीमाओं पर छुटपुट हमले, उसकी नभसीमा का अतिक्रमण तथा अन्य प्रकार की आक्रामक कार्यवाहियां बेरोक-टोक करती रही हैं। भारत सरकार ने स्वयं यह स्वीकार किया है कि हमारी सीमा पर पाकिस्तान के इस प्रकार के अंधाधुंध आक्रमणों से अब तक सैकड़ों नागरिक और सैनिक मारे जा चुके हैं। काश्मीर और पश्चिमी भारत के दूसरे नाजुक क्षेत्रों में अपनी सुविधा का समय और स्थान चुनकर, आक्रमण करने की पाकिस्तान भारी तैयारियां भी कर रहा है।

विदेश नीति न तो राष्ट्रसंगत न युक्तिसंगत—इस आक्रमण का प्रतिकार करने के लिए उचित कार्यवाही करने के बजाय श्रीमती गांधी की सरकार 1939 की ब्रिटेन की चेंबरलेन-सरकार की भांति, इस महत्वपूर्ण विषय को टालने का प्रयास कर रही है। हमारी सरकार याहया खां की कार्यवाहियों की उपेक्षा करके उस पाकिस्तान का तुष्टीकरण कर रही है जिसने एक संपूर्ण जाति पर नृशंसता और बर्बरता ढाने में हिटलर को भी मात दे दी है। किसी देश के नेतृत्व की परीक्षा संकटकाल में ही होती है। अपने सत्ताकाल के इस संकट में श्रीमती गांधी ने यह सिद्ध कर दिया है कि वह देश का नेतृत्व करने की क्षमता नहीं रखतीं। देश का हित उनके हाथों में सुरक्षित नहीं है। मंत्रिमंडल, भारत की संसद और देश की जनता का स्पष्ट मार्गदर्शन करने के बजाय, प्रधानमंत्री ने अपने मंत्रियों को भारत और विस्थापितों के लिए सहानुभूति प्राप्त करने के नाम पर, भीख के कटोरे हाथ में लिये विश्व की राजधानियों में शब्दों का तानाबाना बुनने के लिए भेजकर बहुत-सा मूल्यवान समय बरबाद कर दिया है। यह प्रयत्न कितनी बुरी तरह असफल

हुआ है यह इसी से स्पष्ट है कि सरदार स्वर्णसिंह के वाशिंगटन छोड़ते ही संयुक्त राज्य अमरीका ने अस्त्र-शस्त्रों से लदे जहाज पाकिस्तान के लिए रवाना होने की इजाजत दे दी। अमरीका के इस निंदनीय रवैये से यह भी सिद्ध हो गया है कि अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में सिद्धांत, उदारता और नैतिकता के लिए कोई स्थान नहीं है। हर देश केवल अपने राष्ट्रीय हितों के आधार पर ही अपनी नीतियां निर्धारित करता है। वस्तुस्थिति यह है कि पाकिस्तान सिएटो और सैंटो सैनिक संगठनों का सदस्य है। इसलिए अमरीका और ब्रिटेन भारत के विरुद्ध सैनिक संतुलन बनाये रखने के लिए पाकिस्तान की एकता को कायम रखना चाहते हैं। सोवियत संघ भी इस मामले में भारत और पाकिस्तान के बीच तटस्थता की नीति अपना रहा है।

अरब और अन्य मुस्लिम देशों के रवैये से तो किसी को आश्चर्य होना ही नहीं चाहिए। यह रवैया ठीक वैसा ही है जैसा उन्होंने भारत पर 1962 में चीनी आक्रमण और 1965 में पाकिस्तानी आक्रमण के समय अपनाया था। मगर इससे निर्विवाद रूप से भारत की विदेश नीति का खोखलापन स्पष्ट हो जाता है। हमारी विदेश नीति न तो राष्ट्रसंगत है और न युक्तिसंगत।

इन सबका परिणाम यह है कि पाकिस्तान को,अपनी योजनाओं पर अमल करते रहने के लिए प्रोत्साहन मिल रहा है। याहया खां का वह रेडियो भाषण, जिसमें उन्होंने तथाकथित विशेषज्ञों द्वारा एक नया संविधान बनाने की घोषणा की व जिसमें आवामी लीग के सदस्यों को बरखास्त कर ढाका में एक कठपुतली सरकार स्थापित करने की योजना है, संपूर्ण हत्याकांड पर एक सफेद चादर डालने और विश्व के सामने एक ऐसी वस्तुस्थिति पेश करने की कोशिश है जिससे संपूर्ण मामला दब जाय। पाकिस्तान के मित्रराष्ट्र इन घटनाओं को ध्यानपूर्वक देख रहे हैं और अवसर मिलते ही वे पाकिस्तान को कठिनाई से बाहर निकालने के लिए तैयार भी हैं। इससे बंगलादेश के साथ राजनैतिक समझौता करने की बातें निरर्थक बन गई हैं। कोई भी राजनैतिक समझौता मुजीबुर्रहमान और आवामी लीग के साथ ही होना चाहिए न कि याहया खां की कठपुतलियों के साथ।

बंगलादेश की अविलंब सहायता—इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए भारतीय जनसंघ का यह सुविचारित मत है कि भारत सरकार को निम्नलिखित दिशा में अविलंब पग उठाने चाहिए :

(1) स्वाधीन बंगलादेश की निर्वाचित सरकार को तुरंत मान्यता दी जाय और पूर्वी बंगाल में स्थिति को सामान्य बनाने के लिए प्रभावी नैतिक और भौतिक सहायता प्रदान की जाय। शेख मुजीबुर्रहमान और अन्य बंदियों की रिहाई का प्रयत्न किया जाय।

(2) विस्थापितों को दूर के स्थान पर ले जाना बंद किया जाय और जहां तक संभव हो उनके लिए बंगलादेश की सीमा पर ही शिविर बनाये जायें ताकि ज्यों ही पाकिस्तान की आक्रमणकारी सेना वहां से निकाल बाहर की जाय त्यों ही वे सब अपने घरों को वापस जा सकें। विस्थापितों को सैनिक प्रशिक्षण

दिया जाना चाहिए।

(3) हमारी सीमा पर होने वाले पाकिस्तानी आक्रमण का प्रतिकार करने के लिए प्रभावी सैनिक कार्यवाही की जाय।

(4) शेख अब्दुल्ला, मजलिसे मुशावरात, तामीर मिल्लत, जमाते इस्लामी, मुस्लिम लीग और उन सब तत्वों की प्रभावी रोकथाम की जाय जिन्होंने बंगलादेश में किये गये नरसंहार के लिए पाकिस्तान के सैनिक तानाशाहों की निंदा करने से लगातार इनकार किया है। ऐसे समाचारपत्रों पर भी कार्यवाही की जाय जिन्होंने बंगलादेश के प्रश्न पर राष्ट्रीय भावनाओं की अभिव्यक्ति के बदले पाकिस्तान के पक्ष की पुष्टि की है।

(5) पाकिस्तानी आक्रमण का प्रतिकार करने, बंगलादेश के लोगों के लिए न्याय प्राप्त करवाने और भारत की प्रतिष्ठा, अखंडता एवं सुरक्षा के संरक्षण के लिए, सभी देशभक्त संगठनों का सहयोग प्राप्त करने के निमित्त पग उठाये जायें।

(6) भारत की विदेश-नीति के सभी पहलुओं का एक मौलिक पुनर्मूल्यांकन किया जाय। भारतीय जनसंघ अपनी शाखाओं का आवाहन करता है कि वे इन मांगों के समर्थन में जनमत का शिक्षण और जागरण करें ताकि देश के व्यापक हितों के लिए सरकार को प्रभावशाली कार्यवाही करने के लिए विवश किया जा सके। भारतीय जनसंघ जनता से भी अपील करता है कि वह विस्थापितों के कष्टनिवारण के लिए तन-मन-धन से सहायता करें।

[2 जुलाई 1971; उदयपुर, सत्रहवां सा०अ०]

71.05. भारत-रूस संधि

भारतीय जनसंघ ने भारत और रूस के बीच 'शांति, मित्रता एवं पारस्परिक सहयोग' की संधि पर विचार किया।

कार्य समिति इस संधि का इस सीमा तक स्वागत करती है कि इससे अमरीका द्वारा पाकिस्तान को निरंतर शस्त्रास्त्र दिये जाने का जवाब मिलता है, भारत-पाक मामलों में चीन का हस्तक्षेप रुकता है और भारत का अकेलापन खत्म होता है।

फिर भी जनसंघ संधि का आखें मूंदकर समर्थन करने के लिए तैयार नहीं है। वर्तमान स्थिति में इस संधि की कसौटी यह है कि बंगलादेश की स्वतंत्रता में यह कितना योगदान देती है।

अनंतकालीन संधि—वस्तुतः इस संधि के द्वारा शासन ने देश को आश्चर्य में डाल दिया है। यह कहा जाता है कि इस प्रकार की संधि पर वर्षों से वार्ता चल रही थी। यह समझ में नहीं आता कि इतने लम्बे समय में किसी भी मौके पर संसद को विश्वास में क्यों नहीं लिया गया? एक बड़ी आपत्ति यह है कि यह संधि हमें सदैव के लिए बांधती है और प्रथम चरण में 20 वर्षों तक जारी रहेगी। इतनी

दीर्घकालीन संधि का कोई औचित्य सिद्ध नहीं किया गया है।

यह आश्चर्यकारक है कि सरकार संधि के 'ऐतिहासिक' होने का दावा कर रही है और यह भी समझा रही है कि इससे देश की विदेश नीति में कोई परिवर्तन नहीं होगा। यदि सारी बातें ज्यों की त्यों रहेंगी तो फिर इसके बारे में 'ऐतिहासिक' कुछ भी नहीं है। सचाई यह है कि भले के लिए हो अथवा बुरे के लिए, इस संधि से भारत की गुटनिरपेक्षता का अंत हो गया है।

संधि का अनुच्छेद 9 भारत तथा रूस, दोनों देशों को किसी तीसरी शक्ति द्वारा आक्रमण की स्थिति में परस्पर विचार-विनिमय के लिए बाध्य करता है। अनुच्छेद 10 दोनों देशों को तीसरे देश से ऐसे समझौते करने से रोकता है, जो इस संधि के अनुकूल नहीं है। इन दोनों अनुच्छेदों को ध्यान में रखते हुए अनुच्छेद 4 जिसमें कहा गया है कि "रूस भारत की गुटनिरपेक्षता नीति का आदर करता है" केवल आंसू पोंछने वाली बात है। यह दावा करना कि इस संधि के बाद भी भारत गुटनिरपेक्ष राष्ट्र बना रहता है, आत्मवंचना का अभ्यास है।

यद्यपि यह संधि बराबरी की संधि है, फिर भी दोनों देशों के बीच शक्ति तथा दर्जे की जो असमानता है वह रूस तथा भारत के विदेश मंत्रियों द्वारा जारी किये गये संयुक्त वक्तव्य से स्पष्ट हो गई है। यह वक्तव्य भारत को हिन्द-चीन के बारे में विएतकांग के सप्त-सूत्रीय हल से बांधता है, किन्तु स्वतंत्र बंगलादेश की स्थापना के आवामी लीग के संकल्प के साथ सोवियत रूस को निगड़ित नहीं करता। यदि संयुक्त वक्तव्य से सोवियत चिन्तनदिशा का कोई संकेत मिलता है, तो यह कहा जा सकता है कि रूस बंगलादेश की समस्या का समाधान पाकिस्तान के ढांचे के भीतर चाहता है। यह ऐसी बात है जिसे न तो बंगलादेश स्वीकार कर सकता है और न जिससे 80 लाख विस्थापितों की समस्या का हल हो सकता है।

अतः कार्य समिति का यह सुविचारित मत है कि भारत-रूस संधि पर अब तक किये गये विचार की अपेक्षा अधिक गहराई से सोचा जाना चाहिए। संधि की कसौटी उसकी शब्दावली नहीं, उसका कार्यान्वयन होगा। इस संधि को भारत तथा बंगलादेश के राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध प्रयुक्त नहीं होने दिया जा सकता।

अब जबकि भारत तथा रूस संधि-मित्र हैं, हम आशा करते हैं कि सोवियत प्रेस तथा रेडियो भारत के आंतरिक मामलों में दखल नहीं देंगे। इस संधि के प्रति प्रामाणिकता का परिचय देने के लिए हम आशा करते हैं कि रूस अपने नक्शों का संशोधन करेगा और भारत-तिब्बत सीमा का सही अंकन करेगा।

भारतीय जनसंघ का यह दृढ़ विश्वास है कि यदि इस संधि द्वारा दोनों देशों का समान रूप से हित-सम्पादन करना है, तो भारत को शक्ति-संचय करके एक स्वतंत्र शक्तिकेन्द्र के रूप में विकसित होना है। इसके लिए आणविक क्षमता का विस्तार जरूरी है।

ऐसी ही संधि दूसरों के साथ—जनसंघ का यह भी मत है कि अपनी नीति को व्यापक बनाने तथा विश्व में भारत की स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए

हमें इस प्रकार की संधि अन्य देशों यथा बर्मा, लंका, इण्डोनेशिया तथा जापान के साथ भी करनी चाहिए।

सुरक्षा संधियों में बहुधा गुप्त धाराएं होती हैं। इस संधि की अनुच्छेद 10 में भी यह उल्लेख है कि दोनों देश "इस प्रकार का कोई दायित्व, सार्वजनिक अथवा गुप्त, किसी अन्य देश अथवा अनेक देशों के साथ ग्रहण नहीं करेंगे, जो इस संधि के विपरीत है।" सरकार का कर्तव्य है कि प्रमुख दलों के नेताओं को वह इस बात पर विश्वास में ले, जिससे भविष्य में कोई विवाद खड़ा न हो।

[13 अगस्त 1971; दिल्ली, के०का०स०]

71.06. पाकिस्तान के अंतर्गत बंगलादेश नहीं

केन्द्रीय कार्य समिति भारत पर बंगलादेश के प्रति विश्वासघात करने का आरोप लगाती है। विदेशमंत्री श्री स्वर्णसिंह द्वारा शिमला में "पाकिस्तान के अन्तर्गत राजनीतिक हल" की मांग करना एक लज्जाजनक और आड़े समय पर साथ छोड़ना है। यह वक्तव्य (जो सरकारी प्रवक्ताओं द्वारा अब तक दिये गये आश्वासनों के सर्वथा विपरीत है) राष्ट्रहितों का संरक्षण करने में, सत्तारूढ़ कांग्रेस को नितांत अक्षमता को स्पष्ट करता है और राष्ट्रीय निर्णय करने में महाशक्तियों के मोहताज होने की उसकी दयनीय स्थिति को प्रकट करता है।

प्रधानमंत्री ने देश को आश्वासन दिया था कि बंगलादेश के विस्थापित 6 महीनों में अपने घरों को वापस लौट जायेंगे। 6 महीने बीत चुके हैं, किन्तु विस्थापित वापस जाने के बजाय और अधिक संख्या में आ रहे हैं। बरसात की समाप्ति के साथ याहिया खाँ के टैंक लोगों का संहार पुनः शुरू करेंगे जिससे इस देश में आने वालों की संख्या और बढ़ेगी। बंगलादेश में आज जो लगभग अकाल की स्थिति विद्यमान है उससे समस्या और अधिक गंभीर रूप धारण करेगी।

गत अगस्त में की गई भारत-रूस संधि के बारे में जनसंघ ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा था कि संधि का मूल्यांकन उसकी कथनी से नहीं, उसकी करनी से होगा और जहां तक भारत का संबंध है, संधि की कसौटी यह होगी कि उससे बंगलादेश की समस्या को हल करने में कितनी सहायता मिलती है। सरदार स्वर्णसिंह का वक्तव्य इस बात का संकेत है कि संधि ने इस मामले में हमारी सहायता करने के बजाय, कोई भी कदम उठाने की हमारी स्वतंत्रता को कुंठित ही किया है। उसने हमें बंगलादेश की स्वाधीनता के प्रश्न पर अपना समर्थन वापस लेने को विवश किया है और संयुक्त पाकिस्तान का ढांचा कायम रखने की सोवियत उत्सुकता— जिसमें अमरीका भी भागीदार है— के सम्मुख सिर झुकाने को मजबूर किया है।

इस बारे में सोवियत रूस ने अपने दृष्टिकोण को छिपाने का कभी प्रयास नहीं किया। बहुप्रशंसित इन्दिरा-कोसीगिन संयुक्त वक्तव्य (जिसके बारे में यह दावा किया गया था कि पाकिस्तान की अखंडता के प्रश्न पर वह सोवियत रूस की

नीति में बड़े परिवर्तन का द्योतक है) के कुछ ही दिनों बाद, सोवियत नेताओं ने अल्जीरियाई नेताओं के साथ (9 अक्तूबर 1971 को) एक संयुक्त विज्ञप्ति में "पाकिस्तान की एकता तथा अखंडता के प्रति समादर" की पुष्टि कर दी है और भारत तथा पाकिस्तान दोनों से अपील की है कि "दोनों देश अपनी समस्याओं का शांतिपूर्ण हल ताशकन्द सम्मेलन की भावना से निकालें···।"

प्रधानमंत्री यह सिद्ध करने की चेष्टा करती रही हैं कि भारत-रूस संधि ने बंगलादेश के प्रश्न पर कार्यवाही करने की भारत की स्वतंत्रता को किसी प्रकार कम नहीं किया है और यह कि सोवियत दृष्टिकोण ने भारत की बंगलादेश संबंधी नीति को प्रभावित नहीं किया है। इस प्रकार के इनकार किसी को गुमराह नहीं कर सकते। गत अनेक महीनों से प्रधानमंत्री तथा अन्य सरकारी प्रवक्ता, लोगों से यह कहते रहे हैं कि स्वाधीन तथा सार्वभौमिक बंगलादेश को मान्यता कब प्रदान की जाय इसका निर्णय सरकार पर छोड़ देना चाहिए। प्रतिरक्षामंत्री यह बात स्पष्ट कह चुके हैं कि स्वाधीनता से कम बंगलादेश की समस्या का और कोई हल नहीं हो सकता। इस प्रकार के असंदिग्ध वक्तव्यों के बावजूद (जो संसद के भीतर तथा बाहर बार बार दिये गये हैं) भारत सरकार द्वारा अचानक कलाबाजी खाना इसके सिवा और कोई भाव प्रस्तुत नहीं करता कि सरकार ने सोवियत दबाव में आकर शर्मनाक समर्पण करने का फैसला किया है।

भारत के लिए बंगलादेश की समस्या एक मानवीय समस्या से कहीं बड़ी है। इस प्रश्न से हमारी सुरक्षा, हमारी अर्थव्यवस्था तथा हमारी राजनीतिक स्थिरता गहरे रूप में जुड़ी हुई है। यदि विस्थापितों की वापसी को ही भारत की दृष्टि से समस्या का महत्वपूर्ण पहलू मान लिया जाय तो भी, इस तथ्य को भली भांति समझना होगा कि जब तक बंगलादेश याहया खाँ के शिकंजे से मुक्त नहीं होता और पाकिस्तानी सेना बिस्तर-बोरियां बांधकर वापस इस्लामाबाद नहीं जाती, बंगलादेश से आये हुए विस्थापित अपने घरों को नहीं लौटेंगे। ज्योंही कोई व्यक्ति 'पाकिस्तान के अन्तर्गत समाधान' की बात करता है, त्योंही वह उपर्युक्त दोनों अपरिहार्य आवश्यकताओं के द्वार बन्द कर देता है और इस प्रकार विस्थापितों के लौटने की सारी संभावनाएं रद्द कर देता है।

हमारी मान्यता है कि 1966 का ताशकंद हमारे वीर जवानों के बलिदानों के साथ विश्वासघात था। भावी ताशकन्द न केवल बहादुर स्वतंत्रता सेनानियों व बंगलादेश के लिए अपने जीवन की आहुति देने वाले असंख्य व्यक्तियों के साथ विश्वासघात होगा, बल्कि भारत के राष्ट्रीय हितों की भी बलि चढ़ाना होगा। जनसंघ सभी राष्ट्रवादी तथा लोकतंत्र प्रेमी शक्तियों का, जो बंगलादेश को अविलंब मान्यता देने की मांग करती रही हैं, आवाहन करता है कि बंगलादेश के प्रश्न पर भारत सरकार के आत्मसमर्पण को रोकने के लिए संगठित प्रयत्न करें।

[9 अक्तूबर 1971; मद्रास, के०का०स०]

72.02. सेना की वापसी

विधानसभा चुनावों के बाद एक और ताशकंद से होशियार—भारतीय जनसंघ की केन्द्रीय कार्य समिति इस बात पर खेद प्रकट करती है कि भारतीय सेना द्वारा विजित क्षेत्रों से सेना की वापसी के प्रश्न पर भारत सरकार ने देश को अभी तक आश्वस्त नहीं किया है। देश को आशंका है कि विधानसभाओं के चुनाव समाप्त होते ही भारत सरकार पाकिस्तान के साथ ताशकंद जैसी कोई संधि करेगी। इस संदर्भ में प्रधानमंत्री का नई दिल्ली के पत्रकार सम्मेलन में यह वक्तव्य कि 'मैं इस संबंध में किसी को कोई सफाई देने की आवश्यकता नहीं समझती' और प्रतिरक्षा मंत्री का "पराजित शत्रु के साथ उदार बनने" की बातें करना, इस आशंका को और दृढ़ करते हैं।

हाल के युद्ध में हमारी सेना द्वारा विजित क्षेत्रों को चार श्रेणियों में बांटा जा सकता है और सरकार की नीति हर क्षेत्र की विशिष्ट स्थिति के अनुरूप होनी चाहिए :

करगिल की चौकियां—जनसंघ का यह मत है कि करगिल की चौकियों पर कोई समझौता न केवल जवानों के साथ, बल्कि भारतीय संविधान के साथ भी विश्वासघात होगा, जिसके अनुसार ये क्षेत्र भारतीय क्षेत्र हैं और इसलिए वे वार्ता के विषय नहीं बन सकते।

छदबेट की वापसी—इसी प्रकार, कच्छ का छदबेट क्षेत्र पाकिस्तान ने पहले आक्रमण द्वारा ले लिया और बाद में अंतर्राष्ट्रीय दांवपेंच से उसे हड़प लिया। यह क्षेत्र वास्तव में भारत का है। कच्छ समझौते के अंतर्गत मूल बात यह थी कि पाकिस्तान फिर कभी आक्रामक कार्यवाही नहीं करेगा। पाकिस्तान ने पुनः आक्रमण कर इस समझौते की जड़ ही काट डाली है। अब चूंकि पाकिस्तान, स्वयं अपनी ही दुस्साहसपूर्ण कार्यवाहियों के कारण, गैरकानूनी ढंग से इस अधिकृत क्षेत्र को खो चुका है, उसे पाकिस्तान को पुनः वापस लौटाने का कोई प्रश्न नहीं उठता।

थारपारकर के निवासी—जहां तक सिंध के थारपारकर जिले के क्षेत्र का सवाल है, उसके संबंध में मानवीय दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। इन क्षेत्रों के अधिकांश निवासी हिंदू हैं। पिछले 25 वर्षों में उन्होंने पाकिस्तान के 'मजहबी शासनतंत्र' में मानों नरक में वास करने जैसा अनुभव किया है। इस क्षेत्र में भारतीय सेना का आगमन उनके लिए चिरप्रतीक्षित शांति और मुक्ति का दाता प्रमाणित हुआ है। उन्हें पुनः भेड़ियों के मुंह में फेंक देना, उन आदर्शों की हत्या करना होगा, जिन्होंने हमें बंगलादेश के मुक्ति संग्राम का समर्थन करने को प्रेरित किया। साथ ही, हमें ऐसा कोई काम नहीं करना चाहिए, जिससे इस बार हमें पश्चिमी सीमा क्षेत्र में विस्थापितों की समस्या का सामना करना पड़े। जनसंघ यह मांग करता है कि इन क्षेत्रों के संबंध में यहाँ के नागरिकों की इच्छा जाने बिना, कोई निर्णय नहीं लिया जाना चाहिए।

आक्रांत काश्मीर के लिए वार्ता—शकरगढ़, चिकिन, नैक एवं स्यालकोट क्षेत्रों के संबंध में पाकिस्तान के साथ बातचीत की जा सकती है। परंतु यह बातचीत तभी होनी चाहिए, जब पाकिस्तान काश्मीर के उस क्षेत्र से हटने का इरादा जाहिर करता है, जिस पर वह बलात् कब्जा जमाये बैठा है और साथ ही भारत और बंगलादेश पर युद्ध थोपने के लिए वह क्षतिपूर्ति करने को तैयार हो।

जनसंघ मांग करता है कि भारत सरकार इन प्रश्नों पर अपनी नीति शीघ्र स्पष्ट करे। यदि भारत सरकार ऐसा नहीं करती तो लोगों की आशंकाओं की वह पुष्टि करती है, ऐसा माना जायेगा।

[27 जनवरी 1972; भोपाल, के०का०स०]

72.04. समग्र-समझौते का आग्रह

जब से पाकिस्तान के साथ 14-दिवसीय युद्ध समाप्त हुआ है, भारत पर दबाव डाला जा रहा है कि वह इस बात की चिंता किये बिना कि दोनों देशों के बीच एक सर्वस्पर्शी शांति-समझौता होता है या नहीं और अन्य सभी प्रमुख विवाद हल किये जाते हैं या नहीं, पाकिस्तानी युद्धबंदियों को लौटा दे और पाकिस्तानी भूमि को खाली कर दे। श्री भुट्टो द्वारा कभी मीठी तथा कभी कड़वी बातें करने का प्रमुख उद्देश्य यही है कि उनके सैनिक जल्दी से जल्दी वापस आ जायें।

अब यह पूर्णतया स्पष्ट हो चुका है कि चीन ने पाकिस्तान का साथ देने का निर्णय कर लिया है। निक्सन प्रशासन पाकिस्तान का खुला साथ दे रहा है। सोवियत रूस भी भारत और पाकिस्तान के बीच मध्यवर्ती स्थिति की ओर खिसकता दिखाई देता है। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा पारित यह प्रस्ताव कि भारतीय सेनायें 1948 की युद्ध-विराम रेखा पर वापस लौट जायें, मास्को के विचारों का प्रतिबिंब माना जा सकता है। भारत सरकार के प्रवक्ताओं ने अभी से यह कहना आरंभ कर दिया है कि काश्मीर में युद्धविराम रेखा को भारत और पाकिस्तान के बीच स्थायी अंतर्राष्ट्रीय सीमा मान लिया जाए। इसका अर्थ भारत की 30,000 वर्गमील भूमि को हमेशा के लिए त्याग देना होगा। यह भारत की सर्वप्रभुता तथा अखंडता के साथ विश्वासघात होगा।

श्री भुट्टो श्रीमती इन्दिरा गांधी के साथ सीधी वार्ता की बातें कर रहे हैं। यद्यपि इस आशय के वक्तव्य दिये जा रहे हैं, किंतु इस दिशा में न तो कोई कूटनीतिक कदम उठाये गये हैं और न प्रस्तावित शिखर-सम्मेलन को सफल बनाने के लिए कोई प्रारंभिक कार्यवाही की गई है। स्पष्टतः श्री भुट्टो की ये घोषणाएं अंतर्राष्ट्रीय जगत को प्रभावित करने के लिए हैं।

खण्ड समझौता नहीं—भारतीय जनसंघ पाकिस्तान के साथ द्विपक्षीय वार्ता का विरोधी नहीं है, फिर चाहे वह किसी भी पर स्तर हो, बशर्ते कि भारत सरकार पाकिस्तान को स्पष्ट कर दे कि यह वार्ता पाक युद्धबंदियों के प्रश्न (जो बंगलादेश की सरकार से भी जुड़ा हुआ है) तक ही सीमित नहीं रहेगी बल्कि

इसके अंतर्गत भारत और पाकिस्तान से संबंधित सभी समस्याओं का समाधान होना चाहिए, यथा—पाक आक्रांत काश्मीर, युद्ध के लिए क्षतिपूर्ति, सिंध के थारपारकर जिले के हिंदू निवासी, पाकिस्तान द्वारा अब तक न चुकाये गये ऋण जिनमें विस्थापितों द्वारा पाकिस्तान में छोड़ी गई संपत्ति भी शामिल है, आदि। ऐसा कोई खंड समझौता जो उन्हीं मुद्दों को स्पर्श करता है जो पाकिस्तान के लिए लाभदायक हैं, गलत, अदूरदर्शी और राष्ट्रीय हितों के विपरीत होगा। जब तक सभी विवादों का हल निकालकर स्थायी शांति की खातिर समग्र-समझौते की व्यवस्था नहीं हो जाती तब तक भारतीय सेनाओं को वापस बुलाने का प्रश्न ही पैदा नहीं होना चाहिए।

इस सप्ताह के आरंभ में मास्को ने भारत और पाकिस्तान के बीच मध्यस्थता करने का प्रस्ताव रखा है। स्पष्टतः दूसरे ताशकंद की तैयारी हो रही है। केन्द्रीय कार्य समिति भारत सरकार को अपने इस वचन का स्मरण दिलाना चाहेगी कि इस बार दूसरा ताशकंद नहीं होगा। भारतीय जनसंघ की मांग है कि सरकार अपने वचन का पालन करे और सोवियत रूस को साफ-साफ कह दे कि वह 1966 के ताशकंद की पुनरावृत्ति के लिए तैयार नहीं है। भारतीय जनता निश्चित रूप से यह नहीं होने देगी।

चाऊ-निक्सन विज्ञप्ति में काश्मीर— केन्द्रीय कार्य समिति को आशंका है कि यदि श्री भुट्टो अपनी शर्तों पर युद्धबंदियों की रिहाई नहीं करा पाते तो पाकिस्तान तथा उसके साथी देश, इस भूखंड की शांति को पुनः भंग करने के दुस्साहस से भी बाज नहीं आयेंगे। उस स्थिति में जम्मू-काश्मीर पाकिस्तानी शरारत का मुख्य लक्ष्य होगा। चाऊ-निक्सन विज्ञप्ति में तथा श्री भुट्टो द्वारा कुछ भारतीय पत्रकारों को दी गई भेंटवार्ता में काश्मीर का उल्लेख इस दिशा में गंभीर खतरे के संकेत हैं। भारत को सभी परिस्थितियों का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए।

केन्द्रीय कार्य समिति सभी जनसंघ शाखाओं को निर्देश देती है कि वह उपर्युक्त प्रश्न पर प्रभावी रूप से जनमत का संगठन करें।

[20 मार्च 1972; दिल्ली, के०का०स०]

72.07. जय, बंगलादेश !

स्वाधीन बंगलादेश, उसकी वीर जनता तथा महान नेता शेख मुजीबुर्रहमान को भारतीय जनसंघ अपना अभिनंदन और हार्दिक बधाई देता है।

एक धर्मनिरपेक्ष राज्य के नाते कार्य करने के बंगलादेश के संकल्प का जनसंघ स्वागत करता है। इससे वहां के सभी नागरिकों को विधिवत तथा व्यवहार में समता की गारंटी मिलेगी। इस महान प्रयास में हम उनकी पूर्ण सफलता की कामना करते हैं।

दोनों देशों द्वारा मिलकर लड़े गये हाल के संघर्ष में जीवन समर्पित करने

वाले बलिदानी वीरों के पावन रक्त से गौरवान्वित पारस्परिक सहयोग व मित्रता के बंधन दृढ़ से दृढ़तर हों।

जनसंघ आशा करता है कि भारत-बंगलादेश के सहयोग से आरंभ होकर दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों में परस्पर घनिष्ठ आर्थिक सहकारिता का मार्ग प्रशस्त होगा जो कि अंततः एक साझा-बाजार का रूप ग्रहण करेगा और इस क्षेत्र को सभी महाशक्तियों के प्रभाव व हस्तक्षेप से मुक्त रखने का साधन बनेगा।

[तार; 7 मई 1972; भागलपुर, भा०प्र०स०]

72.11. भारत-पाक शिखर वार्ता

यह गहरी चिंता तथा असंतोष का विषय है कि भारत सरकार, भारत और पाकिस्तान के बीच मरी में दूत-स्तर पर हुई बातचीत तथा आगामी शिखर वार्ता के संबंध में जनता तथा संसद को विश्वास में लेने में विफल रही है। मरी में क्या हुआ और शिखर सम्मेलन में क्या होने वाला है इस बारे में देश पूर्णतया अंधकार में है। इस संबंध में जो भी समाचार प्राप्त हैं वे विदेशी सूत्रों पर आधारित हैं। उनसे जो तस्वीर सामने आई है वह इस संदेह को पुष्ट करती है कि भारत सरकार पाकिस्तान को तुष्ट करने की अपनी पुरानी नीति पर फिर धीरे-धीरे वापस आ रही है।

जनसंघ अनुभव करता है कि वार्ता का सुझाव पाकिस्तान की ओर से आना चाहिए था। यह तो पाकिस्तान है जो युद्ध में पराजित हुआ है; जिसके 93000 सैनिक युद्धबंदियों के रूप में भारत के पास हैं और जो उन्हें रिहा कराने की समस्या से परेशान है; जिसे अपनी भूमि का हजारों वर्गमील का इलाका भारतीय जवानों तथा बंगलादेश के स्वतंत्रता सेनानियों के शौर्य तथा बलिदान के कारण खोना पड़ा है और जो उसे जल्दी से जल्दी पुनः पाने के लिए बेताब है। इन सब से बढ़कर, यह पाकिस्तान ही है जो भारत पर आक्रमण करने का अपराधी है। ये कठोर तथ्य हैं, जिन्हें न तो भारत, न पाकिस्तान और न ही विश्व अपनी दृष्टि से ओझल कर सकते हैं।

पाकिस्तान के साथ स्थायी शांति—अब जबकि भारत ने वार्ता करने का सुझाव रख दिया है और सर्वोच्च स्तर पर उसका आयोजन स्वीकार कर लिया है, भारत को अपने मन में इस बात पर स्पष्ट होना चाहिए कि वह क्या प्राप्त करना चाहता है। हमारा प्रमुख उद्देश्य पाकिस्तान के साथ स्थायी शांति कायम करना होना चाहिए। 1965 के युद्ध ने हमें ऐसी ही शांति प्राप्त करने के लिए समझौता करने का अवसर प्रदान किया था। भारत के राजनीतिक नेतृत्व ने उस अवसर को ताशकंद में गंवा दिया। गत दिसम्बर में हमें जो सैनिक विजय मिली उसने पुनः एक अवसर भारत को प्रदान किया है। हमें उसे दोबारा खोना नहीं चाहिए।

समुचित व अन्तिम समग्र-समझौता—सशस्त्र सेनाओं का अभिनन्दन है कि भारत आगामी शिखरवार्ता में शक्ति की स्थिति से बातचीत करेगा। अब

कूटनीतिक सफलता से हमारी सैनिक विजय सुदृढ़ की जानी चाहिए। भारत और पाकिस्तान के बीच में जितने भी प्रश्न हैं उनका समाधान समुचित और अंतिम समग्र-समझौते द्वारा होना चाहिए।

पाकिस्तान से प्राप्त समाचारों से यह स्पष्ट है कि श्री भुट्टो की मुख्य चिंता युद्धबंदियों के बारे में है और वह चाहेंगे कि इस प्रश्न को अन्य प्रश्नों से अलग-थलग कर दें। इसकी इजाजत नहीं दी जानी चाहिए। युद्ध के पश्चात् श्री भुट्टो पाकिस्तानी सेना को एशिया की सर्वश्रेष्ठ लड़ाकू सेना बनाने की चर्चा करते रहे हैं। इसके साथ ही विदेशों से शस्त्रास्त्र प्राप्त करने का पाकिस्तान का क्रम जारी है। श्री भुट्टो उन सैनिक गठबंधनों से भी पाकिस्तान को निकालने के लिए तैयार नहीं है जिनके कारण से पाकिस्तान को भारत पर गत 25 वर्षों में 4 बार आक्रमण करने का सैनिक सामर्थ्य तथा साहस प्राप्त हुआ। यहां तक कि वह 'अयुद्ध प्रस्ताव' भी मानने के लिए प्रस्तुत नहीं है, यद्यपि किसी प्रस्ताव मात्र के मान लेने को स्थायी शांति की गारण्टी नहीं माना जा सकता। इस पृष्ठभूमि में जब तक भारत को यह विश्वास नहीं हो जाता कि पाकिस्तान ने आक्रामक इरादों का परित्याग कर दिया है, पाकिस्तानी युद्धबंदियों को रिहा करना एक भयंकर भूल होगी।

युद्ध-अपराधियों पर मुकदमा—श्री भुट्टो अपने युद्ध-अपराधियों को भी दंडित होने से बचाने के लिए उत्सुक हैं। इस प्रश्न पर उन्होंने यहां तक धमकी दे डाली है कि यदि उनके युद्ध-अपराधियों पर मुकदमा चलाया गया तो बात हमेशा के लिए बिगड़ जायेगी। बंगलादेश के प्रधानमंत्री श्रीमुजीबुर्रहमान ने असंदिग्ध शब्दों मेंकहा है कि बलात्कार, शिशु हत्या तथा आम नरसंहार जैसे जघन्य अपराध करने वालों को यों ही नहीं छोड़ा जा सकता। यह आवश्यक है कि भारत भी इस दृष्टिकोण का पूरी तरह समर्थन करे और श्री भुट्टो के दिमाग में से इस धारणा को निकाले कि भारत इस सवाल पर झुकने के लिए तैयार हो जायेगा। युद्धापराधियों पर मुकदमा चलाने के लिए बंगलादेश के साथ भारतसरकार संयुक्त कदम उठाये।

पाक आक्रान्त काश्मीर—जिस प्रश्न से भारतीय जनता बड़ी गहराई से संबंधित है वह 'काश्मीर के भूभाग पर पाकिस्तानी कब्जा' है। देश की अखंडता तथा संविधान, जिसके प्रति प्रधानमंत्री ने निष्ठा की शपथ ली है, उन पर यह दायित्व डालते हैं कि वह इस वार्ता में से काश्मीर से पाकिस्तान के हटने का परिणाम निकालें। इस बात के बावजूद कि पाकिस्तान को करारी हार खानी पड़ी है, पाकिस्तान अपने अवैध कब्जे को छोड़ने के लिए अभी तैयार नहीं है। हम उसे ऐसा करने के लिए कहां तक विवश कर पाते हैं, यही प्रस्तावित वार्ता में भारत की सफलता या विफलता की सही कसौटी होगी।

इसके अतिरिक्त अन्य भी प्रश्न हैं जिनका समाधान होना चाहिए। विभाजन के पूर्व के 300 करोड़ रु० ऋण का पाकिस्तान देनदार है और वहां छूटी 1000 करोड़ रु० की निष्क्रान्त सम्पत्ति का मूल्य भी उसे अभी चुकाना है। इसके

साथ ही 1965 के युद्ध में पाकिस्तान द्वारा अवैध रीति से हथियाई गई सम्पत्ति तथा साज-सामानों की वापसी का भी सवाल है। युद्ध में भारत को जो क्षति हुई है उसके लिए हमलावर से पूरा मुआवजा लिया जाय और बंगलादेश के 1 करोड़ विस्थापितों की देखभाल पर जो व्यय हुआ है वह पाकिस्तान से वसूल किया जाय।

जनसंघ मांग करता है कि भारत सरकार जनता को यह आश्वासन दे कि जब तक उपर्युक्त सभी सवाल संतोषजनक रीति से हल नहीं होते वह न तो युद्धबंदियों को रिहा करेगी और न पाकिस्तान के उन क्षेत्रों से अपनी सेना ही हटायेगी जो हमारे अधिकार में हैं।

इस अवसर पर प्रतिनिधि सभा अपनी इस आशंका को व्यक्त करना चाहेगी कि पाक आक्रान्त काश्मीर की मुक्ति के लिए जोर लगाने के बजाय सरकार उस भूभाग को छोड़ने तक'के लिए भी तैयार हो सकती है और काश्मीर में युद्ध-विराम रेखा को दोनों देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय सीमा रेखा स्वीकार कर सकती है। हमारा मत है कि ऐसी कोई भी कार्यवाही निरा समर्पण तथा भारतीय हितों के प्रति विश्वासघात मानी जायेगी। उससे शांति की कामना भी पूरी नहीं होगी। आक्रमणकारी का तुष्टीकरण करने से उसकी आक्रमण की भूख को और बढ़ावा मिलता है। हम भारत सरकार को ऐसा कोई भी कदम उठाने के विरुद्ध चेतावनी देना चाहते हैं कि भारतीय जनता इसके लिए उसे कभी भी क्षमा नहीं करेगी।

[7 मई 1972; भागलपुर, भा०प्र०स०]

72.13. शिमला में शर्मनाक समर्पण

भुट्टो के तीन उद्देश्य—प्रधानमंत्री ने शिमला में देश को जिस तरह से नीचा दिखाया है उससे भारतीय जनसंघ की केन्द्रीय कार्य समिति को धक्का लगा है। हमारी निकृष्टतम आशंकाएं सही निकली हैं। ताशकंद का इतिहास बदतर रूप से दोहराया गया है। जवानों के खून से युद्धक्षेत्र में जो कुछ जीता गया उसका सौदा मेजवार्ता में एक कागज के टुकड़े के बदले में कर लिया गया। दीर्घकाल पूर्व निर्णीत काश्मीर विलय के मामले पर नई अनिश्चितताएं पैदा कर दी गई एवं पाकिस्तान को अब उसमें एक पक्ष मान लिया गया। काश्मीर के 2/5 भाग पर से पाकिस्तान के 'गैरकानूनी कब्जे को हटाना' शस्त्रों की सीमाबंदी, पाकिस्तान से 1000 करोड़ रु० से अधिक के दीर्घकाल से बकाया अतिरिक्त निष्क्रान्त सम्पत्ति के मुआवजे की वसूली और संयुक्त भारत के सार्वजनिक ऋण में पाकिस्तान का हिस्सा, 1965 में जब्त भारतीय संपत्ति, तथा भारत में गत वर्ष धकेले गये शरणार्थियों पर किया गया व्यय—इनकी वसूली, यह ऐसे मामले हैं जो श्रीमती गांधी द्वारा उठाये तक नहीं गये। यह एक शुद्ध एवं स्पष्ट शर्मनाक समर्पण है। श्री भुट्टो शिमला में तीन उद्देश्यों को लेकर आये थे :

(1) खोई हुई भूमि की पुनर्प्राप्ति,

(2) युद्धबंदियों की वापसी, और

(3) काश्मीर के मामले को फिर से खोलना।

उन्होंने प्रथम और तृतीय को प्राप्त कर लिया तथा दूसरे के लिए ऐसा रास्ता बना लिया जिसमें पाकिस्तान द्वारा बंगलादेश को मान्यता प्रदान करते ही युद्धबंदियों को रिहा करना पड़ेगा।

समग्र-समझौता कहां है ?—प्रधानमंत्री स्थायी शांति के लिए समग्र समझौते के वायदे के साथ शिखर के लिए गई थी। वे दोनों प्रश्नों पर हार गई और शब्दों के एक अंबार मात्र के लिए एक स्वर्ण अवसर खो दिया। एक विजेता देश को उसकी प्रधानमंत्री द्वारा इस प्रकार के अपमान का घूट पीने के लिए विवश किया जाना, यह विश्व इतिहास का शायद प्रथम उदाहरण है।

ज्यों ही समझौते पर हस्ताक्षर हुए, आकाशवाणी, टेलीविजन तथा देश के कुछ समाचारपत्रों ने इस 'ऐतिहासिक समझौते' की प्रशंसा के तराने छेड़ दिये। स्थायी शांति, अच्छे पड़ोसी के संबंध तथा सहअस्तित्व की उपदेशपूर्ण प्रशंसाओं को काफी बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया गया। इसे एक गारंटी माना गया कि पाकिस्तान द्वारा शक्ति का प्रयोग अब छोड़ दिया जायेगा।

इस ओर ध्यान किसी का नहीं गया कि चीन ने पाकिस्तान के शस्त्रास्त्रों की पूर्ति, फुर्ती के साथ कर दी है तथा उसे दो अतिरिक्त डिवीजन खड़ा करने के लिए सक्षम किया है। यह भी भुला दिया गया कि पाकिस्तान ने प्रतिरक्षा बजट में 446 करोड़ रु० की व्यवस्था की है जो कि किसी भी समय से अधिक है। यह विस्मृत कर दिया गया कि श्री भुट्टो ने शिमला आने से पूर्व शस्त्रास्त्रों की भीख मांगने, उधार लेने अथवा खरीद करने हेतु बड़ी जल्दबाजी में एक दर्जन मुस्लिम देशों की यात्रा की थी। उन्होंने पराजय का बदला लेने के लिए पाकिस्तानी सेना को 'एशिया की सर्वश्रेष्ठ सेना' बनाने की प्रतिज्ञा ली है। वे 'अयुद्ध-संधि, उसका चाहे जो भी महत्व हो, पर हस्ताक्षर करने के लिए तैयार नहीं। इस तथ्य की ओर दुर्लक्ष्य किया गया कि शिमला समझौते की कुछ धाराएं ताशकंद घोषणा की क्षीण प्रतिध्वनि मात्र हैं। फिर भी श्री भुट्टो ने ताशकंद की भर्त्सना की थी, इस प्रश्न पर वे अयूब सरकार से बाहर निकल गये थे और उन्होंने भारत के विरुद्ध 1000 वर्ष तक युद्ध करने का प्रण किया था। कल के खलनायक को, रातोंरात शांति का राजकुमार बनाकर हमारे सामने प्रस्तुत किया जा रहा है।

संदेहास्पद द्विपक्षवाद—संधि को एक शानदार उपलब्धि का रंग दिया जा रहा है क्योंकि दोनों देशों ने अपने विवादों को शांति से व द्विपक्षीय वार्तालाप द्वारा सुलझाने की प्रतिज्ञा ली है। कार्य समिति देखती है कि दिसम्बर 1948 के 'इंटर डोमिनियन एग्रीमेंट' (जबकि पाकिस्तानी लुटेरे काश्मीर में भारतीय भूमि को रौंद रहे थे) से लेकर बाद में नेहरू लियाकत समझौते तथा 1965 की ताशकंद घोषणा तक—जिनमें से एक-एक का पाकिस्तान ने उल्लंघन कर के ही पालन किया—प्रत्येक में अच्छे इरादों की अभिव्यक्ति की गई है। द्विपक्षीय धारा के

(जिसमें 'आपसी सहमति से विदेशी हस्तक्षेप' का रास्ता खोलकर रखा गया है) अभी से विभिन्न अर्थ दिये जाने लगे हैं। काश्मीर के प्रश्न को संयुक्त राष्ट्र से बाहर रखने के लिए पाकिस्तान को प्रधानमंत्री बाध्य मानती हैं जबकि श्री भुट्टो का कहना है कि इस प्रश्न को फिर से वहां उठाने से उन्हें कोई नहीं रोकता।

कार्य समिति विश्वास करती है कि शिमला समझौते पर हस्ताक्षर करके श्रीमती गांधी ने देश की भारी कुसेवा की है। स्पष्ट है कि उन्होंने महाशक्तियों के दबाव के आगे घुटने टेक दिये। पाकिस्तान के प्रति अमरीकी 'झुकाव' तो सर्वविदित ही है, रूस भी पाकिस्तान से अपनी खोई हुई सद्भावना की कुछ पुनर्प्राप्ति के लिए उत्सुक है। श्री धार की मास्को के लिए दौड़, राष्ट्रपति पोदगोर्नी का योजनापूर्वक कलकत्ता रुकना एवं श्री स्वर्णसिंह से बातचीत करना तथा इसी के बाद पाक विदेश सचिव श्री अजीज अहमद को मास्को का आश्वासन—यह सब रूस द्वारा भारत को 'उदारता' बरतने की 'सलाह' के स्पष्ट संकेत हैं। शिमला में वार्तालाप के पूर्वार्ध में गतिरोध की ओर बढ़ने के सभी संकेत थे। ऐन मौके पर सभी बाधाएं एकाएक जादुई ढंग से दूर हो गई। यह इस बात को प्रकट करता है कि इसके पीछे और भी कुछ है जो दिखाई नहीं देता। समझौता संपन्न कराने में सहायता के लिए श्री भुट्टो द्वारा रूस व अमरीका को अविलंब एवं हार्दिक धन्यवाद देना केवल कूटनीतिक शिष्टाचार मात्र नहीं है।

पत्रकार सम्मेलन में प्रधानमंत्री के उत्तर श्री भुट्टो के इस दावे को पुष्ट करते हैं कि वे काश्मीर विवाद को पुनः खोलने में सफल रहे हैं। श्रीमती गांधी ने युद्ध-विराम रेखा के आधार पर समझौते पर विचार करने की अपनी इच्छा भी प्रकट की है। राष्ट्र यह जानने का अधिकारी है कि जम्मू-काश्मीर के उस भाग को जो कानूनी एवं संवैधानिक रूप में हमारा है, वे किस संवैधानिक अथवा अन्य अधिकार से आक्रमणकारी को भेंट देने के लिए तैयार हो गई हैं।

मुक्ति-संग्राम के लिए भुट्टो का आवाहन—पाकिस्तानी राष्ट्रीय असेम्बली में राष्ट्रपति श्री भुट्टो के भाषण ने उन सभी को झकझोर दिया है, जो कांग्रेस-कम्युनिस्ट-लीगी प्रचारतंत्रों द्वारा देश में खड़े किये जा रहे आत्म-प्रवंचना के व्यामोह से असाध्य रूप में ग्रस्त नहीं हैं। श्री भुट्टो ने काश्मीरियों को 'भारतीय जुए' से छूटने के लिए 'मुक्ति संग्राम' का आरंभ करने के लिए उकसाकर और 'चाहे जो परिणाम हो', उनके लिए अपना 'रक्त बहाने' का आश्वासन देकर शिमला समझौते को भंग कर दिया है।

अतः कार्य समिति भारत के राष्ट्रपति से जोरदार आग्रह करती है कि वे समझौते की पुष्टि न करें। इस बारे में जनता की इच्छाएं जानने के लिए जनमत-संग्रह करायें। कार्यसमिति भारतीयों का भी आवाहन करती है कि वे सरकार के सामने असंदिग्ध रूप में स्पष्ट कर दें कि इस असम्मानजनक समझौते को वे अस्वीकार करते हैं।

[17 जुलाई 1972; दिल्ली, के०का०स०]

72.19. शिमला समझौते के बाद

शिमला में शर्मनाक समर्पण— पाकिस्तान से हुए विगत सशस्त्र संघर्ष की परिणति एक ऐसा अवसर था जब हम पिछले 25 वर्ष के तनावपूर्ण इतिहास को एक नई दिशा दे सकते थे। बंगलादेश में पाकिस्तानी सेना के समर्पण के बाद हमें आशा हुई थी कि भारत सरकार शेष बचे हुए पाकिस्तान के साथ भारत के संबंधों को एक नया आधार देने के लिए सभी विवादग्रस्त विषयों को सुलझाने वाला समग्र-समझौता करेगी। परन्तु शिमला वार्ता में पिछले अनुभव की पुनरावृत्ति मात्र हुई और निर्वासितों की संपत्ति, विभाजन के समय के लोकऋण के पाकिस्तानी अंश, पाक-आक्रमण द्वारा की गई प्रत्यक्ष हानि तथा बंगला-निर्वासितों पर हुए खर्च के लिए क्षतिपूर्ति आदि अनेक ज्वलंत प्रश्नों की उपेक्षा करके कुछ शाब्दिक आश्वासनों के बदले में हजारों जवानों के बलिदान का सौदा स्वीकार कर लिया गया। सबसे बढ़कर 1947 के समय से पाकिस्तान द्वारा बलात् अधिकृत काश्मीर के भूभाग को छुड़ाये बगैर थारपारकर आदि क्षेत्रों से सेना पीछे हटाना स्वीकार कर लिया गया। इस वार्ता के समय स्पष्ट संकेत भी मिले कि भारत सरकार नई नियंत्रण-रेखा को अंतर्राष्ट्रीय सीमांत मानने को भी तैयार हो सकती थी, यदि पाकिस्तान कुछ फेर-बदल के साथ इसे मंजूर कर लेता। तभी जनसंघ ने चेतावनी दी थी कि शिमला में हुए समर्पण से पाकिस्तान की हठधर्मी बढ़ेगी और वह फिर से एक नये आक्रमण के प्रलोभन में फंसेगा।

कार्य समिति को खेद है कि उसकी आशंकाएं सही साबित हुई हैं। श्री भुट्टो द्वारा पाकिस्तान की राष्ट्रीय विधानसभा में शिमला समझौते के समर्थन में दिये गये भाषण से ही पर्याप्त स्पष्ट था कि उनकी भावना शुद्ध नहीं है। परंतु प्रधानमंत्री और विदेश मंत्री द्वारा बहुत परिश्रमपूर्वक उनके शब्दों को अपने अर्थ देने का यत्न किया गया और जहां यह संभव नहीं हुआ उनकी घरेलू मजबूरियों का हवाला दे दिया गया। परन्तु दिल्ली में अधिकारियों की वार्ता के समय, पाकिस्तान के इरादों पर चढ़ाया गया शाब्दिक मुलम्मा उतरने लग गया था। यही कारण है कि सेनापतियों की बातचीत के अनेक दौर हो चुकने के बाद भी पाकिस्तान डेढ़ वर्गमील भूमि के प्रश्न पर हठधर्मी से अड़ा हुआ है। दूसरी ओर भारत सरकार ने अपनी घोषित नीति को ताक पर रखते हुए, थाटुचक का क्षेत्र वापिस लिए बगैर बाकी इलाकों से सेना की वापसी का प्रस्ताव करके, हर अवसर पर झुक जाने की अपनी पुरानी मनोवृत्ति का ही परिचय दिया। कार्य समिति का मत है कि छम्ब का पाक-अधिकृत क्षेत्र भी अंतर्राष्ट्रीय सीमांत के साथ लगता है। इस कारण शिमला समझौते की शर्तों, जिसमें कि जम्मू-काश्मीर में वास्तविक अधिकार रेखा की व्यवस्था है, के अनुसार उसे हमारे छोड़ने का कोई कारण नहीं है।

पाकिस्तानी दुराग्रह— पाकिस्तान ने भी अभी तक यथार्थ की भूमि पर पांव रखना स्वीकार नहीं किया है। यह इससे स्पष्ट है कि शिमला वार्ता के समय

साफ आश्वासन देने के बावजूद श्री भुट्टो बंगलादेश को मान्यता न देने पर अड़े हुए हैं। हमारे प्रवक्ताओं द्वारा दी गई उनकी सफाई के विपरीत उन्होंने माना है कि बंगलादेश के राष्ट्रसंघ में प्रवेश के प्रश्न पर चीन का वीटो उनके अनुरोध पर ही प्रयुक्त किया गया। एशिया 72 जैसे प्रसंगों में भी पाकिस्तान सम्मिलित होने को तैयार नहीं। संसार भर के बाजारों में उसकी शस्त्रों की खरीद जोरों से जारी है। फ्रांस से उसने मिराज विमान खरीदे हैं। चीन की सहायता से उसने 4 नये डिवीजन तैयार कर लिये हैं। हाल के समाचारों के अनुसार पाकिस्तान अधिकृत काश्मीर में 'वजीरिस्तान स्काउट' नाम से 2 लाख सशस्त्र स्वयंसेवकों का एक संगठन काश्मीर हथियाने के घोषित उद्देश्य से खड़ा किया गया है। श्री भुट्टो हथियारों के लिए अमरीका जाकर राष्ट्रपति निक्सन से मिलने की योजना बना रहे हैं। पाकिस्तान रेडियो भारत के विरुद्ध विष-वमन के अपने पुराने ढर्रे पर फिर से आ गया है। पाकिस्तान ने द्विपक्षीयता के सिद्धांत के प्रति मौखिक श्रद्धांजलि तो दे दी परन्तु संयुक्त राष्ट्रसंघ के प्रेक्षकों को वापिस जाने देने के लिए तैयार नहीं हुआ।

शिमला समझौते की अन्त्येष्टि— इन सब तथ्यों का एक ही अर्थ है कि पाकिस्तान का वर्तमान नेतृत्व भारत के साथ तनाव कम करने के बजाय उसे कायम रखने और बढ़ाने में ही अपना हित मानता है। यह चीन और अमरीका के चंगुल में बने रहने का परिणाम है या उनसे सहायता बटोरते रहने के हेतु से है— यह प्रश्न अलग है। परन्तु इतना निर्विवाद है कि शिमला समझौते का कल्पित सद्भाव पाकिस्तान में, यदि वह पैदा हुआ था तो, कभी का समाप्त हो चुका है। पाकिस्तान के अमरीका स्थित राजदूत ने दोबारा लड़ाई छिड़ने की भाषा बोली है। श्री भुट्टो के हाल के वक्तव्य से यह असंदिग्ध रूप से स्पष्ट हो गया है कि वे भारत पर अविश्वास ही नहीं करते, उससे संकट देखते हैं और इनके मुकाबले के लिए चीन का सहारा लेने वाले हैं। हमारी प्रधानमंत्री ने भी घोषणा की है कि पाकिस्तान की नीयत साफ नहीं है और उसका रवैया सख्त हो गया है।

भारतीय जनसंघ की कार्य समिति की राय में परिस्थिति की मांग है कि शिमला समझौता को समाप्त किया जाय और पाकिस्तान से स्पष्ट कह दिया जाय कि सेनाओं की वापसी और इलाके लौटाने के लिए पग, अब सारे विवादास्पद विषयों के समाधान के साथ जोड़कर उठाये जा सकेंगे।

सिन्धी विस्थापित—कार्य समिति की यह भी मांग है कि युद्ध के दौरान सिन्ध से आये विस्थापितों के भविष्य की अनिश्चितता को समाप्त करके उन्हें नागरिकता के अधिकार दिये जायें और उनके पुनर्वास की व्यवस्था की जाय।

'जय जवान पखवाड़ा'— कार्य समिति का निर्णय है कि गत युद्ध की प्रथम वर्षगांठ के अवसर पर आगामी 3 से 17 दिसम्बर तक 'जय जवान पखवाड़ा' मनाया जाय जिसमें विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों के द्वारा गत युद्ध के शहीदों को श्रद्धांजलि दी जाय तथा जनता को जागरूक किया जाय कि वह देश की सुरक्षा हेतु

प्रत्येक संकट का सामना करने के लिए सन्नद्ध रहे और सरकार को किसी तरह की दुर्बलता का शिकार न बनने दे।

[20 नवम्बर 1972; जयपुर, के०का०स०]

72.20. विदेशी गुप्तचर

विदेशी लॉबियों का सफाया—जनसंघ ने अपने 1971 के चुनाव घोषणा-पत्र में ध्यान आकर्षित किया था कि देश में शक्तिशाली विदेशी लॉबियां काम कर रही हैं तथा इनका सफाया किया जाना चाहिए। किसी भी अन्य दल ने इस बारे में उस समय जागरूकता नहीं दिखाई तथा इस विषय में जनसंघ की चिन्ता को विदेशों के प्रति द्वेषमूलक मानकर उसकी ओर दुर्लक्ष्य कर दिया गया।

अब एकाएक प्रधानमंत्री से लेकर मुख्यमंत्रियों तथा कांग्रेसाध्यक्ष तक सभी ने सी०आई०ए० (अमरीका की गुप्तचर संस्था) के बारे में कुछ टीका की है। चाहे दिल्ली-शाहदरा के दंगे हों या आसाम की भाषायी गड़बड़ या पंजाब में अचानक छात्र अशांति—सत्ताधारी लोग उनमें सी०आई०ए० का हाथ होने की धुआंधार बातें कर रहे हैं।

जनसंघ इस चर्चा को राजनीतिक मन्तव्य से प्रेरित मानता है। मन्तव्य दो प्रकार का है—प्रथम तो यह कि अपने 'गरीबी हटाओ' के वायदे की पूर्ति में बुरी तरह असफल होकर सत्ताधीश दल किसी बहाने की तलाश में है तथा यह अनुभव करता है कि अपनी असफलताओं को छिपाने के लिए सी०आई०ए० एक अच्छा बहाना साबित हो सकता है। दूसरा यह कि भारत सरकार सोचती है कि मास्को पर उसकी बढ़ती हुई निर्भरता की आलोचना का सामना अमरीका के विरुद्ध प्रमाद जागृत रखकर ही किया जा सकता है क्योंकि गत भारत-पाक युद्ध के समय उसकी भारत विरोधी भूमिका के कारण उसे समस्त राष्ट्र की भर्त्सना का उचित ही शिकार होना पड़ा था।

एक सरकार, जो कि विदेशी मिशनरियों को सामरिक महत्त्व के क्षेत्र में भी निर्बाध रूप में कार्य करने देती है, जो शांति सेना के सैकड़ों स्वयंसेवकों को, जहां वे चाहें वहां, अपनी कार्यवाहियां चलाने की छूट देती है तथा जिसका पी०एल०-480 की देश में एकत्रित विशाल धनराशि पर कोई नियंत्रण नहीं है, उसको सी०आई०ए० के विरुद्ध चिल्लाते हुए काफी समय हो गया किन्तु आज तक किसी भी विदेशी को सी०आई०ए० की गतिविधियों के आरोप में निष्कासित नहीं किया गया और न ही किसी स्थानीय साथी अथवा सहयोगी षड्यन्त्रकारी को पकड़ा गया है।

विदेशी गुप्तचरी के लिए जांच आयोग—जहां तक सी०आई०ए० की चर्चा के राजनीतिक उद्देश्य का प्रश्न है, वह पूरा नहीं हुआ है। स्पष्ट रूप में जान लिया गया है कि यह सारा धुआंधार प्रचार सत्ताधीश दल की असफलताओं को छिपाने का बहाना है। जनसंघ को डर है कि इस दावपेंच में सी०आई०ए० तथा

इसी प्रकार की रूसी गुप्तचर संस्था के०जी०बी० सहित अन्य विदेशी गुप्तचर संस्थाओं के लिए देश में अपनी गतिविधियां तेज करना तथा कानून से बचे रहना और अधिक आसान हो जायेगा। कार्य समिति मांग करती है कि देश में विदेशी गुप्तचर संस्थाओं के क्रियाकलापों की जांच के लिए एक जांच आयोग गठित किया जाय जो विदेशी गुप्तचर गतिविधियों पर पर्दा डालने वाली शांति सेना, शांति परिषद, विदेशी मिशनरी, सांस्कृतिक केन्द्रों आदि संस्थाओं के बारे में सुझाव भी दे। जनसंघ सरकार से मांग करता है कि देश में विदेशी धन के प्रवाह को रोकने के लिए जल्दी ही कानून बनाये।

[20 नवम्बर 1972; जयपुर, के०का०स०]

"परिशिष्ट"

परिशिष्ट-क

संधियां

1. भारत-भूटान मैत्री संधि

[दार्जिलिंग, 8 अगस्त 1949]

एक ओर भारत सरकार ने और दूसरी ओर महामहिम द्रुक ग्यालपो की सरकार ने समान रूप से इस आंकांक्षा से प्रेरित होकर कि भारत में ब्रिटिश सरकार की सत्ता समाप्त होने के बाद राज्य के मामलों को स्थायी एवं सुदृढ़ आधार प्रदान करने और उन्हें मैत्रीपूर्ण ढंग से नियमित करने एवं अपनी जनता के कल्याण के लिए आवश्यक मैत्री तथा पड़ोसीपन के संबंधों को घोषित करने एवं उन्हें बढ़ाने के लिए निम्नलिखित संधि करने का संकल्प किया और इस उद्देश्य से अपने प्रतिनिधि मनोनीत किये, अर्थात् भारत सरकार का प्रतिनिधित्व करने वाले श्री हरीश्वर दयाल को पूरे अधिकार हैं कि भारत सरकार की ओर से इस संधि पर सहमति दें और देब जिम्पोन सोनाम, तोबग्यी दोरजी, यांग-लोप सोनाम, छो-जिम थोंदुप, रिन-जिम तानदिन और हा द्रुगं जिग्मी पालदेन दोरजी को, जो भूटान के महाराजा, महामहिम द्रुक ग्यालपो की सरकार का प्रतिनिधित्व करते हैं, संपूर्ण अधिकार हैं कि भूटान की सरकार की ओर से इस पर स्वीकृति दें।

अनुच्छेद 1

भारत सरकार और भूटान सरकार के बीच चिरंतन शांति और मैत्री रहेगी।

अनुच्छेद 2

भारत सरकार संकल्प करती है कि भूटान के आंतरिक प्रशासन में कोई हस्तक्षेप नहीं करेगी। प्रत्युत्तर में भूटान सरकार स्वीकार करती है कि अपने परराष्ट्रीय संबंधों में भारत सरकार की सलाह से निर्देशित होगी।

अनुच्छेद 3

सिंचुला संधि के अनुच्छेद 4 के अंतर्गत भूटान को जिस मुआवजे की स्वीकृति दी गई और जिसे 8 जनवरी 1910 को बढ़ाया गया और 1942 में 1 लाख रु० प्रति वर्ष के अस्थायी अनुदान की जो स्वीकृति दी गई, उसके स्थान पर भारत सरकार भूटान सरकार को पांच लाख रुपये प्रति वर्ष देने पर सहमति प्रकट करती है और यह भी स्वीकार करती है कि इस वार्षिक राशि की अदायगी प्रतिवर्ष 10 जनवरी को की जाया करेगी। पहली अदायगी 10 जनवरी 1950 को की

जायेगी। यह संधि जब तक व्यवहार में रहेगी और इसकी व्यवस्था का परिपालन होता रहेगा तब तक इस राशि की अदायगी की जाती रहेगी।

अनुच्छेद 4

दोनों देशों की सरकारों की मैत्री और उसकी निर्भरता की पुष्टि करने के लिए भारत सरकार, इस संधि पर हस्ताक्षर होने के एक वर्ष के भीतर भूटान सरकार को देवनगिरि नाम से विख्यात क्षेत्र का बत्तीस वर्गमील का भूखंड भूटान सरकार को लौटा देगी। भूटान सरकार को इस प्रकार लौटाये जाने वाले भूखंड को रेखांकित करने के लिए भारत सरकार एक सक्षम अधिकारी या अधिकारियों की नियुक्ति करेगी।

अनुच्छेद 5

अब तक की ही भांति भारत सरकार और भूटान सरकार के क्षेत्रों के बीच उन्मुक्त व्यापार और वाणिज्य होता रहेगा, और भारत सरकार सहमति प्रकट करती है कि भूटान सरकार को अपने उत्पादनों के लिए समूचे भारत के प्रदेश में जल और थल मार्गों से परिवहन की सब सुविधाएं प्रदान करेगी, जिसमें समय-समय पर पारस्परिक समझौतों द्वारा उल्लिखित वन मार्गों के प्रयोग का अधिकार भी सम्मिलित होगा।

अनुच्छेद 6

भारत सरकार स्वीकार करती है कि भूटान सरकार भारत सरकार की सहायता और स्वीकृति से इस बात के लिए स्वतंत्र होगी कि भारत में होकर या भारत से भूटान को ऐसे सब तरह के शस्त्रास्त्र, गोला-बारूद, मशीनें, युद्ध-सामग्री या डार का आयात करे जिसे भूटान की शक्ति और कल्याण के लिए आवश्यक या वांछनीय समझा जाता है और यह व्यवस्था तब तक जारी रहेगी जब तक भारत सरकार यह समझेगी कि भूटान सरकार के इरादे मैत्रीपूर्ण हैं और इस प्रकार के आयात से भारत को कोई खतरा नहीं है। भूटान सरकार, दूसरी ओर, स्वीकार करती है कि ऐसे शस्त्रास्त्रों, गोला-बारूद आदि का भूटान की सीमाओं के पार न तो भूटान सरकार स्वयं निर्यात करेगी और न किसी व्यक्ति को ऐसा करने देगी।

अनुच्छेद 7

भारत सरकार और भूटान सरकार स्वीकार करती है कि भारतीय प्रदेश में रहने वाले भूटानी नागरिकों को भारतीय नागरिकों के समान न्याय प्राप्त होगा, और भूटान में रहने वाले भारतीय नागरिकों को भूटान सरकार के प्रजाजनों के समान न्याय उपलब्ध होगा।

अनुच्छेद 8

(1) भारत सरकार, भूटान सरकार की लिखित मांग पर, भारतीय प्रत्यावर्तन कानून 1903 (जिसकी एक प्रति भूटान सरकार को उपलब्ध कराई जायेगी) की व्यवस्थाओं के अनुसार उन सब भूटानी नागरिकों को भूटान

सरकार को सौंपने के लिए कार्यवाही आरंभ करेगी जिस पर इस कानून की प्रथम अनुसूची में वर्णित किसी अपराध का आरोप होगा और जो भागकर भारत में शरण लेंगे।

(2) भारत सरकार या उसकी ओर से अधिकार प्राप्त किसी अधिकारी की मांग पर, किसी भारतीय नागरिक का किसी विदेशी सत्ता के नागरिक को भूटान सरकार भारत को सौंप देगी जिसका प्रत्यावर्तन भारतीय सरकार और उस विदेशी सत्ता के बीच हुए समझौते या व्यवस्था के अन्तर्गत आवश्यक होगा या जिस पर 1903 के कानून 15 के प्रथम अनुच्छेद में उल्लिखित किसी अपराध का आरोप होगा और जो भूटान सरकार के अधीन क्षेत्र में शरण लेगा और उन भूटानी नागरिकों को भी सौंप देगी जो भारतीय प्रदेश में ऐसा कोई अपराध करके भूटान भाग जायेंगे और जिनके विरुद्ध आरोप के ऐसे प्रमाण पेश किये जायेंगे जिससे उस जिले के स्थानीय न्यायिक अधिकारियों को संतोष होगा जहां कि अपराध किया गया।

अनुच्छेद 9

इस संधि की क्रियान्विति या इसके भाष्य पर कोई मतभेद अथवा विवाद होने पर उसे सर्वप्रथम बातचीत द्वारा हल किया जायेगा। बातचीत शुरू होने के पहले तीन मास के भीतर यदि कोई समझौता न हो सका तो विवाद को तीन पंचों को पंचनिर्णय के लिए सौंपा जायेगा। ये पंच भारत या भूटान के नागरिक होंगे और इन्हें निम्नलिखित ढंग से मनोनीत किया जायेगा—

(1) एक व्यक्ति को भारत सरकार मनोनीत करेगी,

(2) एक व्यक्ति भूटान सरकार मनोनीत करेगी,

(3) भारत के संघ न्यायालय या भारत के एक उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश को भूटान सरकार मनोनीत करेगी जो कि पंचों का अध्यक्ष होगा।

इस न्यायाधिकरण का निर्णय अंतिम होगा और इसे दोनों पक्ष बिना विलंब किये क्रियान्वित करेंगे।

अनुच्छेद 10

दोनों पक्ष यदि आपसी सहमति से इसे संशोधित या समाप्त नहीं कर देते तो यह संधि अंतकाल तक लागू रहेगी।

यह संधि एक हजार नौ सौ उनचासवे वर्ष के अगस्त मास के आठवें दिन तदनुसार भूटानी वृषभ वर्ष के छठे मांस के पंद्रहवे दिन दार्जिलिंग में दो प्रतियों में

तैयार और हस्ताक्षारित हुई।

हरीश्वरदयाल
सिक्किम में राजनीतिक अधिकारी

देब जिम्पोन सोनाम
तोबग्यी दोरजी
यांग-लोय सोनाम
छो-जिम थोंदुप
रिन-जिम तांदिन
हा दुंग जिगमो
पालदेन दोरजी

2. भारत-नेपाल, शांति और मैत्री संधि

[काठमांडू, 31 जुलाई 1950]

भारत सरकार और नेपाल सरकार उन प्रचीन संबंधों को स्वीकार करती हैं जो दोनों देशों के बीच शताब्दियों से सुखद रूप से अस्तित्व में हैं एवं;

इन संबंधों को और दृढ़ बनाने तथा विकसित करने की इच्छा से तथा दोनों देशों के बीच शांति को चिरंतन बनाने के उद्देश्य से;

संकल्प करती है कि एक दूसरे के साथ शांति और मैत्री संधि की जाय और, इस उद्देश्य से, निम्नलिखित व्यक्तियों को अपने सर्वाधिकार प्राप्त प्रतिनिधि के रूप में नियुक्त करती हैं, जिनके नाम हैं—

भारत सरकार

महामहिम श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह, नेपाल में भारत के राजदूत।

नेपाल सरकार

महाराजा मोहन शमशेरजंग बहादुर राणा, नेपाल के प्रधानमंत्री और सर्वोच्च सेनाध्यक्ष

उन्होंने, एक दूसरे के प्रत्यय-पत्रों की जांच करके तथा उन्हें सही एवं प्रामाणिक पाने के बाद निम्नलिखित सहमति प्रकट की :

अनुच्छेद 1

भारत सरकार और नेपाल सरकार के बीच चिरस्थायी शांति और मैत्री रहेगी। दोनों सरकारें एक दूसरे कीपूर्ण सार्वभौमिकता, भौगोलिक अखण्डता और स्वतंत्रता को परस्पर स्वीकार करती, सहमति प्रकट करती और उसका सम्मान करती हैं।

अनुच्छेद 2

दोनों सरकारें संकल्प करती हैं कि किसी पड़ौसी राज्य के साथ कोई ऐसा गंभीर विवाद या भ्रम पैदा होने पर जिससे दोनों सरकारों के बीच विद्यमान मैत्री

संबंधों में किसी प्रकार के व्यवधान की संभावना हो, एक दूसरे को सूचित करेंगे।

अनुच्छेद 3

प्रथम अनुच्छेद में उल्लिखित संबंधों को स्थापित करने और उन्हें बनाये रखने के लिए दोनों सरकारें एक दूसरे के साथ कूटनीति संबंध स्थापित करना स्वीकार करती हैं जो, एक दूसरे के यहां प्रतिनिधि तथा ऐसे कर्मचारी रखकर जो कर्तव्य निर्वाह के लिए आवश्यक होंगे, जारी रखे जायेंगे।

प्रतिनिधि और उनके कर्मचारी जिनके बारे में सहमति होगी उन राजनयिक सुविधाओं और रियायतों के अधिकारी होंगे जो पारस्परिकता के आधार पर अंतर्राष्ट्रीय अधिनियम के अधीन परंपरानुसार प्रदान की जाती हैं :

यह किसी भी स्थिति में उनसे कम नहीं होंगे जो दोनों में से किसी सरकार के साथ राजनयिक संबंध वाले किसी अन्य राज्य के समकक्ष व्यक्ति को प्राप्त होंगे।

अनुच्छेद 4

दोनों सरकारें महावाणिज्य दूत, वाणिज्य दूत, उपवाणिज्य दूत तथा अन्य वाणिज्य प्रतिनिधि नियुक्त करने पर सहमति प्रकट करती हैं जो एक दूसरे के प्रदेश में उन नगरों, बंदरगाहों तथा स्थानों पर रहेंगे जहां के बारे में दोनों में सहमति होगी।

महावाणिज्य दूत, वाणिज्यदूत, उपवाणिज्यदूत तथा अन्य वाणिज्य प्रतिनिधियों को उनकी नियुक्ति से संबद्ध प्रत्यय-पत्र, अन्य अधिकारपत्र आदि प्रदान किये जायेंगे। ये अधिकार-पत्र या प्रत्यय-पत्र जारी करने वाला देश, यदि आवश्यक समझेगा तो, वापस ले सकेगा और जहां संभव होगा इन पत्रों को वापस लेने के कारणों की सूचना दी जायेगी।

ऊपर उल्लिखित व्यक्तियों को पारस्परिकता के आधार पर वे सब अधिकार, विशेष सुविधाएं, और रियायतें प्राप्त होंगी जो किसी अन्य राज्य के समकक्ष व्यक्ति को प्राप्त होंगी।

अनुच्छेद 5

नेपाल सरकार भारत से या उसके क्षेत्र में होकर शस्त्रास्त्र, गोला-बारूद या युद्ध-सामाग्री और उपकरण, जो नेपाल की सुरक्षा के लिए आवश्यक होंगे, आयात करने को स्वतंत्र होगी। उस व्यवस्था को क्रियान्वित करने के लिए आवश्यक पद्धति, दोनों सरकारें आपसी बातचीत औरविचार विनिमय से निर्धारित करेंगी।

अनुच्छेद 6

नेपाल और भारत के बीच विद्यमान मैत्री और पड़ौस की भावना को देखते हुए प्रत्येक सरकार दूसरे के नागरिकों के साथ अपने क्षेत्र में, इन क्षेत्रों के औद्योगिक और आर्थिक विकास में भाग लेने के लिए, अपने नागरिकों के समान

ही व्यवहार करेगी और ऐसे विकास से सम्बद्ध अनुबंध और सुविधाएं प्रदान करेंगी।

अनुच्छेद 7

भारत और नेपाल की सरकारें, पारस्परिकता के आधार पर अपने-अपने प्रदेश में दूसरे के नागरिकों को आवास, संपत्ति का स्वामित्व, वाणिज्य और व्यापार में साझेदारी, आवागमन तथा इसी प्रकार की अन्य सुविधाएं प्रदान करने के लिए सहमत हैं।

अनुच्छेद 8

यहां उल्लिखित विषयों का जहां तक संबंध है, यह संधि पिछली उन सब संधियों, समझौतों और व्यवस्थाओं को समाप्त करती है जो भारत की ओर से ब्रिटिश सरकार और नेपाल सरकार के बीच की गईं।

अनुच्छेद 9

दोनों सरकारों द्वारा हस्ताक्षरित होने की तिथि से इस संधि को लागू माना जायेगा।

अनुच्छेद 10

यह संधि तब तक लागू रहेगी जब तक कोई पक्ष एक वर्ष की पूर्व सूचना देकर इसे समाप्त नहीं कर देता।

3. भारत-सिक्किम शांति संधि

[गंगतोक, 5 दिसम्बर 1950]

भारत के राष्ट्रपति और सिक्किम के परमश्रेष्ठ महाराजा ने, भारत और सिक्किम के बीच विद्यमान उत्तम संबंधों को और पुष्ट करने की आकांक्षा से एक दूसरे के साथ नवीन संधि करने का संकल्प किया, और भारत के राष्ट्रपति ने, इस उद्देश्य से सिक्किम में राजनीतिक अधिकारी श्री हरीश्वर दयाल को अपना सर्वाधिकार प्राप्त प्रतिनिधि नियुक्त किया, और जिनके प्रत्यय-पत्रों की जांच परमश्रेष्ठ महाराजा ने की तथा उन्हें सही और प्रमाणिक पाने के बाद, दोनों ने निम्नलिखित पर सहमति प्रकट की :

अनुच्छेद 1

ब्रिटिश सरकार और सिक्किम के बीच हुई सभी पिछली संधियां जो भारत और सिक्किम के बीच इस समय लागू हैं, विधिवत रद्द की जाती हैं।

अनुच्छेद 2

सिक्किम भारत द्वारा संरक्षित रहेगा, और इस संधि की व्यवस्थाओं के अंतर्गत, आंतरिक मामलों में स्वायत्तता का उपयोग करेगा।

अनुच्छेद 3

(1) भारत सरकार सिक्किम की भौगोलिक अखंडता और प्रतिरक्षा का

दायित्व संभालेगी। उसे ऐसे पग उठाने का अधिकार होगा जिन्हें वह सिक्किम की प्रतिरक्षा या भारत की सुरक्षा के लिए आवश्यक समझेगी; ये चाहे प्रारंभिक तैयारी के रूप में हों या अन्य और चाहे सिक्किम के भीतर किये जायें या उसके बाहर। विशेषतः, भारत सरकार को सिक्किम के भीतर कहीं भी सेनाएं रखने का अधिकार होगा।

(2) उपभाग (1) में जिन पगों का उल्लेख है, वे जहां तक संभव होगा भारत सरकार द्वारा सिक्किम सरकार से परामर्श करके उठाये जायेंगे।

(3) भारत सरकार की पूर्व सहमति के बिना सिक्किम सरकार किसी भी उद्देश्य से शस्त्रास्त्र, गोला-बारूद, सैनिक सामान अथवा किसी भी प्रकार की युद्ध-सामग्री का आयात नहीं करेगी।

अनुच्छेद 4

(1) सिक्किम के परराष्ट्रीय संबंधों का, भले ही वे राजनीतिक, आर्थिक या वित्तीय हों, संचालन और नियमन पूर्णतः और एकमात्र भारत सरकार करेगी एवं सिक्किम सरकार किसी विदेशी सत्ता के साथ कोई संपर्क नहीं करेगी।

(2) सिक्किम के जो नागरिक विदेशों में यात्रा करेंगे उन्हें पारपत्र की दृष्टि से भारत के संरक्षित जन माना जायेगा और विदेशों में नियुक्त भारतीय प्रतिनिधि उन्हें भारतीय नागरिकों के समान ही संरक्षण और सुविधाएं प्रदान करेंगे।

अनुच्छेद 5

सिक्किम सरकार स्वीकार करती है कि सिक्किम में लाये गये या सिक्किम से होकर जाने वाले किसी माल पर कोई आयात कर, आवागमन कर या कोई अन्य शुल्क नहीं लगायेगी, और भारत सरकार स्वीकार करती है कि भारत लाये गये किसी सिक्किमी माल पर कोई आयात या अन्य शुल्क नहीं लगायेगी।

अनुच्छेद 6

(1) सिक्किम में रेलवे, हवाई अड्डों, हवाई पट्टियों, वैमानिक सुविधाओं, डाक, तार, टेलीफोन और बेतार प्रसारण केन्द्रों के निर्माण, रख-रखाव और उनके नियमन का एकमात्र अधिकार भारत को होगा और सिक्किम सरकार उनके निर्माण, रख-रखाव और संरक्षण में भारत सरकार को सब तरह की सहायता देगी।

(2) सिक्किम सरकार अपनी ओर से रेलवे, हवाई अड्डों और हवाई पट्टियों तथा वैमानिक सुविधाओं का उस सीमा तक निर्माण, रख-रखाव और नियमन करेगी जिस हद तक भारत सरकार इस पर सहमति देगी।

(3) भारत सरकार को सिक्किम में सैनिक महत्व की दृष्टि से और भारत तथा अन्य पड़ोसी देशों के साथ संचार-व्यवस्था सुधारने के उद्देश्य से सड़कें बनाने और उनके रख-रखाव का अधिकार होगा और सिक्किम सरकार ऐसी

सड़कों के निर्माण, रख-रखाव और उनकी सुरक्षा के लिए भारत सरकार को सब तरह का सहयोग देगी।

अनुच्छेद 7

(1) सिक्किम के नागरिकों को भारत में प्रवेश करने और भारत के भीतर स्वतंत्र आवागमन का अधिकार होगा और भारत के नागरिकों को सिक्किम में प्रविष्ट होने एवं सिक्किम के भीतर स्वतंत्र रूप से घूमने-फिरने का अधिकार होगा।

(2) सिक्किम सरकार भारत सरकार से परामर्श करके जो नियम लागू करेगी, उनके अन्तर्गत, भारतीय नागरिकों को —

(क) सिक्किम में वाणिज्य एवं व्यापार करने, और

(ख) सिक्किम में कोई व्यापार आरंभ करने पर वहां इस व्यापार को चलाने तथा आवास के लिए कोई चल या अचल संपत्ति प्राप्त करने, रखने और उसे बेचने का अधिकार होगा।

(3) सिक्किम के नागरिकों को भी इसी प्रकार के निम्नलिखित अधिकार होंगे :

(क) भारत में वाणिज्य और व्यापार करना तथा रोजगार में लगना, और

(ख) भारत के नागरिकों की तरह चल और अचल संपत्ति प्राप्त करना, रखना और उसको बेचना।

अनुच्छेद 8

(1) सिक्किम में भारत के नागरिकों पर सिक्किम के कानून और भारत में सिक्किम के नागरिकों पर भारत के कानून लागू होंगे।

(2) सिक्किम में भारत के किसी नागरिक या भारत सरकार की सेवा में नियुक्त किसी व्यक्ति अथवा किसी विदेशी के विरुद्ध फौजदारी न्यायालय में अभियोग चलाये जाने पर, सिक्किम सरकार सिक्किम में भारत सरकार के प्रतिनिधि (इसके बाद अब उसका भारतीय प्रतिनिधि कहकर उल्लेख किया जायेगा) को ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध अभियोग-पत्र के साथ आवश्यक ब्यौरा देगी।

भारतीय प्रतिनिधि द्वारा मांग किये जाने पर, भारत सरकार की सेवा में नियुक्त किसी व्यक्ति या किसी विदेशी नागरिक को सिक्किम के भीतर या सिक्किम से बाहर भारत सरकार द्वारा इस कार्य के लिए नियुक्त न्यायालय में अभियोग चलाने के लिए सौंप दिया जायेगा।

अनुच्छेद 9

(1) सिक्किम सरकार स्वीकार करती है कि सिक्किम से बाहर के किसी भगोड़े अपराधी को जो सिक्किम में शरण लेगा भारतीय प्रतिनिधि द्वारा मांग करने पर उसे वह गिरफ्तार करेगी और सौंप देगी। इस मांग को पूरा करने में कोई विलंब होने पर भारतीय पुलिस उस व्यक्ति का पीछा कर सकेगी जिसको

सिक्किम के किसी क्षेत्र में आ जाने पर सौंप देने की मांग की जायेगी और भारतीय प्रतिनिधि के हस्ताक्षर से जारी किया गया वारंट दिखाने पर सिक्किम के अधिकारी उद्देश्य की पूर्ति में सब प्रकार की सहायता और संरक्षण प्रदान करेंगे।

(2) इसी प्रकार, भारत सरकार भी स्वीकार करती है कि सिक्किम सरकार द्वारा मांग करने पर, सिक्किम के किसी भगोड़े अपराधी को, जो भारत के किसी क्षेत्र में जाकर शरण लेगा, समर्पण और प्रत्यावर्तन संबंधी कार्यवाही आरंभ करेगी।

(3) इस अनुच्छेद में 'भगोड़े अपराधी' का अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है जिस पर भारतीय प्रत्यावर्तन कानून, 1903 की प्रथम अनुसूची में वर्णित कोई प्रत्यावर्तनीय अपराध करने का आरोप हो, अथवा कोई ऐसा अपराध करने का आरोप हो जिसे भारत सरकार और सिक्किम सरकार प्रत्यावर्तनीय अपराध मानने पर सहमत होंगी।

अनुच्छेद 10

भारत सरकार, भारत और सिक्किम के बीच विद्यमान वर्तमान मैत्रीपूर्ण संबंधों को ध्यान में रखते हुए और अब इस संधि से उन्हें और पुष्ट करने तथा सिक्किम के सुशासन और विकास में सहायक होने की इच्छा से, सिक्किम सरकार को प्रतिवर्ष तब तक 3 लाख रुपये वार्षिक देते रहना स्वीकार करती है जब तक सिक्किम सरकार इस संधि की व्यवस्थाओं का विधिवत पालन करती रहेगी।

इस अनुच्छेद के अंतर्गत राशि की प्रथम अदायगी 1950 का वर्ष समाप्त होने से पूर्व की जायेगी और बाद में भुगतान प्रत्येक वर्ष के अगस्त मास में किया जाता रहेगा।

अनुच्छेद 11

भारत सरकार को अधिकार होगा कि अपना एक प्रतिनिधि नियुक्त करे जो सिक्किम में रहे, और सिक्किम सरकार उसे और उसके कर्मचारियों को सिक्किम में आवास तथा कार्यालय भवन के लिए, जो उनके दायित्व के निर्वाह के लिए सामान्यतः आवश्यक होगा, सब युक्तियुक्त सुविधाएं प्रदान करेगी।

अनुच्छेद 12

इस संधि की व्यवस्थाओं के भाष्य पर यदि कोई विवाद उठता है और जिसे आपसी विचार विनिमय से हल नहीं किया जा सकता तो विवाद को भारत के मुख्य न्यायाधीश को सौंपा जायेगा और इस संबंध में उनका निर्णय अंतिम होगा।

अनुच्छेद 13

यह संधि, बिना संपुष्टि के उस दिन से लागू समझी जायेगी जिस दिन इस पर दोनों पक्ष हस्ताक्षर करेंगे।

4. भारत-बर्मा मैत्री संधि

[रंगून, 7 जुलाई 1951]

भारत के राष्ट्रपति और बर्मा संघ के राष्ट्रपति ने उन अगणित संबंधों को जिनसे दोनों देश शताब्दियों से बंधे हैं, सुदृढ़ और विकसित करने की इच्छा से तथा शांति और मैत्री बनाये रखने की आवश्यकता की पारस्परिक आकांक्षा से, जो दोनों राज्यों के बीच सदैव विद्यमान रही हैं, अपनी जनता के समान हितों में और अपने-अपने राष्ट्रों के लक्ष्यों के संवर्धन की कामना से यह संधि करने का संकल्प किया है और इसके लिए अपनी ओर से निम्नलिखित को सर्वाधिकार प्राप्त प्रतिनिधि नियुक्त किया है :

भारत के राष्ट्रपति :

महामहिम डा० एम० ए० रऊफ, विशिष्ट और सर्वाधिकार प्राप्त राजदूत

बर्मा संघ के राष्ट्रपति :

आदरणीय साओ कुन किओ, विदेश विभाग के मंत्री

जिन्होंने, एक दूसरे के प्रत्यय-पत्रों की जांच करके और उन्हें सही एवं विश्वसनीय मानकर, सहमति प्रकट की और निम्नलिखित अनुच्छेदों को हस्ताक्षरित किया।

अनुच्छेद 1

दोनों राज्य एक दूसरे को मान्य करते हैं और उनकी स्वतंत्रता एवं अधिकारों का आदर करते हैं।

अनुच्छेद 2

दोनों राज्यों के बीच चिरंतन शांति और अपरिवर्तनीय मैत्री रहेगी और दोनों राज्य सदैव अपने दोनों देशों की जनता के बीच विद्यमान मैत्री संबंधों को और विकसित एवं पुष्ट करने के लिए प्रयत्नशील रहेंगे।

अनुच्छेद 3

दोनों राज्य एक दूसरे के देश में अपने प्रतिनिधि रखकर एक दूसरे के साथ कूटनीतिक और वाणिज्य संबंध जारी रखने पर सहमत हैं और स्वीकार करते हैं कि यह प्रतिनिधि और उनके मान्य कर्मचारी समानता के आधार पर नियुक्त किये जायेंगे तथा उन्हें वे सब सुविधाएं और रियायतें प्राप्त होंगी जो अंतर्राष्ट्रीय सिद्धांतों के अनुसार सामान्यतः स्वीकार और प्रदान की जाती हैं।

अनुच्छेद 4

दोनों राज्य इससे सहमत हैं कि उन दोनों के प्रतिनिधि समय-समय पर या जब कभी कोई ऐसा अवसर हो, कि दोनों के आपसी हितों पर विचार करना या आपसी सहयोग के मामलों पर विचार-विमर्श करना हो, मिलेंगे।

अनुच्छेद 5

दोनों राज्य सहमत हैं कि पारस्परिक समानता के आधार पर व्यापार, सीमा-शुल्क, सांस्कृतिक संबंध, संचार व्यवस्था, अपराधियों के प्रत्यावर्तन, एक देश के जो नागरिक दूसरे देश में रहते हैं उनके आव्रजन या प्रव्रजन अथवा दूसरे देश की नागरिकता प्राप्त दोनों देशों के व्यक्तियों तथा दोनों राष्ट्रों के समान हितों के सब मामलों पर समझौता करने के लिए बातचीत आरंभ करेंगे।

अनुच्छेद 6

इस संधि या इसके एक या अधिक अनुच्छेदों के भाष्य अथवा क्रियान्विति पर कोई मतभेद या विवाद होने पर उसे सामान्य राजनयिक सूत्रों के माध्यम से वार्ता द्वारा हल किया जायेगा और एक उपयुक्त अवधि में इस विधि से समझौता न होने पर मामले को दोनों पक्षों के बीच एक सामान्य अथवा विशेष व्यवस्था द्वारा पंचनिर्णय के लिए इस विधि से सौंपा जायेगा जिस पर दोनों समान रूप से सहमत होंगे।

अनुच्छेद 7

इस संधि की संपुष्टि की जायेगी और इसे उस तिथि से लागू समझा जायेगा जिस तिथि को संधि के संपुष्ट दस्तावेजों का आदान-प्रदान किया जायेगा। यह कार्य यथासंभव शीघ्रता से रंगून में संपन्न होगा।

अनुच्छेद 8

लागू होने की तिथि से पांच वर्ष तक यह संधि लागू रहेगी और इस अवधि के बाद भी इसे लागू समझा जायेगा :

यदि उक्त पांच वर्ष की अवधि समाप्त होने के बाद कोई एक पक्ष दूसरे पक्ष को पूर्व सूचना देकर कम से कम छह मास पूर्व अपने इस इरादे से अवगत न करा दे कि वह इस संधि को समाप्त करना चाहता है और तब इस पूर्वसूचना की अवधि के समाप्त होने के बाद संधि को समाप्त समझा जायेगा।

सर्वाधिकार-प्राप्त प्रतिनिधियों ने इस संधि के हिंदी, बर्मी और अंग्रेजी पाठ पर अपने हस्ताक्षर किये। (तीनों पाठों में कोई भेद होने पर अंग्रेजी पाठ को प्रामाणिक माना जायेगा) और यहां अपनी सील मुहर लगायी।

5. आव्रजन संबंधी प्रथम भारत-श्रीलंका समझौता

[नई दिल्ली, 13 फरवरी 1954]

श्रीलंका में भारतीयों के अवैध आव्रजन और भारतीय मूल के व्यक्तियों की नागरिकता के अधिकारों के बारे में नई दिल्ली में एक हजार नौ सौ चौवन वर्ष के जनवरी मास के अठारहवें दिन कुछ प्रस्तावों पर आधारित एक समझौते पर भारत सरकार और श्रीलंका की सरकार द्वारा इस कार्य के लिए नियुक्त पूर्णाधिकारियों और प्रतिनिधियों द्वारा हस्ताक्षर किये गये, जिसका पाठ

निम्नलिखित है :

"श्रीलंका और भारत के प्रधानमंत्रियों ने, अपने कुछ सहयोगियों सहित, नई दिल्ली में 16, 17 और 18 जनवरी 1954 को एक सम्मेलन में भाग लिया और श्रीलंका में भारतमूलक लोगों की समस्याओं पर पूरी तरह विचार किया। इन विचार-विमर्शों के परिणामस्वरूप, उन्होंने कुछ प्रस्ताव तैयार किये, जो अब उनकी संबद्ध सरकारों के सामने प्रस्तुत किये जायेंगे।

यह प्रस्ताव हैं :

अवैध आव्रजन

1. दोनों देशों के बीच अवैध आव्रजन को रोकने के लिए दोनों सरकारें दृढ़ संकल्प हैं और इस दिशा में एक दूसरे के साथ निकट का सहयोग करते हुए वे सभी संभव पग उठायेंगी। पाक-जलडमरू-मध्य के दोनों ओर के उच्च पुलिस अधिकारियों की समय-समय पर बैठकें होंगी और अवैध आव्रजन संबंधी सूचना का आदान-प्रदान किया जायेगा।

2. श्रीलंका की सरकार प्रस्ताव रखती है कि वह उन समस्त वयस्क निवासियों का, जिनके नाम मतदाता सूची में नहीं है एक रजिस्टर बनायेगी और इस रजिस्टर को अद्यतन रखा जायेगा। जब यह रजिस्टर बन जायेगा, तब जिस किसी व्यक्ति का (जिसकी मातृभाषा कोई भारतीय भाषा होगी) इस रजिस्टर में नाम नहीं होगा, उसे भारत का अवैध आव्रजक माना जायेगा तथा उसे वापस भारत भेजा जा सकेगा और इस प्रकार वापस भेजने के काम में भारतीय उच्चायुक्त सब प्रकार की सुविधाएं प्रदान करेंगे।

3. श्रीलंका सरकार आव्रजक और प्रव्रजक संशोधन विधेयक संबंधी आगे की कार्यवाही कर सकेगी, जिसके अधीन यह सिद्ध करने का दायित्व आरोपित व्यक्ति पर होगा कि वह अवैध आव्रजक नहीं है, परंतु इससे पूर्व श्रीलंका सरकार भारतीय उच्चायुक्त को आश्वस्त होने का पूरा अवसर प्रदान करेगी कि अभियोग चलाने के लिए प्रथम दृष्टि में पर्याप्त कारण विद्यमान हैं, पर अंतिम निर्णय श्रीलंका सरकार करेगी।

नागरिकता

4. भारतीय और पाकिस्तानी (नागरिकता) अधिनियम के अधीन नागरिकों का पंजीकरण द्रुतगति से किया जायेगा और हर संभव प्रयत्न किया जायेगा कि जो आवेदन-पत्र अनिर्णीत हैं उन्हें दो वर्ष के भीतर निपटा दिया जाय।

5. इस अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत उन सब व्यक्तियों का श्रीलंका सरकार एक पृथक मतदाता रजिस्टर, विशेषतः इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए बनायेगी कि उनमें से अधिकांश नागरिक जिस क्षेत्र में रहते हैं वे उस क्षेत्र की भाषा नहीं बोलते। यह व्यवस्था केवल 10 वर्ष तक लागू रहेगी। श्रीलंका सरकार की सहमति है कि कुछ निर्वाचन क्षेत्रों में, जहां कि पंजीकृत नागरिक मतदाताओं

की संख्या के 250 से अधिक होने की संभावना नहीं, उन्हें राष्ट्रीय रजिस्टर में प्रविष्ट कर दिया जायेगा।

6. जिन नागरिकों के नाम पृथक मतदाता रजिस्टर में प्रविष्ट किये जायेंगे उन्हें प्रतिनिधि सदन के लिए कुछ सदस्य चुनने का अधिकार होगा। संख्या का निर्धारण भारत के प्रधानमंत्री से परामर्श के बाद किया जायेगा। श्रीलंका सरकार को आशा है कि इस संबंध में वह अपनी कार्यवाही, वर्तमान संसद के (1957 में) विघटन से पूर्व संपन्न कर लेगी।

7. जो व्यक्ति इस प्रकार पंजीकृत नहीं किये जा सकेंगे, जहां तक उनका संबंध है, उन्हें छूट होगी कि भारत के संविधान के 8वें अनुच्छेद की व्यवस्था के अनुसार, यदि वे चाहें तो, भारतीय उच्चायुक्त के कार्यालय में जाकर स्वयं को भारतीय नागरिक के रूप में पंजीकृत करायें। यह नोट किया गया कि श्रीलंका सरकार ऐसे पंजीकरण को बढ़ावा देने के लिए विशेष आकर्षण प्रदान करेगी और और इन आकर्षणों की समय-समय पर घोषणा की जाती रहेगी। भारतमूलक सभी लोगों को, यदि वे ऐसा चाहते हैं तो, भारत के संविधान की व्यवस्थाओं के अनुरूप स्वयं को भारतीय नागरिक के रूप में पंजीकृत कराने के लिए भारत सरकार प्रशासनिक तथा ऐसी ही अन्य सुविधाएं प्रदान करेगी और इस प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध होने का प्रचार भी करेगी।

8. दोनों सरकारों के बीच ऐसे मामलों पर, जो उनके हितों को प्रभावित करते हैं, घनिष्ठ विचार-विमर्श करते रहने की वर्तमान विधि को दोनों प्रधानमंत्री बनाये रखने को इच्छुक हैं।

जॉन कोटलेवाला — श्रीलंका के प्रधानमंत्री

जवाहरलाल नेहरू — भारत के प्रधानमंत्री

नई दिल्ली :
18 जनवरी 1954

6. श्रीलंका में भारतवंशियों की भावी स्थिति के बारे में तीसरा भारत-श्रीलंका समझौता

[नई दिल्ली, 30 अक्तूबर 1964]

समझौते के मुख्य विषय निम्नलिखित हैं :

(1) इस समझौते का घोषित उद्देश्य यह है कि श्रीलंका में रहने वाले सभी भारतवंशी जिन्हें श्रीलंका या भारत का नागरिक नहीं माना गया, श्रीलंका या भारत के नागरिक बन जायें।

(2) इस समय ऐसे लोगों की संख्या 9,75,000 है; इसमें अवैध आव्रजकों या भारतीय पारपत्रधारियों की संख्या सम्मिलित नहीं है।

(3) इनमें से 3,00,000 लोगों को जिनमें इस संख्या में होने वाली नैसर्गिक वृद्धि को भी सम्मिलित किया जायेगा, श्रीलंका सरकार वहां की नागरिकता प्रदान करेगी; भारत सरकार 5,25,000 लोगों को वापस बुलायेगी, जिनमें कि इस संख्या में होने वाली नैसर्गिक वृद्धि भी सम्मिलित होगी। भारत सरकार इन लोगों को अपनी नागरिकता प्रदान करेगी।

(4) शेष 1,50,000 लोगों की भावी स्थिति का विषय दोनों सरकारों के बीच पृथक समझौते का विषय होगा।

(5) इस समझौते के लागू होने के 15 वर्ष के भीतर भारत सरकार उन सब व्यक्तियों का पुनरावर्तन करेगी जिन्हें पुनरावर्तित किया जाना है और यह कार्य जहां तक संभव होगा सम-वार्षिक संख्या में किया जायेगा।

(6) तीसरे उपभाग के अधीन जिन लोगों को श्रीलंका की नागरिकता प्रदान की जानी है और पांचवे उपभाग के अधीन जिन लोगों को प्रत्यावर्तित किया जाना है उससे संबद्ध कार्यवाही 15 वर्ष में फैलाकर पूरी की जायेगी और जहां तक संभव होगा नागरिकता प्रदान करने तथा प्रत्यावर्तन करने की संख्या में सापेक्ष्य अनुपात बनाये रखा जायेगा।

(7) जिन लोगों को भारत में प्रत्यावर्तित किया जाना है उन लोगों को श्रीलंका में उनके प्रवास काल में, श्रीलंका सरकार (धन भेजने की सुविधा छोड़-कर) वही सुविधाएं प्रदान करेगी जो अन्य राज्यों के नागरिकों को वहां प्रदान की जाती हैं। इनमें आवास की सामान्य सुविधा और मुक्त-वीसा की सुविधा भी सम्मिलित होगी। श्रीलंका की सरकार यह स्वीकार करती है कि इस समझौते के लागू होने के दिन इस प्रकार के जो लोग लाभप्रद ढंग से रोजगार में लगे होंगे वे अपने प्रत्यावर्तन के समय (जो खंडों में पूरा किये जाने वाले कार्यक्रम के अधीन होगा) या 55 वर्ष की उम्र तक, जो भी तिथि पहले आयेगी, रोजगार में लगे रहेंगे।

(8) विदेशी मुद्रा विनिमय नियंत्रण नियमों के अधीन, जो इस समय लागू हैं और जिनमें भारत भेजे जाने वाले लोगों के साथ कोई भेदभाव नहीं बरता जायेगा, श्रीलंका सरकार स्वीकार करती है कि इन लोगों को, भारत की ओर अंतिम प्रस्थान के समय, अपनी सब पूंजी जिसमें उनकी भविष्य निधि और आनु-तोषिक राशि (ग्रेच्युटी) भी सम्मिलित होगी, भारत भेजने की अनुमति देगी। श्रीलंका सरकार स्वीकार करती है कि किसी भी परिवार को जो राशि वापस भारत लाने की अनुमति दी जायेगी, वह किसी भी रूप में 4000 रु० से कम नहीं होगी।

(9) यथाशीघ्र दो रजिस्टर बनाये जायेंगे; एक में उन लोगों के नाम होंगे जिन्हें श्रीलंका की नागरिकता प्रदान की जायेगी और दूसरे में उन लोगों के नाम होंगे जिन्हें वापस भारत भेजा जायेगा। परन्तु इन रजिस्टरों का बनाया जाना, श्रीलंका की नागरिकता प्रदान करने अथवा भारत वापस लाने के कार्य आरंभ करने की पूर्वशर्त न होगी।

(10) यह समझौता अभी की तिथि से लागू होगा और दोनों सरकारें इस समझौते को लागू करने के लिए सब आवश्यक कार्य आरंभ कर देंगी तथा, इस उद्देश्य से दोनों सरकारों के अधिकारी जितना शीघ्र संभव होगा, मिलेंगे और एक संयुक्त व्यवस्था आरंभ करने के साथ इस समझौते को लागू करने के लिए उपयुक्त कार्यविधि तैयार करेंगे।

7. भारत और चीन के तिब्बत क्षेत्र के बीच व्यापार और आवागमन के बारे में भारत-चीन समझौता

[पीकिंग, 29 अप्रैल 1954]

भारत गणराज्य की सरकार और चीन गणराज्य की केन्द्रीय जन सरकार ने

चीन के तिब्बत क्षेत्र और भारत के बीच व्यापार एवं सांस्कृतिक संबंध बढ़ाने की इच्छा तथा भारत और चीन की जनता की तीर्थयात्रा एवं यात्राओं को सुविधाजनक बनाने के लिए,

वर्तमान समझौता करने का संकल्प किया जो निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित होगा :

(1) एक दूसरे की क्षेत्रीय अखंडता और प्रभुसत्ता का पारस्परिक सम्मान,
(2) पारस्परिक अनाक्रमण,
(3) एक दूसरे के आंतरिक मामलों में पारस्परिक अहस्तक्षेप,
(4) समानता तथा पारस्परिक लाभ, और
(5) शांतिपूर्ण सहअस्तित्व;

और इस उद्देश्य से अपने-अपने पूर्णाधिकारी नियुक्त किये :

भारत गणराज्य की सरकार :

महामहिम नेद्यम राघवन, चीन जनगणराज्य में भारत के राजदूत विशिष्ट और पूर्णाधिकारी,

चीन जनगणराज्य की केन्द्रीय जन सरकार :

महामहिम चांग हान फू, केन्द्रीय जन सरकार में विदेशी मामलों के उप-मंत्री, जिन्होंने एक दूसरे के प्रत्यय-पत्रों की जांच की और जिनको शुद्ध और सही पाने के बाद निम्नलिखित पर सहमत हुए :

अनुच्छेद 1

महासंविदाकारी पक्ष परस्पर सहमत हैं कि व्यापार अभिकरण स्थापित किये जायें :

(1) भारत सरकार सहमत है कि चीन सरकार नई दिल्ली, कलकत्ता और कालिम्पोंग में व्यापार अभिकरण स्थापित कर सकती है।

(2) चीन सरकार सहमत है कि भारत सरकार यातुंग, ग्यान्त्से और गारतोक में व्यापार अभिकरण स्थापित कर सकती है।

दोनों पक्षों के व्यापार अभिकरणों को समान श्रेणी और समान व्यवहार प्राप्त होगा। दोनों पक्षों के व्यापार प्रतिनिधियों को अपना कार्यभार वहन करते समय गिरफ्तार नहीं किया जा सकेगा और उनकी, उनकी पत्नी और बच्चों की, तथा उन पर आश्रित व्यक्तियों की तलाशी नहीं ली जा सकेगी।

दोनों पक्षों के व्यापार अभिकरणों को संदेशवाहक, डाक के थैले भेजने तथा संकेत लिपि में संचार की सुविधाएं एवं स्वतंत्रता होगी।

अनुच्छेद 2

महासंविदाकारी पक्ष स्वीकार करते हैं कि दोनों देशों के व्यापारी जिनके बारे में ज्ञात है कि परंपरा से और विशेष रूप से चीन के तिब्बत क्षेत्र और भारत के बीच व्यापार में लगे हैं, निम्नलिखित स्थानों पर व्यापार कर सकेंगे :

1. भारत सरकार उल्लेख करना स्वीकार करती है कि (1) यातुंग, (2) ग्यांत्से, और (3) फारी व्यापार के बाजार होंगे; भारत सरकार स्वीकार करती है कि भारत में जिन स्थानों पर परंपरागत व्यवहार से व्यापार हो सकेगा उनमें (1) कलिपोंग, (2) सिलीगुड़ी, और (3) कलकत्ता भी सम्मिलित होंगे।

2. चीन सरकार उल्लेख करना स्वीकार करती है कि (1) गारतोक, (2) पुलानचुंग (तकलाकोट), (3) ग्यालिमा-खारगो, (4) ग्यानिमा-चक्र, (5) रणूरा, (6) डांगब्रा, (7) पुलिंग-सुमदो, (8) नब्रा, (9) शांग्त्से, और (10) ताशीगोंग व्यापार के बाज़ार होंगे; भारत सरकार स्वीकार करती है कि भविष्य में चीन के तिब्बत क्षेत्र के आरी जिले के विकास और भारत के साथ व्यापार की आवश्यकता होने पर जब यह आवश्यक हो जायेगा कि चीन के तिब्बत क्षेत्र के आरी जिले और उसके पड़ोस के भारत के जिले में बाज़ारों का उल्लेख किया जाय, तब भारत सरकार समानता और पारस्परिकता के आधार पर इस पर विचार करने के लिए प्रस्तुत होगी।

अनुच्छेद 3

महासंविदाकारी पक्ष स्वीकार करते हैं कि दोनों देशों में धर्म पर आस्था रखने वाले तीर्थयात्रियों की यात्राएं निम्नलिखित व्यवस्था के अनुरूप होंगी :

(1) भारत में लामाई, हिंदू और बौद्ध धर्मों के अनुयायी चीन के तिब्बत क्षेत्र में परंपरानुसार कांग रिंपोचे (कैलाश) और मावम् त्से (मानसरोवर) की यात्रा कर सकेंगे।

(2) चीन के तिब्बत क्षेत्र से लामा धर्म और बौद्ध धर्म के अनुयायी भारत में परंपरानुसार वाराणसी, सारनाथ, गया और सांची की तीर्थयात्रा कर सकेंगे।

(3) ल्हासा की तीर्थयात्रा पर जाने वाले यात्री परंपरा के अनुसार वहां जा सकेंगे।

अनुच्छेद 4

दोनों देशों के तीर्थयात्री और व्यापारी निम्नलिखित दर्रों और मार्गों से यात्रा कर सकेंगे :

(1) शिपकी ला दर्रा,
(2) माना दर्रा,
(3) नीती दर्रा,
(4) कुंगरी बिंगरी दर्रा,
(5) डर्मा दर्रा, और
(6) लिपू लेख दर्रा।

इक गतसांगपू (सिंधु नदी) घाटी के साथ ताशीगांग जाने वाले परंपरागत मार्ग से होकर आवागमन परंपरानुसार ही चालू रहेगा।

अनुच्छेद 5

सीमापार की यात्रा के संबंध में महासंविदाकारी पक्ष स्वीकार करते हैं कि इस अनुच्छेद के उपभाग 1, 2, 3 और 4 की व्यवस्था से भिन्न राजनयिक अधिकारी और कर्मचारी तथा दोनों देशों के नागरिक अपनी-अपनी सरकारों द्वारा जारी किये गये पारपत्र रखेंगे, जिन पर दूसरा पक्ष वीसा देगा।

(1) दोनों देशों के व्यापारी जो परंपरा से और विशिष्ट रूप से चीन के तिब्बत क्षेत्र तथा भारत के बीच व्यापार करते आ रहे हैं, उनकी पत्नियां और बच्चे, उन पर आश्रित व्यक्ति तथा उनके कर्मचारी अपने-अपने देश की स्थानीय सरकार द्वारा और उसके अधिकारी द्वारा दिये गये प्रमाणपत्र दूसरे पक्ष की सीमा-चौकी पर उसके अधिकारियों को दिखाकर व्यापार के लिए भारत या चीन के तिब्बत क्षेत्र में जा आ सकेंगे।

(2) दोनों देशों के सीमावर्ती जिलों के निवासी, जो छोटा-मोटा व्यापार करने या मित्रों और संबंधियों से मिलने सीमापार जाते आते हैं दूसरे पक्ष के सीमावर्ती जिले में उसी प्रकार जा आ सकेंगे जैसा कि परंपरागत रीति से वे अब तक जाते आते रहे हैं और उनका यह आवागमन ऊपर के अनुच्छेद 4 में उल्लिखित मार्गों एवं दर्रों तक ही सीमित नहीं रहेगा तथा इसके लिए किसी प्रकार के पारपत्र, वीसा या अनुज्ञा की भी आवश्यकता न होगी।

(3) दोनों देशों के मालवाहक और खच्चरों के हंकवाहों के लिए जो आवश्यक परिवहन सेवाओं को बनाये रखने के लिए सीमा पार जाते आते हैं, अपने देश द्वारा जारी किया गया पारपत्र रखना आवश्यक न होगा, किन्तु वे अपने देश की स्थानीय सरकार या उसके किसी प्रमाणित एवं आधिकारिक व्यक्ति द्वारा प्रदत्त प्रमाणपत्र रखेंगे जो एक निर्धारित अवधि के लिए होगा (तीन मास, छह मास या एक वर्ष के लिए) और इसे सीमा पार करते समय दूसरे पक्ष की सीमा चौकी पर दिखाना और इसका पंजीकरण कराना होगा।

(4) दोनों देशों के तीर्थयात्रियों के लिए प्रमाणपत्र लेकर चलना आवश्यक न होगा, परन्तु वे सीमा पर दूसरे पक्ष की चौकी पर अपना नाम दर्ज करायेंगे और तीर्थ यात्रा के लिए अनुज्ञा प्राप्त करेंगे।

(5) इस अनुच्छेद के उपर्युक्त उपभागों की व्यवस्थाओं के बावजूद कोई भी सरकार किसी विशेष व्यक्ति का प्रवेश निषेध कर सकती है।

(6) इस अनुच्छेद के उपर्युक्त उपभागों की व्यवस्थाओं के अनुसार जो लोग दूसरे पक्ष के क्षेत्र में प्रवेश करेंगे वे उस क्षेत्र में उस पक्ष द्वारा निर्धारित विधि और व्यवस्था का पालन करते हुए ही रह सकेंगे।

अनुच्छेद 6

यह समझौता दोनों सरकारों की संतुष्टि के बाद लागू होगा और 8 वर्ष तक लागू रहेगा। समझौते की अवधि समाप्त होने के 6 मास पूर्व यदि एक पक्ष इसको आगे बढ़ाने का अनुरोध करता है और दूसरा पक्ष उसे स्वीकार करता है तो इसकी अवधि बढ़ाने के लिए दोनों पक्ष बातचीत करेंगे।

29 अप्रैल 1954 को हिन्दी, चीनी और अंग्रेजी भाषा में दो-दो प्रतियां तैयार की गईं। सब पाठ समान रूप से मान्य होंगे।

चीन जनगणराज्य की केन्द्रीय जनसरकार के पूर्णाधिकारी —**चांग-हान फू,**

भारत गणराज्य की सरकार के पूर्णाधिकारी —**एन० राघवन।**

भारत के प्रतिनिधि-मण्डल की ओर से चीन के प्रतिनिधि-मण्डल को भेजा गया प्रपत्र

पीकिंग, 29 अप्रैल 1954

महामहिम उपविदेश मंत्री महोदय,

चीन के तिब्बत क्षेत्र और भारत के बीच व्यापार तथा आवागमन के समझौते पर, जो गुरुवार (29 अप्रैल) को उत्तम ढंग से सम्पन्न हुआ, हमारी बातचीत के दौरान भारत गणराज्य की सरकार के प्रतिनिधि और चीन जन-गणराज्य के प्रतिनिधि-मण्डल ने स्वीकार किया कि कुछ मामलों को प्रपत्रों के आदान-प्रदान से नियमित किया जाय। इस मान्यता के आधार पर दोनों सरकारों के बीच जो सहमति हुई वह निम्न प्रकार है :

(1) भारत सरकार इस प्रपत्र के आदान-प्रदान के बाद छह मास के भीतर चीन के तिब्बत क्षेत्र में यातुंग और ग्यान्त्से में तैनात अपने सैनिक रक्षक दस्ते सहर्ष हटा लेगी। चीन सरकार इस वापसी में सहायता देगी और सुविधाएं प्रदान करेगी।

(2) चीन के तिब्बत क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा जो डाक, तार व सार्वजनिक टेलीफोन सेवा चलाई जाती है उसे उपकरणों सहित भारत सरकार उचित मूल्य पर चीन सरकार को सहर्ष सौंप देगी; इस संबंध में सब बातें पक्के

तौर पर चीन स्थित भारतीय दूतावास और चीन के विदेश मंत्रालय के बीच बातचीत द्वारा निश्चित की जायेंगी, जो इस प्रपत्र के आदान-प्रदान के बाद शीघ्र ही आरम्भ की जायेंगी।

(3) चीन के तिब्बत क्षेत्र में बने बारह विश्रामालयों को भी भारत सरकार उचित मूल्य पर सहर्ष चीन सरकार को सौंप देगी। इस संबंध में सब बातें पक्के तौर पर चीन स्थित भारतीय दूतावास और चीन के विदेश विभाग के बीच बातचीत द्वारा निश्चित की जायेंगी, जो इस प्रपत्र के आदान-प्रदान के बाद शीघ्र ही आरम्भ होगी। चीन सरकार मानती है कि उन्हें विश्रामालयों के रूप में ही रखा जायेगा।

(4) चीन सरकार स्वीकार करती है कि चीन के तिब्बत क्षेत्र में यातुंग और ग्यांत्से में भारत सरकार के व्यापार अभिकरण की परिसीमा के भीतर जितने भवन हैं वे सब भारत सरकार के पास ही रहेंगे और भारत सरकार के अभिकरण की परिसीमा के भीतर की समस्त भूमि चीन की और उसकी ओर से भारत सरकार के पास पट्टे पर रहेगी। भारत सरकार स्वीकार करती है कि कालिंपोंग और कलकत्ता में चीन सरकार के जो व्यापार अभिकरण हैं उनकी भूमि भारत की और उसकी ओर से इन अभिकरणों के प्रयोग और उस पर भवन निर्माण के लिए चीन के पास पट्टे पर रहेगी। चीन सरकार गारतोक में भारतीय व्यापार अभिकरण के आवास के लिए सब सुविधाएं प्रदान करेगी। भारत सरकार भी नई दिल्ली में चीनी व्यापार अभिकरण को सब संभव आवासीय सुविधाएं प्रदान करेगी।

(5) यातुंग में भारतीय व्यापार अभिकरण की परिसीमा के भीतर जितनी भूमि है उसके अतिरिक्त अन्य सब भूमि जो भारत सरकार के अधिकार में है या जिसका वह प्रयोग करती है उसे वह सहर्ष चीन सरकार को लौटा देगी।

ऊपर जिस भूमि का उल्लेख है और जिस पर भारत का अधिकार है या जिसका उसके द्वारा प्रयोग किया जा रहा है और जिसे भारत सरकार द्वारा लौटाया जाना है, उस पर यदि भारतीय व्यापारियों के भंडार हैं, या गोदाम हैं, या भवन हैं जिसके कारण कि भूमि के पट्टे पर रहने की आवश्यकता है तो चीन सरकार भारत सरकार या भारतीय व्यापारियों के साथ स्थिति के अनुसार ऐसी संविदा करने को सहमत है जिससे कथित भंडारों, गोदामों, भवनों या उनसे संबद्ध अन्य मामलों वाली भूमि उनके पास पट्टे पर रह सके।

(6) दोनों पक्षों के व्यापार प्रतिनिधि, स्थानीय सरकारों के अधिनियमों और नियमों के अनुसार, दीवानी या फौजदारी अभियोगों में फंसे अपने देश के नागरिकों से संपर्क कर सकेंगे।

(7) दोनों देशों के व्यापार प्रतिनिधि और व्यापारी स्थानीय कर्मचारी रख सकेंगे।

(8) ग्यांत्से और यातुंग स्थित भारतीय व्यापार अभिकरण के अस्पताल भारतीय व्यापार अभिकरण के कर्मचारियों के स्वास्थ्य की देखभाल करते रहेंगे।

(9) प्रत्येक सरकार दूसरे देश के व्यापारियों और तीर्थ यात्रियों के जान-माल की रक्षा करेगी।

(10) चीन सरकार स्वीकार करती है कि जहां तक संभव होगा, पुलानचुंग (तकलाकोट) से कांग रिंपोचे (कैलाश) और मावम् त्से (मानसरोवर) तक के मार्ग पर तीर्थयात्रियों के प्रयोग के लिए विश्रांतिगृह बनायेगी और भारत सरकार तीर्थयात्रियों की सुविधा के लिए भारत में सब सुविधाएं प्रस्तुत करेगी।

(11) दोनों देशों के व्यापारियों और तीर्थयात्रियों को सामान्य और उचित दर पर परिवहन साधन किराये पर लेने की सुविधाएं प्राप्त होंगी।

(12) उभयपक्ष के तीनों व्यापार अभिकरण वर्ष भर काम करेंगे।

(13) प्रत्येक देश के व्यापारी दूसरे पक्ष के अधिकार क्षेत्र में स्थानीय नियमों के अनुसार भवन व गोदाम किराये पर ले सकेंगे।

(14) दोनों देशों के व्यापारी समझौते के अनुच्छेद 2 में निर्दिष्ट स्थानों पर स्थानीय नियमों के अनुसार सामान्य व्यापार कर सकेंगे।

(15) दोनों देशों के व्यापारियों के ऋण और दावों संबंधी विवादों को स्थानीय कानूनों और नियमों के अनुसार निपटाया जायेगा।

भारत गणराज्य की सरकार की ओर से मैं स्वीकार करता हूं कि यह प्रपत्र आपके उत्तर सहित हमारी दोनों सरकारों के बीच का समझौता माना जायेगा और वर्तमान प्रपत्रों के आदान-प्रदान के समय से ही लागू समझा जायेगा।

इस अवसर पर मैं आपके प्रति अपना श्रेष्ठतम आदर और विश्वास प्रकट करता हूं।

—एन० राघवन

भारत गणराज्य के राजदूत विशिष्ट और पूर्णाधिकारी

8. इण्टर-डोमीनियन समझौता—14 दिसम्बर, 1948

नई दिल्ली में 9 दिसम्बर से 14 दिसम्बर 1948 तक हुए अन्तर उपनिवेश (इण्टर-डोमीनियन) सम्मेलन में स्वीकृत समझौते के कुछ अंश :

दोनों उपनिवेशों (डोमीनियनों) की सरकारें स्वीकार करती हैं कि भारी संख्या में अल्पसंख्यकों का पलायन किसी भी डोमीनियन के हित में नहीं और ऐसे पलायन को हतोत्साहित करने के लिए हर संभव कदम उठाने को वे कृत-संकल्प हैं तथा वे ऐसा वातावरण तैयार करेंगी जिससे भारी संख्या में लोगों का इधर से उधर जाना और उधर से इधर आना रुके एवं जहां तक संभव होगा निष्क्रांतों को प्रोत्साहित करेंगी तथा सुविधाएं प्रदान करेंगी कि वे अपने पैतृक घरों को लौट

आयें; इस संबंध में दोनों डोमीनियन निम्नलिखित बातों पर सहमति प्रकट करते हैं।

खंड 1

1. अल्पसंख्यक जातियों की जान और माल की रक्षा करने तथा ऐसी व्यवस्था करने का, जिससे उन्हें न्याय मिले और नागरिक अधिकार सुरक्षित रहें, दायित्व उस डोमीनियन सरकार पर है, जिसमें वे अल्पसंख्यक रहते हैं। अल्संख्यकों की आस्था और निष्ठा उस राज्य के प्रति है जिसके वे नागरिक हैं अतः यह उनका अधिकार और कर्तव्य है कि अपनी शिकायत अपने राज्य की सरकार द्वारा हल करायें। प्रत्येक डोमीनियन के नेता समझौते की व्यवस्थाओं को क्रियान्वित करने के अंग के रूप में प्रत्येक उपयुक्त और सुलभ अवसर पर इस संबंध में सार्वजनिक घोषणाएं करें।

2 (i) भारत और पाकिस्तान में प्रत्येक नागरिक के अधिकार, अवसर, सुविधाएं और दायित्व समान होंगे, और अल्पसंख्यकों के साथ कोई भेदभाव नहीं बरता जायेगा तथा उनके सांस्कृतिक और धार्मिक अधिकार पूर्ण सुरक्षित होंगे।

नोट — सांस्कृतिक अधिकार में 'शैक्षणिक' अधिकार भी शामिल हैं।

(ii) जहां खुली प्रतियोगिता से भिन्न सीधे भर्ती की जाती है, वहां सेवाओं में अल्पसंख्यकों को उचित प्रतिनिधित्व दिया जायेगा।

3. पाकिस्तान और भारत को या उनके किसी भाग को यथा एक ओर पूर्वी बंगाल या असम या कूचबिहार या त्रिपुरा को मिलने के किसी प्रचार को हतोत्साहित किया जायेगा।

नोट—प्रचार शब्द में इस उद्देश्य से किसी संगठन की स्थापना करना भी शामिल है।

4 (i) दोनों सरकारें स्वीकार करती हैं कि वातावरण सुधारने के लिए समाचारपत्रों का हार्दिक सहयोग प्राप्त करना आवश्यक है और इसलिए सहमति प्रकट करती हैं कि समाचारपत्रों के प्रतिनिधियों से परामर्श करके, जहां भी संभव हो, इस बात का पूरा प्रयास किया जाय कि प्रत्येक डोमीनियन के समाचारपत्र यह न करें—

(क) दूसरे डोमीनियन के विरुद्ध प्रचार,

(ख) समाचारों के ऐसे अतिरंजित विवरणों का प्रकाशन जिससे किसी भी डोमीनियन की जनता या जनता के एक वर्ग में भावनाएं भड़कें, भय या घबराहट फैले, और

(ग) ऐसी सामग्री का प्रकाशन जिसका अर्थ एक डोमीनियन द्वारा दूसरे उपनिवेश के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करने की पैरवी करना लगाया जाय या दोनों डोमीनियनों के बीच युद्ध की अनिवार्यता का सुझाव देना।

(ii) एक अन्तर-डोमीनियन सूचना सलाहकार समिति स्थापित की जाय जिसकी दो मास में एक बार बैठक हो, या आवश्यकता पड़ने पर बैठक और

पहले हो; बैठकें अवांतर से दिल्ली और कराची में हों और इन गतिविधियों पर विचार किया जाय :

(क) समाचार-पत्र,
(ख) पुस्तकें, पुस्तिकाएं और प्रकाशन,
(ग) प्रसारण, और
(घ) फिल्में।

इस समिति में दोनों डोमीनियनों के प्रतिनिधियों की संख्या समान होगी और जिनमें प्रत्येक डोमीनियन का एक मंत्री भी सम्मिलित होगा। इसमें किसी डोमीनियन के दो से अधिक सरकारी कर्मचारी और समाचारपत्रों के भी दो से अधिक प्रतिनिधि नहीं होंगे (ख), (ग) और (घ) में वर्णित विषयों पर समिति के सरकारी सदस्य ही विचार करेंगे।

(iii) दोनों सरकारें ऐसी व्यवस्था करेंगी कि प्रचार से संबद्ध उनके अपने-अपने संगठन जिनमें रेडियो और फिल्म द्वारा प्रचार भी शामिल होगा, इनसे बचें और नियंत्रण रखें—

(क) दूसरे डोमीनियन के विरुद्ध प्रचार,

(ख) ऐसे समाचारों का अतिरंजित प्रकाशन जिससे किसी भी डोमीनियन की जनता या जनता के एक वर्ग की भावनाएं भड़कें या भय और घबराहट फैले।

5. दोनों डोमीनियनों के अल्पसंख्यकों की इस शिकायत पर कि दमन या अनुचित व्यवहार की उनकी रिपोर्ट पर कार्यवाही नहीं की गई, शीघ्रता से और न्यायपूर्वक विचार किया जायेगा और शिकायत दूर करने के लिए अविलंबनीय पग उठाये जायेंगे।

6. पूर्वी बंगाल और पश्चिमी बंगाल में 15 फरवरी 1949 से पूर्व एक प्रांतीय अल्पसंख्यक बोर्ड गठित किया जायेगा और इस प्रांतीय बोर्ड के अंतर्गत जिला अल्पसंख्यक बोर्ड गठित किये जायेंगे। इनका उद्देश्य अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा करना, उनके दिलों से भय दूर करना और उनमें विश्वास जगाना होगा। ये बोर्ड ऐसी व्यवस्था करेंगे कि अल्पसंख्यकों की शिकायतें शीघ्रता से अधिकारियों के ध्यान में लाई जायें और उनको तत्काल एवं संतोषजनक ढंग से हल किया जाये।

प्रस्तावित किया जाता है कि प्रांतीय अल्पसंख्यक बोर्ड और जिला अल्पसंख्यक बोर्डों में से प्रत्येक की सदस्य संख्या पांच होगी जिनमें से तीन बड़े अल्पसंख्यक समुदायक के होंगे और इनका मनोनयन प्रांतीय विधानसभा के अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्य करेंगे। शेष दो प्रभावशाली व्यक्ति होंगे और प्रांतीय सरकार द्वारा मनोनीत किये जायेंगे। जिला अल्पसंख्यक बोर्ड का अध्यक्ष जिलाधीश होगा और प्रांतीय अल्पसंख्यक बोर्ड का अध्यक्ष प्रांतीय सरकार द्वारा नामजद कोई मंत्री होगा।

7. दोनों डोमीनियन और उनकी प्रांतीय सरकारें घोषणा करेंगी और अपने अधिकारियों तथा अन्य सरकारी कर्मचारियों को इस बात का भली भांति ज्ञान करा देंगी कि अल्पसंख्यक संप्रदाय के जान और माल की रक्षा करने में कर्तव्य का विधिवत् निर्वाह न करने वाले अथवा अपराधी या अल्पसंख्यक संप्रदाय के लोगों के साथ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से दुर्व्यवहार करने वाले या अपने कर्तव्य का निर्वाह करते समय अल्पसंख्यक संप्रदाय के लोगों के साथ द्वेष बरतने वाले सरकारी अधिकारी को ऐसा अनुकरणीय कठोर दंड दिया जायेगा जिससे कोई अन्य व्यक्ति फिर ऐसा न करे तथा प्रत्येक डोमीनियन में इस प्रकार दिये गये दंड को पूरी तरह प्रचारित किया जायेगा।

8. किसी ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के खिलाफ जो अल्पसंख्यक समुदाय के दिलों में असुरक्षा का डर या उनके दिलों में घबराहट पैदा करेगा या ऐसा करने का प्रयास करेगा, कठोर कार्यवाही की जायेगी।

9. (i) दोनों डोमीनियन इस संबंध में आवश्यक पग उठायेंगी—

(क) अल्पसंख्यक संप्रदाय के सदस्यों को आयात या निर्यात लाइसेंसों और रेलवे की प्राथमिकता देने में भेदभाव की शिकायतें दूर करने, और

(ख) अल्पसंख्यकों का आर्थिक बहिष्कार या उनके सामान्य आर्थिक जीवन का गला घोंटने की सब प्रवृतियों को दबाने के लिए।

(ii) दोनों डोमीनियन सरकारें अपने-अपने यहां की प्रांतीय सरकारों से भी अनुरोध करेंगी कि अपने-अपने क्षेत्र में वे इन सिद्धांतों का पालन करें।

10. (i) पूर्वी बंगाल और पश्चिमी बंगाल ऐसे कानून बनायेंगे जिससे उन क्षेत्रों या जिलों में जहां से बड़ी संख्या में निष्क्रमण हुआ है, निष्क्रांत सम्पत्ति प्रबन्ध बोर्ड स्थापति किये जा सकें। ये बोर्ड लोगों के निश्चित और स्पष्ट अनुरोध पर संपत्ति की देखभाल और प्रबन्ध का दायित्व संभालेंगे। उनके कार्य का स्वरूप प्रबंधकर्ता जैसा होगा। प्रबंध के लिए सौंपी गई संपत्ति के हस्तांतरण का उनको अधिकार न होगा। इन बोर्डों के सदस्य अल्पसंख्यक संप्रदाय के लोग होंगे।

नोट—'निष्क्रांत' की परिभाषा में वह व्यक्ति आयेगा जो 1 जून 1947 के बाद किसी प्रांत को छोड़कर चला गया है परन्तु जो अपने इस संकल्प की घोषणा करता है कि जैसे ही स्थिति सामान्य हो जायेगी और दोनों सरकारों को संतोष हो जायेगा, वह अपने घर लौट जायेगा।

(ii) पूर्वी और पश्चिमी बंगाल के दोनों मुख्य सचिवों की शीघ्र ही बैठक होगी जिसमें आवश्यक कानून बनाने के प्रस्ताव को अंतिम रूप दिया जायेगा। पूर्वी और पश्चिमी बंगाल की सरकारें अपने-अपने प्रान्त के प्रत्येक जिले या क्षेत्र में उपधारा (1) में उल्लिखित निष्क्रांत संपत्ति प्रबंध बोर्ड बनाने का कानून 31 जनवरी 1949 से पूर्व पास करेगी। इसके बाद ये बोर्ड यथासंभव शीघ्रता से गठित किये जायेंगे।

खण्ड 2

1. जहां तक इस समझौते की सरलतापूर्वक क्रियान्विति का संबंध है दोनों प्रांतों, अर्थात् पूर्वी बंगाल और पश्चिमी बंगाल के मुख्य सचिवों की एक मास में कम से कम एक बार बैठक हुआ करेगी। जब कभी असम, कूचबिहार और त्रिपुरा से संबद्ध मामलों पर चर्चा होगी, पश्चिमी बंगाल के मुख्य सचिव ऐसी व्यवस्था करेंगे कि इनके प्रतिनिधि भी बैठक में उपस्थित रहें।

दोनों प्रांतों, पूर्वी बंगाल और पश्चिमी बंगाल के मुख्यमंत्री या उनके मनोनीत प्रतिनिधि इसी उद्देश्य से दो मास में कम से कम एक बार मिलेंगे।

2. (i) प्रत्येक डोमीनियन, केन्द्र में एक ऐसी संस्था बनायेगी जो इस समझौते की क्रियान्विति पर निगरानी रखेगी और उल्लंघन के मामले सामने लायेगी। यह जिम्मेदारी प्रत्येक डोमीनियन पर होगी कि वह ऐसी व्यवस्था करे कि प्रांतीय सरकार और सम्मिलित होने वाली देशी रियासतें भी इस समझौते का अपने-अपने क्षेत्र में पालन करें। यदि कोई प्रांत या रियासत किसी कारण से ऐसा समझती है कि समझौता या उनका कोई भाग लागू नहीं किया जाना चाहिए तो उसे इस बात की सूचना अपनी डोमीनियन सरकार को देनी चाहिए जो इस मामले को नीचे (ii) में उल्लिखित, अंतर-डोमीनियन मासिक बैठक में रखेगी।

(ii) उल्लंघन या लागू न किये जाने के सब मामले अथवा किये गये प्रबंधों के बाद हुए अनुभवानुसार संभावित संशोधन की आवश्यकता पर प्रति मास एक बार कराची और एक बार दिल्ली में होने वाली डोमीनियन मंत्रिस्तरीय बैठक में विचार किया जायेगा।

(iii) प्रत्येक डोमीनियन एक मंत्री नामजद करेगी जो अगले कुछ मास तक इस काम के लिए जिम्मेदार होगा और उन बैठकों में भाग लेगा।

(iv) सब अनिर्णीत मामले और एक ओर पूर्वी बंगाल, पूर्वी पंजाब, पूर्वी पंजाब की रियासतें जिनमें अलवर और भरतपुर भी शामिल होंगी, और दूसरी ओर पश्चिमी पाकिस्तान और उसमें सम्मिलित होने वाली देशी रियासतों से सम्बद्ध नये मामले और दिन प्रति दिन की समस्याएं भी इन बैठकों में विचार और समझौते के लिए उठाई जायेंगी।

3. पूर्वी बंगाल के मुसलमानों के असम में जाने और जो मुसलमान विभाजन से पूर्व असम में थे उनके पूर्वी बंगाल में आने के प्रश्नों पर भी ऊपर अनुच्छेद 2(ii) में वर्णित डोमीनियन मंत्रिस्तरीय बैठकों में विचार हो सकेगा।

4. सहमति हुई कि पूर्वी और पश्चिमी बंगाल में, किसी प्रांतीय सरकार द्वारा यदि दूसरे प्रान्त के सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध उसके कर्तव्य निर्वाह के दौरान किसी मामले को लेकर यदि दंडविधान संहिता के अधीन कोई कार्यवाही शुरू की गई है तो, उसे वापस लिया जायेगा और संबद्ध सरकारी कर्मचारी को यदि उसे हिरासत में लिया गया है तो, दोनों प्रांतों में साथ-साथ रिहा किया जायेगा और रिहाई की तिथि 1 जनवरी 1949 के बाद न होगी।

5. जहां तक पूर्वी बंगाल से भारत में और पश्चिमी बंगाल से पाकिस्तान में प्रवास का संबंध है, दोनों डोमीनियन की सरकारें और दोनों ही प्रांतों—पूर्वी बंगाल तथा पश्चिमी बंगाल—की सरकारें इस समझौते को लागू करके अथवा अन्य प्रकार से यथाशीघ्र ऐसी परिस्थितियां पैदा करेंगी जिससे उन नागरिकों के मन से भय मिटाया और विश्वास जगाया जा सके जो दूसरे डोमीनियन में चले गये हैं व उप-उच्चायुक्त (भारत से पाकिस्तान या पाकिस्तान से भारत में हुए प्रवास के लिए जो पूर्वी या पश्चिमी बंगाल में नियुक्त हैं) को निर्देश दिया जायेगा कि वे वहां निष्क्रांतों को यह बतायें और उन्हें ऐसी हर संभव सहायता दें जिससे वे अपने मूल निवास स्थान, भूमि और व्यवसाय पर वापस आ जायें। जिस प्रांत में प्रवास हुआ है उसकी सरकार उप-उच्चायुक्त और निष्क्रांतों को सब सुविधाएं प्रदान करेगी।

खण्ड 3

1. भारत के जिन क्षेत्रों से पाकिस्तान को भारी संख्या में निष्क्रमण हुआ है (पश्चिमी बंगाल, असम, कूचबिहार, त्रिपुरा, पूर्वी बंगाल, पूर्वी पंजाब की रियासतों, भरतपुर और अलवर को छोड़कर), उनके बारे में पाकिस्तान से संबद्ध आंकड़े मिलने के बाद एक और डोमीनियन सम्मेलन आयोजित किया जायेगा जिसमें ऊपर सुझाये गये ढंग पर या किसी अन्य उपयुक्त उपाय से, इन मामलों पर कार्यवाही करने पर विचार किया जायेगा—

(क) जो विस्थापित एक डोमीनियन से दूसरे डोमीनियन में अस्थायी तौर पर या अन्य प्रकार से चले गये हैं उनकी संपत्ति की सुरक्षा तथा अन्य संरक्षण पर, और

(ख) किसी भी प्रभावित क्षेत्र में ऐसी स्थिति पैदा करना जिससे अल्पसंख्यकों को भरोसा दिलाया जा सके कि उनके हित औरं अधिकार पूर्णरूपेण सुरक्षित हैं और जिससे कि निष्क्रमण रुके तथा निष्क्रांत अपने घरों को लौटने को प्रेरित हों।

9. नेहरू-लियाकत समझौता

[नई दिल्ली, 8 अप्रैल 1950]

1. भारत और पाकिस्तान पूर्ण निष्ठा के साथ सहमति प्रकट करते हैं कि प्रत्येक, अपने समूचे क्षेत्र में, अल्पसंख्यकों को, उनके धर्म का विचार किये बिना, नागरिकता के समान अधिकार प्रदान करेगा और उनके जीवन, संस्कृति, संपत्ति एवं व्यक्तिगत सम्मान, देश के भीतर आवागमन और व्यवसाय, भाषण तथा पूजा-उपासना की, कानून और नैतिकता के अनुरूप पूर्ण सुरक्षा की व्यवस्था करेगा। अल्पसंख्यक संप्रदाय के लोगों को बहुसंख्यक संप्रदाय के सदस्यों के साथ अपने देश के सार्वजनिक जीवन में भाग लेने, राजनीतिक तथा अन्य पदों पर आसीन होने

और अपने देश की असैनिक एवं सैनिक सेवाओं में सम्मिलित होने के समान अवसर प्राप्त होंगे। दोनों सरकारें इन अधिकारों को मौलिक अधिकार घोषित करती हैं और इनको प्रभावशाली ढंग से क्रियान्वित करने का दायित्व लेती हैं। भारत के प्रधानमंत्री ने इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित किया कि भारत में सब अल्पसंख्यकों को संविधान के द्वारा इन अधिकारों की गारंटी दी गई है। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री ने बताया कि पाकिस्तान की संविधान परिषद द्वारा लक्ष्यों संबंधी जो प्रस्ताव पारित किया गया है उसमें भी इस प्रकार की व्यवस्था है। दोनों सरकारों की नीति यही है कि ये लोकतांत्रिक अधिकार सब नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के प्राप्त हों।

दोनों सरकारें इस बात पर बल देना चाहती हैं कि अल्पसंख्यकों की निष्ठा और भक्ति उस राज्य के प्रति है जिसके वे नागरिक हैं और यह जिम्मेदारी उनके देश की सरकार की है कि उनकी कठिनाइयों को समझे और उनको दूर करने का प्रयत्न करे।

2. पूर्वी बंगाल, पश्चिमी बंगाल, असम और त्रिपुरा के बारे में, जहां हाल में ही सांप्रदायिक दंगे हुए, दोनों सरकारों के बीच सहमति हुई :

(i) आवागमन की स्वतंत्रता होगी और यात्रा के दौरान संरक्षण प्राप्त होगा।

(ii) निष्क्रांत व्यक्ति अपने साथ घर की जितनी वस्तुएं तथा जो निजी प्रयोग की जितनी चल-वस्तुएं ले जाना चाहेगा, उसे ले जाने की छूट होगी। चल-संपत्ति में निजी आभूषण भी सम्मिलित होंगे। प्रत्येक वयस्क निष्क्रमणार्थी को अधिकतम 150 रु० और बच्चे को 75 रु० नकद ले जाने की अनुमति होगी।

(iii) निष्क्रमणार्थी अपने जिन आभूषणों को और जिस नकद राशि को साथ ले जाना नहीं चाहेगा उसे बैंक में जमा करा सकेगा। बैंक उसे जमा नकद राशि की और आभूषणों की रसीद देगा और जब वह व्यक्ति इस जमा राशि और आभूषणों को वापस चाहेगा तब उसे सौंपने की सुविधाएं प्रदान की जायेंगी। नकद राशि की अदायगी संबद्ध सरकार के मुद्रा विनिमय संबंधी नियमों के अधीन की जायेगी।

(iv) सीमा-शुल्क अधिकारी परेशान नहीं करेंगे। संबद्ध सरकारों द्वारा स्वीकृत सीमा-शुल्क चौकियों पर दूसरी सरकार के संपर्क अधिकारी नियुक्त किये जायेंगे जो इस पर क्रियान्विति की व्यवस्था करेंगे।

(v) निष्क्रांत की अचल संपत्ति पर उसके अधिकार एवं स्वामित्व में किसी प्रकार का व्यतिक्रम नहीं आने दिया जायेगा। उसकी अनुपस्थिति में उसकी ऐसी संपत्ति पर यदि कोई अन्य व्यक्ति अधिकार कर लेगा तो भी इस संपत्ति को उसे लौटा दिया जायेगा; लेकिन शर्त यह है कि वह 31 दिसम्बर 1950 तक लौट आये। निष्क्रांत यदि अपनी भूमि का स्वामी, खेतिहर या शिकमी काश्तकार है तो उसकी भूमि उसे लौटा दी जायेगी; किन्तु शर्त यह है कि वह 31 दिसम्बर

1950 तक लौट आये। विशिष्ट मामलों में अपवाद स्वरूप एक सरकार यदि ऐसा समझती है कि निष्क्रांत की अचल संपत्ति उसे नहीं लौटाई जा सकती, तो इस मामले को सलाह के लिए उपयुक्त अल्पसंख्यक आयोग को सौंपा जायेगा।

जहां निश्चित अवधि के भीतर लौट आने वाले निष्क्रांत को उसकी संपत्ति लौटाना संभव न होगा, वहां संबद्ध सरकार उसे बसाने की व्यवस्था करेगी।

(vi) कोई निष्क्रांत, यदि वापस न लौटने का निर्णय करता है तो भी अपनी अचल संपत्ति का स्वामी बना रहेगा और उसे अपनी संपत्ति बेचने, दूसरे देश के निष्क्रांत की संपत्ति से आदान-प्रदान करने आदि का निर्बाध अधिकार होगा। अल्पसंख्यक संप्रदाय के तीन प्रतिनिधियों की एक समिति गठित की जायेगी जिसका अध्यक्ष सरकार का प्रतिनिधि होगा और जो संपत्ति के स्वामियों के न्यासधारी के रूप में काम करेगी। इस समिति को कानून के अनुसार अचल संपत्ति का किराया वसूल करने के अधिकार होंगे।

पूर्वी बंगाल, पश्चिमी बंगाल, असम और त्रिपुरा की सरकारें इस प्रकार की समितियां नियुक्त करने के लिए आवश्यक कानून बनायेंगी।

प्रांत या प्रदेश की सरकार जिला या अन्य उपयुक्त अधिकारी को निर्देश देंगी कि वे इस समिति को अपने दायित्व के निर्वाह में सब संभव सहयोग दें।

जो निष्क्रमणार्थी 15 अगस्त 1947 के बाद परन्तु हाल के दंगों से पहले पूर्वी बंगाल छोड़कर भारत के किसी भाग में चले गये हैं या पश्चिमी बंगाल, असम अथवा त्रिपुरा छोड़कर जो लोग पाकिस्तान गये हैं, इस अनुच्छेद की व्यवस्थाएं उन पर भी लागू होंगी। इस अनुच्छेद की व्यवस्थाएं उन निष्क्रमणार्थियों पर भी लागू होंगी जो सांप्रदायिक दंगे या उसके भय से बिहार छोड़कर पूर्वी बंगाल पहुंचे हैं।

3. जहां तक एक ओर पूर्वी बंगाल प्रांत और दूसरी ओर पश्चिमी बंगाल, असम और त्रिपुरा राज्य का संबंध है, दोनों सरकारें आगे सहमति प्रकट करती हैं कि वे :

(i) स्थिति को सामान्य बनाने के अपने प्रयत्न जारी रखेंगी और गड़बड़ी को फिर से फैलने से रोकने के लिए उपयुक्त पग उठायेंगी।

(ii) व्यक्ति और संपत्ति या अन्य दंडनीय अपराधों के सिलसिले में दोषी पाये गये सब व्यक्तियों को दंड देंगी। सामूहिक जुर्माने के निरोधकारी प्रभाव को देखते हुए जहां आवश्यक होगा उसे लागू किया जायेगा। जहां जरूरी होगा, विशेष न्यायालय नियुक्त किये जायेंगे, जिससे दोषियों को तत्काल दंडित किया जा सके।

(iii) लूटी गई संपत्ति को बरामद करने के लिए हर संभव प्रयत्न करेंगी।

(iv) शीघ्र ही ऐसा अभिकरण स्थापित करेंगी, जिसमें अल्पसंख्यक संप्रदाय के प्रतिनिधि सम्मिलित किये जायेंगे और जो अपहृत महिलाओं को बरामद करने में मदद देंगी।

(v) बलात धर्म-परिवर्तन को स्वीकार नहीं किया जायेगा। सांप्रदायिक दंगों के दौरान हुए किसी भी धर्म-परिवर्तन को बलात धर्म-परिवर्तन माना जायेगा। जो लोग लोगों का बलात धर्म-परिवर्तन करने के दोषी पाये जायेंगे उन्हें दंडित किया जायेगा।

(vi) तत्काल एक जांच आयोग नियुक्त करेंगी जो हाल के दंगों के कारणों और उनके प्रभावों के बारे में पता लगाकर प्रतिवेदन देगा और ऐसी सिफारिशें करेगा जिससे भविष्य में ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति रोकी जा सके। इस आयोग के सदस्य, जिसकी अध्यक्षता उच्चन्यायालय का एक न्यायाधीश करेगा, ऐसे होंगे जिससे अल्पसंख्यकों में विश्वास का संचार हो।

(vii) समाचारपत्रों या रेडियो अथवा किसी व्यक्ति या संस्था द्वारा ऐसे समाचारों और शरारतपूर्ण विचारों का प्रचार रोकने के लिए शीघ्र और प्रभावशाली पग उठायेंगी, जो सांप्रदायिक दुर्भाव भड़काने के इरादे से फैलायी जायेंगी। जिन्हें ऐसी गतिविधियों के लिए दोषी पाया जायेगा, उनके विरुद्ध कठोर कार्यवाही की जायेगी।

(viii) किसी देश में ऐसे प्रचार की अनुमति नहीं देंगी जो दूसरे की प्रादेशिक अखंडता के विरुद्ध अथवा दोनों में युद्ध भड़काने के उद्देश्य से किया जायेगा और ऐसा प्रचार करने वाले व्यक्ति या संस्था के विरुद्ध तत्काल प्रभावशाली ढंग से कार्यवाही करेंगी।

4. समझौते के भाग '3' के अनुच्छेद (i), (ii), (iii), (iv), (v), (vii) और (viii) का क्षेत्र सामान्य प्रकार का है और इन्हें भारत या पाकिस्तान के किसी भाग में आवश्यकता के अनुसार लागू किया जायेगा।

5. विश्वास जमाने के लिए ताकि विस्थापित अपने घरों को वापस लौट सकें, दोनों सरकारों ने निर्णय किया कि :

(i) प्रत्येक सरकार की ओर से एक-एक मंत्री नियुक्त किया जायेगा, जो प्रभावित क्षेत्रों में तब तक रहेगा जब तक आवश्यक होगा।

(ii) पूर्वी बंगाल, पश्चिमी बंगाल और असम के मंत्रिमण्डल में अल्पसंख्यक संप्रदाय का एक-एक प्रतिनिधि सम्मिलित किया जायेगा। असम मंत्रिमंडल में अल्पसंख्यक संप्रदाय को इस समय भी प्रतिनिधित्व प्राप्त है। पूर्वी बंगाल और पश्चिमी बंगाल के मंत्रिमण्डल में ऐसी नियुक्तियां शीघ्र ही की जायेंगी।

6. इस समझौते को क्रियान्वित करने में सहायता देने के उद्देश्य से दोनों सरकारों ने निश्चित किया कि खण्ड '5' में उल्लिखित मन्त्रियों को नियुक्त करने के अतिरिक्त पूर्वी बंगाल, पश्चिमी बंगाल और असम में एक-एक अल्संख्यक आयोग नियुक्त किया जायेगा। इन आयोगों का गठन और इनका कार्य निम्नलिखित ढंग से होगा :

(i) प्रत्येक आयोग में सम्बद्ध प्रांत या प्रदेश सरकार का एक मन्त्री होगा जो इसका अध्यक्ष होगा। बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक संप्रदाय का एक-एक प्रति-

निधि होगा जो पूर्वी बंगाल, पश्चिमी बंगाल और असम प्रांतीय या प्रादेशिक विधान मण्डलों में उनके प्रतिनिधियों द्वारा चुना जायेगा।

(ii) किसी आयोग की किसी बैठक में भारत और पाकिस्तान सरकार के दो मंत्री भाग ले सकेंगे। इस समझौते को संतोषप्रद ढंग से लागू करने के लिए किसी एक देश के केन्द्रीय मंत्री के आग्रह पर एक या किन्हीं दो अल्पसंख्यक आयोगों की संयुक्त बैठक हो सकेगी।

(iii) प्रत्येक आयोग अपने कार्य के विधिवत निर्वाह के लिए जितने कर्मचारी आवश्यक समझेगा नियुक्त करेगा और अपनी कार्यविधि स्वयं निश्चित करेगा।

(iv) दिसम्बर 1948 के अन्तर-उपनिवेश (डोमीनियन) समझौते की व्यवस्था के अनुसार गठित अल्पसंख्यक बोर्डों के माध्यम से प्रत्येक आयोग जिलों और प्रशासन के छोटे सदर मुकामों में अल्पसंख्यकों से संपर्क रखेगा।

(v) पूर्वी बंगाल और पश्चिमी बंगाल के अल्पसंख्यक आयोग दिसम्बर 1948 के अन्तर-उपनिवेश समझौते के अधीन गठित प्रांतीय अल्पसंख्यक बोर्डों का स्थान लेंगे।

(vi) केन्द्रीय सरकारों के दो मंत्री समय-समय पर ऐसे व्यक्तियों या संगठनों से परामर्श करते रहेंगे जिनसे ऐसा करना वे आवश्यक समझेंगे।

(vii) अल्पसंख्यक आयोग के निम्नलिखित कार्य होंगे :

(क) इस समझौते की क्रियान्विति पर निगरानी रखेंगे और रिपोर्ट देंगे एवं इस उद्देश्य से उल्लंघन या उपेक्षा का आंकलन करेंगे,

(ख) उनकी सिफारिशों पर क्या कार्यवाही की जाय इस बारे में परामर्श देंगे,

(viii) प्रत्येक आयोग जब और जैसे आवश्यक होगा संबद्ध प्रांत या प्रदेश सरकार को अपनी रिपोर्ट देगा। इन रिपोर्टों की प्रतियां '5' में उल्लिखित अवसर पर दोनों केन्द्रीय सरकारों को साथ-साथ दी जायेंगी।

(ix) भारत और पाकिस्तान की सरकारें और प्रदेश तथा राज्य सरकारें सामान्यतः उन सिफारिशों को क्रियान्वित करेंगी जिनका दोनों देशों के केन्द्रीय मंत्री समर्थन करेंगे। दो केन्द्रीय मंत्रियों में असहमति की स्थिति में मामला भारत और पाकिस्तान के प्रधानमंत्रियों को सौंपा जायेगा जिसे वे या तो स्वयं सुलझायेंगे या ऐसा अभिकरण और कार्यविधि निश्चित करेंगे जिसके माध्यम से इसे हल किया जायेगा।

(x) त्रिपुरा के संबंध में दो केन्द्रीय मंत्री एक आयोग गठित करेंगे और उन कर्तव्यों का निर्वाह करेंगे जो पूर्वी बंगाल, पश्चिमी बंगाल और असम के संबंध में समझौते द्वारा अल्पसंख्यक आयोगों को सौंपे गये हैं। '5' में वर्णित अवधि के समाप्त होने से पूर्व दो केन्द्रीय मंत्री त्रिपुरा में ऐसी उपयुक्त संस्था की स्थापना के बारे में सिफारिश करेंगे जो उन दायित्वों का निर्वाह करेंगी जिन्हें पूर्वी बंगाल,

पश्चिमी बंगाल और असम के अल्पसंख्यक आयोगों को सौंपा गया है।

7. इस समझौते द्वारा किये गये संशोधनों के अतिरिक्त दिसंबर 1948 का अंतर-उपनिवेश समझौता लागू रहेगा।

10. भारत-पाकिस्तान समझौता

[नई दिल्ली, 10 दिसम्बर 1958]

1. दोनों प्रधानमंत्रियों द्वारा जारी किये गये निर्देशों के अनुसार, सचिवों ने आज (10 सितंबर 1958) प्रातः निम्नलिखित विवादों पर विचार किया :

पश्चिमी बंगाल-पूर्वी पाकिस्तान	(1) विवाद 1 और 2 पर बग्गे पंचाट
	(2) हिल्ली
	(3) बेरूबाड़ी यूनियन नं० 12
	(4) भारत-पाकिस्तान सीमा का अंकन करना जिसमें पश्चिमी बंगाल में रैडक्लिफ रेखा के पास पुरानी कूचबिहार रियासत की भूमि के दो टुकड़ों को शामिल किया जा सके।
	(5) 24-परगना—खुलना, 24-परगना—जैसोर } सीमा विवाद
असम-पूर्वी पाकिस्तान ...	(6) भोलागंज पर पाकिस्तान का दावा
	(7) पियेन और सूरमा—सीमा विवाद
त्रिपुरा-पूर्वी पाकिस्तान ...	(8) पाकिस्तान रेलवे के अंतर्गत त्रिपुरा की भूमि; और रेलवे लाइन के पश्चिम में भागलपुर के पास त्रिपुरा की भूमि।
	(9) फेनी नदी—सीमा विवाद।
पश्चिमी बंगाल-पूर्वी पाकिस्तान	(10) पाकिस्तान में पिछली कूचबिहार रियासत के भूखंडों और भारत में पाकिस्तानी भूखंडों का आदान-प्रदान। पाकिस्तान को मिलने वाली अतिरिक्त भूमि के क्षेत्रिय मुआवजे का दावा।

2. बातचीत के परिणामस्वरूप निम्नलिखित समझौता हुआ :

(i) विवाद 1 और 2 पर बग्गे पंचाट—सहमति प्रकट की गई कि सीमांकन के परिणामस्वरूप क्षेत्र का आदान-प्रदान 15 जनवरी 1959 तक हो जाना चाहिए।

(ii) हिल्ली—पाकिस्तान सरकार स्वीकार करती है कि इस विवाद को समाप्त समझा जाय। सर सिरिल रैडक्लिफ के पंचाट और नक्शे पर उनके द्वारा

अंकित रेखा के अनुसार इस समय जैसी स्थिति है, वह बनी रहेगी।

(iii) बेरूबाड़ी यूनियन नं० 12—इसका विभाजन इस प्रकार किया जायेगा कि आधा भाग पाकिस्तान को मिलेगा और शेष आधा भाग जो भारत को मिला है भारत के पास रहेगा। बेरूबाड़ी यूनियन नं० 12 का विभाजन आड़ा होगा और विभाजक रेखा उत्तर-पूर्व कोने में देवीगंज थाने से आरंभ होगी। विभाजन इस प्रकार किया जायेगा कि पूर्वी पाकिस्तान के पचागर थाना और पश्चिमी बंगाल के जलपाई गुड़ी थाना में बेरूबाड़ी यूनियन नं० 12 के बीच की कूचबिहार की बस्तियां वर्तमान स्थिति की ही भांति भारतीय क्षेत्र से संबद्ध रहेंगी और भारत में रहेंगी। पूर्वी पाकिस्तान के बोदा थाना और बेरूबाड़ी यूनियन नं० 12 के बीच की कूचबिहार की निचली बस्तियां, बस्तियों की आम अदला-बदली के समय बदली जायेगी और पाकिस्तान को मिलेंगी।

(iv) पाकिस्तान सरकार स्वीकार करती है कि रेडक्लिफ रेखा से मिले कूचबिहार प्रदेश की भूमि के दो खंड पश्चिमी बंगाल में मिला दिये जायेंगे और रेडक्लिफ रेखा को उसी अनुरूप सुधारा जायेगा।

(v) 24-परगना—खुलना, 24-परगना—जैसोर } सीमा विवाद

सहमति प्रकट की गई कि भारत और पाकिस्तान के दो संबद्ध दावों के अर्थ को स्वीकार कर लिया जाय और दूसरे विवाद के मामले में जहां तक संभव हो नदी (इच्छामती नदी) को आधार माना जाय।

(vi) पाकिस्तान सरकार भोलागंज के बारे में अपने दावे को समाप्त करना स्वीकार करती है।

(vii) पियेन और सूरमा नदी क्षेत्रों को संबद्ध विज्ञप्तियों, बंदोबस्त के नकशों और आवश्यकता पड़ने पर स्वामित्व के रिकार्ड के आधार पर रेखांकित किया जायेगा। इस सीमांकन का परिणाम चाहे जो हो दोनों देशों के नागरिकों को इन दोनों नदियों में नौकायनकी सुविधाएं प्राप्त होंगी।

(viii) भारत सरकार स्वीकार करती है कि रेलवे लाइन के पश्चिम में त्रिपुरा राज्य की जो भूमि है तथा भागलपुर में रेलवे लाइन से संबद्ध जो भूमि है उसका चिरस्थायी अधिकार पाकिस्तान को दे दिया जायेगा।

(ix) फेनी नदी के मामले को और अध्ययन के बाद पृथक रूप से हल किया जायेगा।

(x) पुरानी कूचबिहार रियासत की जो बस्तियां पाकिस्तान में हैं और पाकिस्तान की जो बस्तियां भारत में हैं उनका आदान-प्रदान इस प्रकार करने पर सहमति हुई कि पाकिस्तान को मिलने वाली अतिरिक्त भूमि के लिए किसी मुआवजे का दावा उपस्थित नहीं किया जायेगा।

3. सचिवों ने इस पर भी सहमति प्रकट की कि अब तक हुए सीमांकन के परिणामस्वरूप जिस क्षेत्र का आदान-प्रदान किया जाना है उस पर शीघ्र ध्यान

दिया जाय।

11. नेहरू-नून समझौता

[नई दिल्ली, 12 सितंबर 1958]

संयुक्त विज्ञप्ति

भारत के प्रधानमंत्री के आमंत्रण पर पाकिस्तान के प्रधानमंत्री ने 9 से 11 सितंबर 1958 तक नई दिल्ली की यात्रा की। इस यात्रा के दौरान पाकिस्तान और भारत के प्रधानमंत्रियों ने भारत-पाकिस्तान सीमा से लगे क्षेत्र में शांतिपूर्ण परिस्थिति पैदा करने और तनाव के कारणों को दूर करने के उद्देश्य से भारत-पाकिस्तान सीमा की विभिन्न समस्याओं पर विचार किया।

प्रधानमंत्रियों के बीच इन सीमा समस्याओं पर खुले हृदय से मैत्रीपूर्ण विचार विमर्श हुआ। पूर्वी क्षेत्र की अधिकांश सीमा समस्याओं के हल पर उनमें सहमति हुई। पिछली कूचबिहार रियासत की पाकिस्तान में घिरी बस्तियों और भारत में पाकिस्तानी बस्तियों के आदान-प्रदान पर भी वे सहमत हुए।

कुछ सीमा विवादों, यथा पूर्वी क्षेत्र में रेडक्लिफ और बग्गे पंचाट से संबद्ध दो, तथा पश्चिमी क्षेत्र के पांच विवादों पर और आगे विचार करने की आवश्यकता है।

प्रधानमंत्रियों ने सहमति प्रकट की कि किये गये समझौतों के आधार पर सीमांकन का काम शीघ्रता से करने के लिए अपने सर्वेक्षण कर्मचारियों को वे आवश्यक निर्देश देंगे और जो विवाद अब तक सुलझाये नहीं जा सके उनको हल करने के उपायों पर आगे विचार होगा। हुसैनीवाला और सुलेमांकी विवाद के बारे में पाकिस्तान सरकार के विदेश सचिव और भारत सरकार के राष्ट्रमंडलीय सचिव, अपने इंजीनियरों से परामर्श करके, प्रधानमंत्रियों को अपने सुझाव देंगे।

प्रधानमंत्रियों ने सहमति प्रकट की कि स्वीकृत तिथि पर और इन विवादग्रस्त क्षेत्रों के बारे में हुए समझौते और सीमांकन के आधार पर क्षेत्रों के आदान-प्रदान के बाद इन परिवर्तित क्षेत्रों में रहने वाली जनता से अपील की जायेगी कि वे अपने वर्तमान घरों में ही और उनका क्षेत्र जिस राज्य को अब सौंपा जा रहा है उसके नागरिक के रूप में रहें। प्रधानमंत्रियों के आगे सहमति हुई कि जब तक शेष विवादों पर समझौता नहीं हो जाता और आपसी समझौते से क्षेत्रों का आदान-प्रदान करके सीमांकन का काम नहीं कर लिया जाता, तब तक बलप्रयोग द्वारा यथास्थिति को बिगाड़ा नहीं जायेगा और सीमावर्ती क्षेत्रों में शांतिपूर्ण स्थिति बनाये रखी जायेगी। इस संबंध में संबद्ध राज्यों और सीमा के स्थानीय अधिकारियों को आवश्यक अनुदेश दिये जायेंगे।

प्रधानमंत्रियों में सहमति हुई कि अपने दोनों देशों के बीच मैत्रीपूर्ण और सहयोगपूर्ण संबंध बनाये रखने तथा उनको विकसित करने के अपने समान उद्देश्य को पूरा करने के लिए विभिन्न उपायों पर विचार करते रहने के लिए एक दूसरे से संपर्क बनाये रखेंगे।

12. भारत-पाकिस्तान समझौता

[नई दिल्ली, 11 जनवरी 1960]

संयुक्त विज्ञप्ति

1. अक्तूबर 1959 के भारत-पाकिस्तान के मंत्रिस्तर सम्मेलन के निर्णयों के अनुरूप जहां कि पूर्वी पाकिस्तान व भारत के कई सीमा प्रश्नों को मैत्रीपूर्ण ढंग से हल किया गया था, 4 से 11 जनवरी 1960 तक लाहौर, रावलपिंडी व दिल्ली में पश्चिमी पाकिस्तान व भारत के सीमा प्रश्नों पर विचार करने के लिए एक मंत्रिस्तर सम्मेलन हुआ। पाकिस्तानी प्रतिनिधि-मंडल का नेतृत्व लैफ्टी० जनरल के० एम० शेख ने और भारतीय प्रतिनिधि-मंडल का नेतृत्व सरदार स्वर्णसिंह ने किया।

2. इस दिशा में विवाद के कुल पांच क्षेत्र थे अर्थात् (1) चक लढ़ेके, (2) ठेह सरजा मरजा, (3) हुसैनीवाला, (4) सुलेमांकी-हैडवर्क्स, और (5) कच्छ-सिंध सीमा। इनमें से प्रथम चार विवाद भारत और पाकिस्तान सरकारों द्वारा रैडक्लिफ पंचाट के भाष्य पर मतभेद के कारण उठे। इन्हें पारस्परिक सद्भाव और निभाने की भावना से हल किया गया है, जिसका ब्यौरा नीचे अनुच्छेद 3 में प्रस्तुत है।

3. पाकिस्तान चक लढ़ेके पर और भारत ने तीन गांवों ठेह सरजा मरजा, रखहरदितसिंह और पठानके पर अपना दावा छोड़ दिया है। हुसैनीवाला हैडवर्क्स के संबंध में निश्चित किया गया कि फीरोजपुर और लाहौर जिले के बीच की जिला सीमा ही उसकी सीमा होगी। सुलेमांकी हैडवर्क्स के बारे में भी समझौता किया गया और जिला सीमा को ठीक-ठाक करने के लिए भी समझौता हुआ।

4. दोनों देशों में सहमति हुई कि कच्छ-सिंध सीमा विवाद के बारे में और आंकड़े इकट्ठे किये जायें और इस विवाद को हल करने के लिए बाद में बातचीत हो।

5. उन स्थल-नियमों के बारे में भी समझौता हुआ जो पश्चिमी पाकिस्तान व भारत सीमा पर व्यवहृत होंगे।

6. जहां तक पश्चिमी पाकिस्तान और पंजाब (भारत) के बीच सीमांकन का संबंध है, तय किया गया कि इस काम को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जायेगी और इसे अप्रैल 1960 तक पूरा कर लिया जायेगा। इस पर भी सहमति हुई कि इस क्षेत्र में एक देश का जो भूखंड दूसरे देश के अधिकार में है उसकी वापसी का काम 15 अक्तूबर 1960 तक पूरा कर लिया जायेगा।

पूर्वी पाकिस्तान-भारत और पश्चिमी पाकिस्तान-भारत सीमा के अधिकांश प्रश्न हल हो जाने से दोनों सरकारों द्वारा अच्छे और मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करने के लिए एक और पग उठाया गया जिसकी दोनों नेताओं, पाकिस्तान के राष्ट्रपति और भारत के प्रधामंत्री ने 1 सितंबर 1959 की अपनी बैठक में स्वागतपूर्ण चर्चा की थी।

13. नेहरू-नून समझौता (सीमा-विवाद) पर भारत-पाकिस्तान विज्ञप्ति

[ढाका, 2 अगस्त 1962]

पूर्वी पाकिस्तान, असम और पश्चिमी बंगाल के मुख्य सचिवों और त्रिपुरा के मुख्यायुक्त का 35वां सम्मेलन 1 और 2 अगस्त 1962 को ढाका में हुआ। सम्मेलन में स्वतंत्र रूप से और खुले दिल से तथा मैत्रीपूर्ण वातावरण में विचार हुआ। सम्मेलन में पूर्वी-पाकिस्तान और असम, पश्चिमी बंगाल तथा त्रिपुरा के बीच अंतर्राष्ट्रीय सीमा को रेखांकित करने के काम की प्रगति पर विचार हुआ और इस काम को शीघ्रता से पूरा करने में आने वाली क्रियाविधि संबंधी तथा अन्य कठिनाइयों को दूर करने के उपायों पर विचार किया गया। सहमति प्रकट की गई कि जिन क्षेत्रों में सीमा का रेखांकन नहीं किया गया उन क्षेत्रों में यह कार्य 1 नवम्बर 1962 से आरंभ हो जाना चाहिए। त्रिपुरा और असम से निकाले गये व्यक्तियों और पश्चिमी बंगाल से पूर्वी पाकिस्तान की ओर तथा विपरीत दिशा में विस्थापितों की भगदड़ से उत्पन्न समस्या पर सम्मेलन में विचार हुआ। पूर्वी पाकिस्तान और पश्चिमी बंगाल के मुख्य सचिवों में सहमति हुई कि विस्थापितों को अपने-अपने घरों को लौट जाने के लिए सुविधा प्रदान की जाय और उन्हें वहां बसाया जाय। दोनों मुख्य सचिवों ने शांति और साम्प्रदायिक सौमनस्य बनाये रखने के अपनी-अपनी सरकार के संकल्प को दोहराया। इस संबंध में मुख्य सचिवों ने चिंता व्यक्त की कि हाल के साम्प्रदायिक दंगों के दौरान दोनों पक्षों के कुछ समाचारपत्रों ने ऐसे गंभीर, आपत्तिजनक और अतिरंजित समाचार प्रकाशित किये जिनसे सांप्रदायिक भावनाएं और भड़कीं तथा तनाव बढ़ा है। मुख्य सचिवों ने निर्णय किया कि वे समाचारपत्रों से अपील करेंगे कि वे ऐसी सामग्री प्रकाशित न करें बल्कि फिर से सामान्य एवं शांतिपूर्ण स्थिति स्थापित करने तथा सीमा के दोनों ओर सद्भाव लाने में सहायक हों।

मुख्य सचिवों में सहमति हुई कि उनकी अगली बैठक शिलांग (असम) में 1962 के नवम्बर मास के मध्य में होगी।

14. ताशकंद घोषणा

[ताशकंद, 10 जनवरी 1966]

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति, ताशकंद में मिलने और भारत तथा पाकिस्तान के वर्तमान संबंधों पर विचार करने के बाद, अपने इस दृढ़ निश्चय की घोषणा करते हैं कि अपने देशों के बीच सामान्य और शांतिपूर्ण संबंध पुनर्संस्थापित करेंगे और अपनी जनता के बीच सद्भावना एवं मैत्रीपूर्ण संबंध बढ़ायेंगे। भारत और पाकिस्तान की 60 करोड़ जनता के कल्याण के लिए इन लक्ष्यों को पूरा करना वे नितांत महत्वपूर्ण मानते हैं।

1. भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हैं कि दोनों पक्ष संयुक्त राष्ट्रसंघ घोषणा-पत्र के अनुरूप भारत और पाकिस्तान के बीच भले पड़ोसियों जैसे संबंध स्थापित करने के लिए सब प्रयत्न करेंगे। घोषणा-पत्र के अधीन वे अपने इस दायित्व की पुष्टि करते हैं कि वे बल प्रयोग नहीं करेंगे और अपने विवाद शांतिपूर्ण उपायों से हल करेंगे। उन्होंने स्वीकार किया कि उनके क्षेत्र में व विशेषतः भारत-पाकिस्तान उपमहाद्वीप में, शांति के हितों की व वस्तुतः भारत और पाकिस्तान की जनता के हितों की पूर्ति, दोनों देशों के बीच तनाव जारी रहने से नहीं होती। इसी पृष्ठभूमि में जम्मू-काश्मीर पर विचार हुआ और प्रत्येक पक्ष ने अपनी-अपनी स्थिति प्रस्तुत की।

2. भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हुए कि दोनों देशों के सब सशस्त्र सैनिक 5 अगस्त 1965 से पूर्व की स्थिति में वापस चले जायेंगे और वापसी का यह कार्य 25 फरवरी 1966 से बाद नहीं होगा एवं दोनों पक्ष युद्ध-विराम रेखा पर युद्ध-विराम की शर्तों का पालन करेंगे।

3. भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हैं कि भारत और पाकिस्तान के संबंध एक दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने के सिद्धांत पर आधारित होंगे।

4. भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हैं कि दोनों देश ऐसे प्रचार को हतोत्साहित करेंगे जो कि दूसरे देश के विरुद्ध किया जायेगा, और ऐसे प्रचार को बढ़ावा देंगे जो दोनों देशों के बीच मैत्रीपूर्ण संबंध बढ़ाने में सहायक होगा।

5. भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हैं कि पाकिस्तान में भारत के उच्चायुक्त और भारत में पाकिस्तान के उच्चायुक्त अपने अपने पदों पर लौट जायेंगे और दोनों देशों के राजनयिक मिशन अपना कार्य समान रूप से आरंभ कर देंगे। दोनों सरकारें राजनयिक व्यवहार के बारे में 1961 के जेनेवा समझौते का पालन करेंगी।

6. भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हैं कि आर्थिक और व्यापार संबंध, संचार तथा भारत पाकिस्तान के बीच सांस्कृतिक

आदान-प्रदान पुनरपि आरंभ करने के उपायों पर विचार करें और भारत तथा पाकिस्तान के बीच जो समझौते किये जा चुके हैं उनकी क्रियान्विति के लिए पग उठायें।

7. भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हैं कि वे अपने-अपने अधिकारियों को निर्देश देंगे कि युद्धबंदियों की वापसी आरंभ की जाय।

8. भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हैं कि विस्थापितों, निष्कासन और अवैध आव्रजन की समस्या से संबद्ध प्रश्नों पर दोनों देश विचार-विमर्श जारी रखेंगे। वे इस पर भी सहमत हुए कि दोनों पक्ष ऐसी परिस्थितियां पैदा करेंगे जिससे लोगों का निष्कासन रुके। उनमें आगे सहमति हुई कि युद्ध के दौरान एक पक्ष ने दूसरे पक्ष की जिस संपत्ति पर कब्जा कर लिया है उसे लौटाने पर विचार होगा।

9. भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हैं कि जिन मामलों से दोनों देशों का प्रत्यक्ष रूप से संबंध है उन पर उच्चतम स्तर पर तथा अन्य स्तरों पर बैठकें जारी रखेंगे। दोनों पक्ष संयुक्त भारत-पाकिस्तान संस्थाएं स्थापित करने की आवश्यकता स्वीकार करते हैं जो अपनी सरकारों को रिपोर्ट देंगी जिससे वे तय कर सकें कि आगे क्या पग उठाये जाने चाहिए।

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सोवियत यूनियन के नेताओं, सोवियत सरकार और व्यक्तिगत रूप से सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ की मंत्रिपरिषद के अध्यक्ष के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता प्रकट करते हैं और उनकी सराहना करते हैं कि उन्होंने वर्तमान बैठक आयोजित करने में रचनात्मक, मैत्रीपूर्ण और शानदार भूमिका निभाई जिसके परिणामस्वरूप पारस्परिक संतोषप्रद परिणाम निकले। वे उजबेकिस्तान की सरकार और उसकी मैत्रीपूर्ण जनता को भी सच्चे हृदय से साधुवाद देते हैं कि उसने हृदय से उनका स्वागत और उदारतापूर्वक आतिथ्य सत्कार किया।

वे सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ की मंत्रिपरिषद के अध्यक्ष को आमंत्रित करते हैं कि इस घोषणा के साक्षी बनें।

भारत के प्रधानमंत्री
लाल बहादुर शास्त्री

पाकिस्तान के राष्ट्रपति
मुहम्मद अयूब खां

15. भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार के बीच द्विपक्षीय संबंधों के बारे में समझौता

[शिमला, 2 जुलाई 1972]

1. भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार संकल्प करती हैं कि दोनों देश उस संघर्ष और मुकाबले को समाप्त कर दें जिसके कारण अब तक उनके संबंध बिगड़े रहे और मैत्रीपूर्ण तथा मेल-मिलाप के संबंध को बढावा देने के लिए काम करें तथा उपमहाद्वीप में स्थायी शांति स्थापित करें जिससे अब से दोनों देश अपने साधनों और शक्तियों को अपनी जनता के कल्याण को बढ़ावा देने में लगा सकें।

इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार के बीच निम्नलिखित सहमति हुई :

(i) कि दोनों देशों के संबंध संयुक्त राष्ट्रसंघ के घोषणापत्र के सिद्धांतों और उद्देश्यों के अनुरूप नियमित होंगे।

(ii) कि दोनों देश संकल्प करते हैं कि अपने मतभेदों को शांतिपूर्ण उपायों द्वारा द्विपक्षीय वार्ता से या दोनों की पारस्परिक सहमति से किसी अन्य शांतिपूर्ण उपाय से हल करेंगे। दोनों देशों के बीच किसी समस्या के अंतिम रूप से हल न होने तक, कोई पक्ष एकाकी रूप से स्थिति को नहीं बदलेगा और दोनों पक्ष शांति और मैत्रीपूर्ण संबंध बनाये रखने में बाधक कार्यों के संगठन, सहयोग और प्रोत्साहन को रोकेंगे।

(iii) कि उनके मध्य समझौते, नेक पड़ौसियों जैसे व्यवहार और स्थायी शांति की प्रारंभिक आवश्यकता यह है कि दोनों देश शांतिपूर्ण-सहअस्तित्व, एक दूसरे की प्रादेशिक अखंडता और प्रभुसत्ता का सम्मान करने तथा एक दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने और समता एवं पारस्परिक हित के आधार पर प्रतिबद्ध हों।

(iv) कि संघर्ष के मूलभूत प्रश्नों और कारणों को जिनकी वजह से गत 25 वर्ष से दोनों देशों के संबंध बिगड़े रहे, शांतिपूर्ण ढंग से हल किया जायेगा;

(v) कि वे सदैव एक दूसरे की राष्ट्रीय एकता, भौगोलिक अखंडता, राजनीतिक स्वतंत्रता और प्रभुसत्ता युक्त समता का आदर करेंगे;

(vi) कि संयुक्त राष्ट्रसंघ घोषणापत्र के अनुसार वे एक दूसरे की भौगोलिक अखंडता या राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए खतरा बनने या एक दूसरे के विरुद्ध बल प्रयोग करने से बचेंगे।

2. एक दूसरे के विरुद्ध विरोधी प्रचार रोकने के लिए दोनों सरकारें अपनी शक्ति और सामर्थ्य भर सब पग उठायेंगी। दोनों देश ऐसी सूचनाएं प्रचारित

और प्रसारित करेंगे जो उनके बीच मैत्रीपूर्ण संबंधों के विकास में सहायक होंगी।

3. दोनों देशों के बीच धीरे-धीरे तथा एक-एक पग करके संबंधों के पुनर्संस्थापन और उनको सामान्य बनाने के लिए निश्चित किया गया कि :

(i) संचार, डाक, तार, समुद्र, सीमा चौकियों सहित थल और हवाई संबंध, जिनमें ऊपर से गुजरने वाली उड़ानें भी सम्मिलित होंगी, फिर से स्थापित करने के लिए पग उठाये जायेंगे;

(ii) दोनों देशों के नागरिकों की यात्रा करने की सुविधाएं बढ़ाने के लिए उपयुक्त पग उठाये जायेंगे;

(iii) व्यापार और आर्थिक तथा अन्य सहमति वाले क्षेत्रों में यथासंभव सहयोग किया जायेगा;

(iv) विज्ञान और संस्कृति के क्षेत्रों में आदान-प्रदान को बढ़ावा दिया जायेगा।

इस संबंध में आवश्यक ब्यौरा तैयार करने के लिए दोनों देशों के प्रतिनिधि समय-समय पर मिलते रहेंगे।

4. स्थायी शांति स्थापित करने की प्रक्रिया आरंभ करने के लिए दोनों सरकारों में सहमति हुई कि :

(i) भारतीय और पाकिस्तानी सेनाएं अंतर्राष्ट्रीय सीमा के पार अपने-अपने क्षेत्रों में हटा ली जायेंगी;

(ii) जम्मू-काश्मीर में, किसी भी पक्ष की मान्य स्थिति में किसी व्याघात के बिना, 17 दिसम्बर 1971 के युद्ध-विराम के परिणाम-स्वरूप बनी वास्तविक नियंत्रण-रेखा का दोनों पक्ष आदर करेंगे। पारस्परिक मतभेदों और कानूनी भाष्यों के बावजूद कोई पक्ष एकाकी तौर पर उसे बदलने का प्रयास नहीं करेगा। दोनों पक्ष आगे स्वीकार करते हैं कि इस रेखा के उल्लंघन के निमित्त खतरा पैदा करने या बल प्रयोग करने से बचेंगे;

(iii) इस समझौते के लागू होने के बाद सेनाओं की वापसी शुरू हो जायेगी और 30 दिन के भीतर पूरी कर ली जायेगी।

5. दोनों देशों की अपनी-अपनी संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार इस समझौते की संपुष्टि की जायेगी और इसे उस दिन से लागू समझा जायेगा, जिस दिन संपुष्ट समझौता-पत्रों का आदान-प्रदान होगा।

6. दोनों सरकारें सहमत हैं कि उनके प्रमुखों की बैठक भविष्य में पारस्परिक सुविधा के अनुसार किसी तिथि पर फिर होगी, और इस बीच दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों की बैठक होगी जिसमें स्थायी शांति और संबंधों को सामान्य बनाने के अगले उपायों और व्यवस्थाओं पर विचार किया जायेगा। इसमें युद्धबंदियों और असैनिक नजरबंदियों की वापसी, जम्मू-काश्मीर के अंतिम हल और राजनयिक

संबंध फिर से स्थापित करने की बात भी सम्मिलित होगी।

इंदिरा गांधी	**जुल्फिकार अली भुट्टो**
प्रधानमंत्री	**राष्ट्रपति**
भारत गणराज्य	**पाकिस्तान का इस्लामी गणराज्य**

16. जम्मू-काश्मीर में नियंत्रण रेखा निश्चित हो जाने पर 12 दिसम्बर 1972 को लोकसभा में विदेश विभाग के मंत्री का वक्तव्य

नई दिल्ली और इस्लामाबाद में निम्न घोषणा की गई है :

2 जुलाई 1972 के शिमला समझौते के अनुसार जम्मू-काश्मीर में नियंत्रण रेखा निर्धारित की गई है और इसे दोनों सरकारों ने स्वीकार किया है। दोनों सरकारों द्वारा स्वीकृत नियंत्रण-रेखा के अनुरूप ही मैदानी स्थिति में तालमेल बिठाया जायेगा और यह कार्य इस घोषणा के पांच दिन के भीतर पूरा किया जायेगा।

17 दिसम्बर 1971 को हुए युद्ध-विराम के परिणामस्वरूप काश्मीर में बनी नियंत्रण रेखा का विस्तृत ब्यौरा जैसा कि उसे ओर से छोर तक नक्शों में रेखांकित किया गया है, निम्नलिखित है। यह रेखा 19 नक्शों में दिखाई गई है और अंतर्राष्ट्रीय सीमा पर छंब क्षेत्र से आरंभ होकर उत्तर में तुर्तोक-परतापुर क्षेत्र में समाप्त होती है।

मैंने सदन को 8 दिसम्बर को सूचित किया था कि ठाको चक के डेढ़ वर्गमील क्षेत्र के बारे में, जो पाकिस्तान के अधिकार में है, जो विवाद था उसे हल किया जा चुका है। पाकिस्तान ने जब ठाको चक से अपनी सेनाएं हटाना स्वीकार कर लिया तब हमने, सद्भावना के संकेत स्वरूप, एक दूसरे के दावों के आधार पर सीमा रेखा को मामूली फेर-बदल के साथ युक्तिसंगत बनाना स्वीकार कर लिया। इस प्रक्रिया में, हमने धूम और घीकोट गांवों के बारे में जो नियंत्रण-रेखा पर हैं और जिनका क्षेत्रफल लगभग 0·45 वर्गमील है, अपने पुराने दावे को वापस ले लिया है।

नियंत्रण-रेखा का विशद ब्यौरा

(क) मुनव्वर तवी एन० डब्लू० 605550 से नियंत्रण-रेखा उत्तर-पश्चिम की ओर तीन मील तक के बिंदु तक जाती है जो झंगर के पश्चिम में है (इसमें छम्ब पाकिस्तान में जुड़ता है), वहां से यह उत्तर-पूर्व की ओर मीठीधारा एन० आर० 2619 की ओर मुड़ जाती है, फिर वहां से उत्तर और उत्तर-पश्चिम की ओर पुंछ नदी पर एन० आर० 052669 (पुंछ से दक्षिण-पश्चिम लगभग 6 मील) तक जाती है।

(ख) वहां से यह रेखा फिर उत्तर-पूर्व की ओर मुड़ती और फिर उत्तर की ओर गुलमर्ग क्षेत्र में जारनी गली (यह भारत में शामिल है) तक जाती है, वहां से पश्चिम की ओर मिडी गली (भारत में शामिल) से होती हुई पीर कांठी (पाकिस्तान में शामिल) तक, वहां से उत्तर की ओर छोटा काजी नाग (भारत में शामिल) होती हुई उड़ी के उत्तर-पश्चिम में लगभग 7 मील तक, लिपा घाटी में काइयां तक (भारत में शामिल) जा कर, वहां से यह पश्चिम की ओर चलती हुई रिछमर गली साथ कटरां की गली (पाकिस्तान में शामिल) और बंजाल पहाड़ी और मुकाम चोटी (भारत में शामिल) तक जाती है।

(ग) रिछमर गली से यह नियंत्रण-रेखा उत्तर की ओर चलती हुई तीथवाल के पश्चिम से गुजरकर केरन के उत्तर तीन मील तक, वहां से उत्तर-पूर्व की ओर मुड़कर लुंदा गली (भारत में शामिल), फिर पूर्व की ओर केल क्षेत्र में हरमार्गी गांव (पाकिस्तान में शामिल), कंजालवां क्षेत्र के दुरमट (भारत में शामिल), और 14236, 15460 चोटियां और मिनी-मार्ग क्षेत्र में करोबल गली (सब भारत में शामिल), फिर नेरिल (भारत में शामिल) के साथ, ब्रीलमान (पाकिस्तान में शामिल), और करगिल क्षेत्र में चेत के उत्तर, तुर्तोक क्षेत्र में चोर बाटला तक जाती है।

(घ) वहां से यह नियंत्रण-रेखा उत्तर-पूर्व की ओर चली हुई थांग (भारत में शामिल) तक जा कर पूर्व की ओर बढ़कर हिमनदों से जा मिलती है।

17. भारत गणतंत्र और सोवियत समाजवादी गणतंत्र संघ के बीच शांति, मित्रता और सहयोग की संधि

दोनों के बीच वर्तमान सच्ची मित्रता के संबंधों को सुदृढ़ और सुविस्तृत करने की इच्छा रखते हुए,

इस विश्वास से कि मित्रता और सहयोग के अधिक विकास से दोनों राज्यों के मौलिक राष्ट्रीय हित तथा एशिया और सारे संसार में सुदीर्घ शांति को पोषण मिलता है,

विश्व शांति और सुरक्षा की दृढ़ता को संवर्धित करने तथा अंतर्राष्ट्रीय तनाव को कम करने के सतत प्रयास एवं उपनिवेश वाद के अवशेषों को पूर्णतया एवं अंतिम रूप से समाप्त करने के निश्चय से,

विभिन्न राजनीतिक एवं सामाजिक प्रणालियों वाले राज्यों के बीच शांति पूर्ण सह-अस्तित्व और सहयोग के सिद्धांतों में अटूट विश्वास रखते हुए,

इस पूर्ण विश्वास के साथ कि संसार की वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय समस्याएं संघर्ष द्वारा नहीं बल्कि मात्र सहयोग द्वारा ही सुलझाई जा सकती हैं—

संयुक्त राष्ट्रसंघ चार्टर के उद्देश्यों और सिद्धांतों को मानकर चलते रहने के संकल्प की पुनः पुष्टि करते हुए एक ओर भारत गणतंत्र और दूसरी ओर

सोवियत समाजवादी गणतंत्र संघ ने वर्तमान संधि करने का निश्चय किया है, जिसके लिए निम्नांकित पूर्णाधिकारी नियुक्त किये गये हैं

भारत गणतंत्र की ओर से :

सरदार स्वर्णसिंह
विदेश मंत्री

सोवियत समाजवादी गणतंत्र की ओर से

श्री अ० अ० ग्रोमिको
विदेश मंत्री

जिन्होंने अपने प्रत्यय-पत्र प्रस्तुत किये हैं, जिनको शुद्ध और सही माना गया है। वे निम्न प्रकार से सहमत हुए हैं—

अनुच्छेद 1

महान संविदाकारी पक्ष निष्ठापूर्वक घोषणा करते हैं कि दोनों देश और उनकी जनता के बीच स्थायी शांति और मित्रता बनी रहेगी। प्रत्येक पक्ष दूसरे पक्ष की स्वतंत्रता, प्रभुसत्ता और क्षेत्रीय अखंडता का सम्मान करेगा और दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा। महान संविदाकारी पक्ष सच्ची मित्रता, अच्छी प्रतिवेशिता और व्यापक सहयोग के वर्तमान संबंधों को उपरोक्त सिद्धांतों तथा समानता एवं पारस्परिक लाभ के आधार पर विकसित और सुदृढ़ करते रहेंगे।

अनुच्छेद 2

प्रत्येक संभव प्रकार से दोनों देशों की जनता के लिए स्थायी शांति और सुरक्षा को सुनिश्चित करने में योगदान की इच्छा से प्रेरित होकर महान संविदाकारी पक्ष अपने इस संकल्प की घोषणा करते हैं कि वे एशिया और समूचे संसार में शांति बनाये रखने, उसे दृढ़ करने, शस्त्र दौड़ को रोकने तथा प्रभावकारी अंतर्राष्ट्रीय नियंत्रण के अधीन सामान्य एवं संपूर्ण निरस्त्रीकरण के लिए, जिनमें आणविक एवं परंपरागत अस्त्र-शस्त्र दोनों सम्मिलित हैं, सतत् प्रयास करते रहेंगे।

अनुच्छेद 3

समस्त राष्ट्र और सभी देशों की जनता की समानता के, चाहे उनका कोई भी धर्म या जाति हो, उच्च आदर्श के प्रति अपनी निष्ठा से प्रेरित होकर महान संविदाकारी पक्ष उपनिवेशवाद और जातिवाद के सभी रूपों की निंदा करते हैं और उन्हें पूर्णतया लुप्त कर देने के प्रयास के संकल्प में पुनः आस्था प्रकट करते हैं।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति तथा उपनिवेशवाद एवं जातिवाद के विरुद्ध संघर्ष करने वाले सभी देशों की जनता की उचित आकांक्षाओं का समर्थन करने के लिए

महान संविदाकारी पक्ष दूसरे राज्यों के साथ सहयोग करेंगे।

अनुच्छेद 4

सोवियत समाजवादी गणतंत्र संघि की शांतिप्रिय नीति का भारत गणतंत्र सम्मान करता है, जिसका उद्देश्य सभी राष्ट्रों के साथ मित्रता और सहयोग को सुदृढ़ करना है।

सोवियत समाजवादी गणतंत्र संघ भारत की गुटमुक्त नीति का सम्मान करता है और इसमें पुनः आस्था प्रकट करता है कि विश्व शांति और अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा को बनाये रखने तथा संसार में तनाव को कम करने में इस नीति का महत्वपूर्ण स्थान है।

अनुच्छेद 5

विश्वशांति एवं सुरक्षा को सुनिश्चित करने में गहरी अभिरुचि रखते हुए तथा इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में पारस्परिक सहयोग को बड़ी महत्ता देते हुए महान संविदाकारी पक्ष दोनों राज्यों के हितों को प्रभावित करने वाली मुख्य अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के बारे में प्रमुख राज नेताओं के बीच गोष्ठी और विचारों के आदान-प्रदान, दोनों सरकारों के विशेष दूतों तथा सरकारी प्रतिनिधि-मंडलों की यात्रा एवं राजनयिक माध्यमों के द्वारा बराबर संपर्क बनाये रखेंगे।

अनुच्छेद 6

दोनों के बीच आर्थिक, वैज्ञानिक एवं तकनीकी सहयोग को पूरी महत्ता देते हुए महान संविदाकारी पक्ष परस्पर लाभकारी एवं व्यापक सहयोग को इन क्षेत्रों में बराबर सुदृढ़ एवं विस्तृत करते रहेंगे तथा 26 दिसम्बर 1970 के भारत-सोवियत व्यापार समझौते के अंतर्गत निकटस्थ देशों के साथ उल्लिखित विशेष व्यवस्था एवं वर्तमान समझौतों के अध्यधीन समानता, पारस्परिक लाभ तथा अति अनुगृहीत राष्ट्र के प्रति व्यवहार के आधार पर व्यापार, परिवहन और संचार का विस्तार करेंगे।

अनुच्छेद 7

महान संविदाकारी पक्ष विज्ञान, कला, साहित्य, शिक्षा, जन-स्वास्थ्य, प्रैस, रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा, पर्यटन और खेल के क्षेत्रों में आपसी संबंध एवं संपर्क को और अधिक विकसित करेंगे।

अनुच्छेद 8

दोनों देशों के बीच विद्यमान परंपरागत मित्रता के अनुसार महान संविदाकारी पक्षों का प्रत्येक पक्ष निष्ठापूर्वक घोषित करता है कि वह किसी भी ऐसे सैनिक गठबंधन में, जो दूसरे पक्ष के विरुद्ध हो, न सम्मिलित होगा और न भाग लेगा।

प्रत्येक महान संविदाकारी पक्ष वचनबद्ध है कि वह दूसरे पक्ष पर किसी प्रकार का आक्रमण नहीं करेगा और अपने क्षेत्र में किसी प्रकार के ऐसे कार्य को

नहीं होने देगा जिससे दूसरे पक्ष की सैनिक क्षति होने की आशंका हो।

अनुच्छेद 9

प्रत्येक महान संविदाकारी पक्ष वचनबद्ध है कि वह किसी तीसरे पक्ष को जो महान संविदाकारी पक्ष के दूसरे पक्ष के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष में लगा हो, किसी प्रकार की सहायता नहीं देगा। दोनों में से किसी के पक्ष पर आक्रमण होने या आक्रमण का खतरा उपस्थित होने पर महान संविदाकारी पक्ष शीघ्र ही परस्पर विचार-विमर्श करेंगे ताकि ऐसे खतरे को समाप्त किया जाय तथा दोनों देशों की शांति और सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए समुचित प्रभावकारी पग उठाये जायें।

अनुच्छेद 10

प्रत्येक महान संविदाकारी पक्ष निष्ठापूर्वक घोषित करता है कि वह किसी भी एक या एक से अधिक राज्यों के साथ कोई भी गुप्त या प्रकट दायित्व अपने ऊपर नहीं लेगा जो इस संधि के प्रतिकूल हो। महान संविदाकारी पक्षों का प्रत्येक पक्ष यह भी घोषित करता है कि उसका किसी राज्य या राज्यों के साथ न कोई ऐसा वर्तमान दायित्व है और न भविष्य में वह कोई ऐसा दायित्व लेगा जिससे दूसरे पक्ष को किसी प्रकार की सैनिक हानि हो सकती हो।

अनुच्छेद 11

यह संधि 20 वर्षों की अवधि के लिए की गई है और यदि महान संविदाकारी पक्षों में से एक पक्ष संधि के समाप्त होने के 12 महीने पूर्व दूसरे पक्ष के पास नोटिस देकर संधि को समाप्त करने की इच्छा घोषित न करे तो प्रत्येक 5 वर्ष की अवधि के बाद स्वतः इसकी अवधि बढ़ जायेगी। यह संधि अनुसमर्थन के अधीन होगी और अनुसमर्थन के दस्तावेजों के आदान-प्रदान के दिन से लागू होगी। दस्तावेजों का यह आदान-प्रदान संधि पर हस्ताक्षर हो जाने के बाद एक महीने के भीतर मास्को में होगा।

अनुच्छेद 12

महान संविदाकारी पक्षों के बीच इस संधि के किसी एक या एकाधिक अनुच्छेद की व्याख्या में किसी प्रकार का अंतर उत्पन्न होने पर शांतिपूर्ण उपायों, पारस्परिक सम्मान और सूझबूझ द्वारा द्विपक्षीय ढंग से उसे निबटाया जायेगा।

उपरोक्त पूर्णाधिकारियों ने वर्तमान संधि पर हिंदी, रूसी और अंग्रेजी में हस्ताक्षर कर दिये हैं, इन पर उन्होंने अपनी मुहर लगा दी है और इस संधि के सभी पाठ समान रूप से प्राधिकृत हैं।

आज, नई दिल्ली में, ईस्वी सन् एक हजार नौ सौ इकहत्तर के अगस्त

मास के नवे दिन तदनुसार शक संवत एक हजार आठ सौ तिरानवे के श्रावण मास के अठारहवें दिन यह संधि संपन्न हुई ।

भारत गणतंत्र की ओर से	सोवियत समाजवादी गणतंत्र संघ की ओर से
(ह०) स्वर्णसिंह	**(ह०) अ०अ० ग्रोमिको**
विदेश मंत्री	**विदेश मंत्री**

परिशिष्ट-ख

प्रतिरक्षा व वैदेशिक मामलों पर प्रस्तावों की तिथि-क्रमानुसार सूची

वर्ष	प्रस्ताव संख्या	दिनांक	स्थान	प्रसंग	अध्याय	पृष्ठ संख्या
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)
1952	52.09	14 जून	दिल्ली	के०का०स०	2	21
	52.13	31 दिसम्बर	कानपुर	पहला सा०अ०	2	22
	52.14	31 दिसम्बर	कानपुर	पहला सा०अ०	2	22
	52.26	31 दिसम्बर	कानपुर	पहला सा०अ०	2	22
1953	53.03	4 जुलाई	दिल्ली	के०का०स०	2	24
	53.04	4 जुलाई	दिल्ली	के०का०स०	2	25
	53.09	15 अगस्त	इलाहाबाद	भा०प्र०स०	2	25
	53.15	20 दिसम्बर	दिल्ली	के०का०स०	2	26
	53.16	20 दिसम्बर	दिल्ली	के०का०स०	2	27
	53.17	20 दिसम्बर	दिल्ली	के०का०स०	2	28
1954	54.08	25 जनवरी	बम्बई	दूसरा सा०अ०	2	29
	54.10	25 जनवरी	बम्बई	दूसरा सा०अ०	2	31

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)
1954 जारी	54.18	8 मई	दिल्ली	के०का०स०	2	32
	54.19	8 मई	दिल्ली	के०का०स०	2	32
1955	55.08	1 जनवरी	जोधपुर	तीसरा सा०अ०	2	33
	55.09	1 जनवरी	जोधपुर	तीसरा सा०अ०	2	34
	55.10	1 जनवरी	जोधपुर	तीसरा सा०अ०	2	35
	55.16	15 अप्रैल	गोकाक	के०का०स०	2	35
	55.23	28 अगस्त	कलकत्ता	भा०प्र०स०	2	37
	55.25	28 अगस्त	कलकत्ता	भा०प्र०स०	2	39
	55.26	28 अगस्त	कलकत्ता	भा०प्र०स०	2	39
	55.31	23 अक्तूबर	दिल्ली	के०का०स०	2	39
1956	56.04	19 फरवरी	दिल्ली	के०का०स०	2	40
	56.07	21 अप्रैल	जयपुर	चौथा सा०अ०	2	40
	56.10	21 अप्रैल	जयपुर	चौथा सा०अ०	2	42
	56.11	21 जुलाई	दिल्ली	के०का०स०	2	43
	56.18	6 अक्तूबर	पूना	के०का०स०	2	43
	56.25	30 दिसम्बर	दिल्ली	पांचवां सा०अ०	2	44
	56.28	30 दिसम्बर	दिल्ली	पांचवां सा०अ०	2	45

1957	57.03	20 अप्रैल	जौनपुर	के०का०स०	2	45
	57.12	16 अगस्त	विलासपुर	भा०प्र०स०	2	46
	57.18	24 नवम्बर	हैदराबाद	के०का०स०	2	48
	57.19	24 नवम्बर	हैदराबाद	के०का०स०	2	49
	57.20	24 नवम्बर	हैदराबाद	के०का०स०	2	50
	57.23	24 नवम्बर	हैदराबाद	के०का०स०	2	51
1958	58.07	5 अप्रैल	अम्बाला	छठा सा०अ०	2	52
	58.09	19 जुलाई	बम्बई	के०का०स०	2	53
	58.10	19 जुलाई	बम्बई	के०का०स०	2	54
	58.17	19 जुलाई	बम्बई	के०का०स०	2	56
	58.18	12 अक्तूबर	दिल्ली	के०का०स०	2	56
	58.19	12 अक्तूबर	दिल्ली	के०का०स०	2	57
	58.22	12 अक्तूबर	दिल्ली	के०का०स०	2	58
	58.26	28 दिसम्बर	बंगलौर	सातवां सा०अ०	2	59
	58.27	28 दिसम्बर	बंगलौर	सातवां सा०अ०	2	61

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)
1959	59.02	15 मार्च	दिल्ली	के०का०स०	2	62
	59.06	8 जुलाई	पूना	भा०प्र०स०	2	63
	59.10	20 सितम्बर	दिल्ली	के०का०स०	2	65
	59.12	20 सितम्बर	दिल्ली	के०का०स०	2	66
	59.13	6 दिसम्बर	सूरत	के०का०स०	2	67
	59.15	6 दिसम्बर	सूरत	के०का०स०	2	68
1960	60.03	25 जनवरी	नागपुर	आठवां सा०अ०	2	70
	60.04	25 जनवरी	नागपुर	आठवां सा०अ०	2	72
	60.06	25 जनवरी	नागपुर	आठवां सा०अ०	2	75
	60.10	20 मार्च	दिल्ली	के०का०स०	2	76
	60.13	1 जून	दिल्ली	के०का०स०	2	77
	60.14	1 जून	दिल्ली	के०का०स०	2	77
	60.20	28 अगस्त	हैदराबाद	भा०प्र०स०	2	78
1961	61.02	1 जनवरी	लखनऊ	नवां सा०अ०	2	80
	61.03	1 जनवरी	लखनऊ	नवां सा०अ०	2	80

	61.09	1 जनवरी	लखनऊ	नवां सा०अ०	2	82
1962	62.03	24 मई	कोटा	भा०प्र०स०	2	84
	62.04	24 मई	कोटा	भा०प्र०स०	2	84
	62.05	24 मई	कोटा	भा०प्र०स०	2	85
	62.10	29 सितम्बर	राजामुंदरी	के०का०स०	2	86
	62.14	31 अक्तूबर	दिल्ली	के०का०स०	2	87
	62.16	30 दिसम्बर	भोपाल	दसवां सा०अ०	1	5
	62.17	30 दिसम्बर	भोपाल	दसवां सा०अ०	1	5
	62.18	30 दिसम्बर	भोपाल	दसवां सा०अ०	2	89
	62.21	30 दिसम्बर	भोपाल	दसवां सा०अ०	2	90
1963	63.01	20 जनवरी	दिल्ली	के०का०स०	2	91
	63.02	6 अप्रैल	दिल्ली	के०का०स०	2	93
	63.05	6 अप्रैल	दिल्ली	के०का०स०	2	94
	63.11	13 जून	इलाहाबाद	के०का०स०	2	94
	63.13	12 अगस्त	दिल्ली	भा०प्र०स०	2	95
	63.18	3 दिसम्बर	दिल्ली	के०का०स०	2	96
	63.22	30 दिसम्बर	अहमदाबाद	ग्यारहवां सा०अ०	2	96

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)
1963(जारी)	63.24	30 दिसम्बर	अहमदाबाद	ग्यारहवां सा०अ०	2	98
	63.26	30 दिसम्बर	अहमदाबाद	ग्यारहवां सा०अ०	2	100
	63.27	30 दिसम्बर	अहमदाबाद	ग्यारहवां सा०अ०	2	101
1964	64.01	1 मार्च	दिल्ली	के०का०स०	2	101
	64.03	1 मार्च	दिल्ली	के०का०स०	2	104
	64.04	25 मई	दिल्ली	के०का०स०	2	105
	64.06	25 मई	दिल्ली	के०का०स०	2	108
	64.08	10 अगस्त	ग्वालियर	भा०प्र०स०	2	111
	64.11	4 दिसम्बर	पटना	के०का०स०	2	113
	64.13	4 दिसम्बर	पटना	के०का०स०	1	7
	64.14	4 दिसम्बर	पटना	के०का०स०	2	114
	64.16	4 दिसम्बर	पटना	के०का०स०	2	115
1965	65.01	24 जनवरी	विजयवाड़ा	बारहवां सा०अ०	2	116
	65.13	3 अप्रैल	जयपुर	के०का०स०	2	119
	65.14	10 जुलाई	जबलपुर	के०का०स०	2	121
	65.19	17 अगस्त	दिल्ली	भा०प्र०स०	2	123

	65.24	27 सितम्बर	दिल्ली	के०का०स०	1	8
	65.25	27 सितम्बर	दिल्ली	के०का०स०	1	8
	65.26	27 सितम्बर	दिल्ली	के०का०स०	2	124
1966	66.01	15 जनवरी	कानपुर	के०का०स०	2	126
	66.04	15 जनवरी	कानपुर	के०का०स०	2	128
	66.06	1 मई	जलन्धर	तेरहवां सा०अ०	1	9
	66.15	12 जुलाई	लखनऊ	के०का०स०	2	129
	66.17	12 जुलाई	लखनऊ	के०का०स०	2	131
1967	67.09	30 जून	शिमला	के०का०स०	2	132
	67.13	30 जून	शिमला	के०का०स०	2	133
	67.20	26 दिसम्बर	कालीकट	चौदहवां सा०अ०	2	134
	67.26	26 दिसम्बर	कालीकट	चौदहवां सा०अ०	2	136
1968	68.03	22 मार्च	भोपाल	के०का०स०	2	136
	68.04	22 मार्च	भोपाल	के०का०स०	1	10
	68.14	7 सितम्बर	इंदौर	भा०प्र०स०	2	137

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)
1969	69.07	26 अप्रैल	बम्बई	पन्द्रहवां सा०अ०	2	140
1970	70.04	18 जुलाई	चंडीगढ़	भा०प्र०स०	2	145
	70.09	6 नवम्बर	दिल्ली	के०का०स०	2	147
1971	71.02	2 जुलाई	उदयपुर	सत्रहवां सा०अ०	2	148
	71.05	13 अगस्त	दिल्ली	के०का०स०	2	152
	71.06	9 अक्तूबर	मद्रास	के०का०स०	2	154
	71.08	27 नवम्बर	गाजियाबाद	भा०प्र०स०	1	12
1972	72.01	27 जनवरी	भोपाल	के०का०स०	1	15
	72.02	27 जनवरी	भोपाल	के०का०स०	2	156
	72.03	27 जनवरी	भोपाल	के०का०स०	1	16
	72.04	20 मार्च	दिल्ली	के०का०स०	2	157
	72.07	7 मई	भागलपुर	भा०प्र०स०	2	158
	72.11	7 मई	भागलपुर	भा०प्र०स०	2	159
	72.13	17 जुलाई	दिल्ली	के०का०स०	2	161
	72.19	20 नवम्बर	जयपुर	के०का०स०	2	164
	72.20	20 नवम्बर	जयपुर	के०का०स०	2	166

अनुक्रमणिका

अणु अस्त्र प्रसारबंदी संधि से सावधान 10
अत्याचार, हृदय विदारक 109
अन्तर्राष्ट्रीय—
    झमेलों में अनावश्यक उलझाव 27, 29
    राजनीति में मजहब 116
अनुच्छेद 370 की समाप्ति 46, 48, 113
अफ्रीकी राष्ट्रों का आर्थिक विकास 118
अब्दुल्ला—
    की—
        गतिविधियां, विदेशों में 119
        पाकिस्तान यात्रा 106
        प्रस्तावित पीकिंग यात्रा 119
        हज यात्रा 114
    पिंडी-पीकिंग षडयन्त्र 120
अमरीकी-पाक द्विपक्षीय समझौता 62
अरब-इसराइल युद्ध 132
अल्पसंख्यकों की वृद्धि की गति 145

आक्रमण—
    कारी से वार्ता नहीं 88
    की समाप्ति 92
    पूर्व की यथास्थिति 121
आंग्ल-अमरीकी रवैया 51
आत्म-रक्षा दल 57
आव्रजन कानून, ब्रिटिश 136

उपनिवेशवाद की समाप्ति 32

अंग्रेजों का इनकार, स्वतन्त्रता देने से 119

कच्छ समझौता—
    रद्द करो 121
    विरोधी विराट प्रदर्शन 123
कम्युनिस्टों से सावधान 88

करांची समझौता 36
करगिल की चौकियां 156
काश्मीर—
  का—
    एकीकरण 45
    विभाजन, युद्ध-विराम रेखा के आधार पर 106
  के लिए वार्ता, आक्रांत 157
  चाऊ-निक्सन विज्ञप्ति में, 158
  प्रश्न पर पुनः चर्चा नहीं 107
  पर वार्ता नहीं 95
  पाक आक्रांत, 160
  समस्या 105
  संबंधी नेहरू की गलतियां 105
  संयुक्त राष्ट्रसंघ में, 48
कूटनीतिक—
  व प्रचार अभियानों की विफलता 91
  क्षेत्र 88
कोटलेवाला समझौता 115
कोलम्बो प्रस्ताव 91

खतरनाक संभावनाएं 56
खण्ड समझौता नहीं 157

गोवा मुक्ति आंदोलन 35
गोवानी स्वतंत्रता सेनानियों की रिहाई 45, 136

घुसपैठ, कच्छ से काश्मीर तक 42

चीन—
  का—
    बढ़ता आक्रमण 86
    भारी आक्रमण 87
  की—
    आक्रमणकारी नीति के बारे में चेतावनी 26
    बढ़ती शत्रुता 84
  के साथ—
    दौत्य संबंधों का विच्छेद 84, 133
    पाकिस्तान की सांठ गाठ 95
    सहज स्थिति 13
    1954 संधि की समाप्ति 134

चीनी—
  अत्याचार 63
  आक्रमण 5
    — की समाप्ति 67, 72, 94
    — संबंधी 1953 की चेतावनी 72
  घुसपैठ, भारत में 65
  तैयारी, भावी हमले की 78
  नक्शों में भारतीय भू-भाग 26
  फन्दे से सावधान 104
  सैनिक अड्डे, खतरनाक 26
  हमले —
    का दृढ़ीकरण 67
    के विरुद्ध गारंटी, और 77

छदबेट की वापसी 156

'जय-जवान' पखवाडा 165
जाति—
  नाश के विरुद्ध विश्व जनमत का जागरण 104
  विनाश, इतिहास का निकृष्टतम 146

ताशकन्द—
  घोषणा 9, 126
  से होशियार, विधानसभा चुनावों के बाद एक और 156
तिब्बत—
  का असैनिकीकरण 92
  की स्वतंत्रता 63
तिब्बती स्वतंत्रता सेनानियों की सहायता 88
तुकेरग्राम व लखीमपुर की घटनाएं 57
तुष्टिकरण की नीति 66, 102

थारपारकर के निवासी 156

द्विपक्षवाद, संदेहास्पद 162
द्विराष्ट्रवाद की अन्त्येष्टि 149
दृढता से काम लो,सप्ताह 76

ध्रुव नये लगाव, नये 66'

नहरी-पानी व सीधी रेल 81
नेहरू —
  की कल्पना का 'स्वप्न-जगत' 99

चाऊ वार्ता 76
नून समझौता 56
निर्गुटीय व स्वतंत्र नीति 53
निशस्त्रीकरण 52
निष्क्रमण-पत्रों पर पाबंदी 47
नीति—
अयथार्थवादी दुर्बल, 97
गुपचुप की, 75, 78
समसहयोग के आधार पर दृढ़ व यथार्थवादी, 81

प्रतिरक्षा—
उद्योगों में उत्पादन 89
कर्मचारियों के वेतनमान 16
में—
काम चलाऊपन 14
जन-सहयोग 14
व विदेश नीतियों के—
लिए संयुक्त समिति 134
विभिन्न परिक्रमा-पथ 135
सामर्थ्य में वृद्धि 74
सेनाओं का विस्तार व सुधार 9
प्रतिरोधक—
आवश्यक, परमाणविक 7, 11
की लागत, परमाणविक 7
विशाल व प्रभावशाली, 93
पश्चिमी एशिया में —
कूटयुक्ति, महाशक्तियों की 132
शांति के लिए 132
पाक —
आक्रमण, प्रकारान्तर से 150
आधिपत्य के विरुद्ध पूर्वी बंगाल का असंतोष 85
चीन की सांठ-गांठ 134
व्यूह रचना, भावी आक्रमण के लिए 122
पाकिस्तान—
की —
फिर सैनिक तैयारियां 129
मुक्ति, विभाजन का अन्त व 101
शत्रुता 59
के प्रति—
'जैसे को तैसा' की नीति 69, 96
दृढ़ व यथार्थवादी नीति 59
भारतीय नीति का पुनर्मूल्यांकन 96

के साथ—
स्थायी शांति 159
संयुक्त सुरक्षा समझौता 69
को सैनिक सहायता 27, 29, 62
द्वारा—
अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध आचार संहिता का हनन 8
काश्मीरी भूमि का चीन को भूदान 93
फिर युद्ध की ओर 129
बेतुका, 148
में सैनिक अधिनायकवाद 57
से—
भूमि की मांग 40, 85
समझौता 75
पाकिस्तानी—
खतरे में वृद्धि, सैनिक सहायता से 42
दुराग्रह 164
नरमेध के तीन उद्देश्य 149
रवैया 9, 80
संविधान 22
पिंडी-पीकिंग गठजोड़ 9
पीकिंग-पिंडी-जकार्ता धुरी 126
पुनर्वास—
अधूरा, 51
कार्य, विस्थापित व 50
के विकल्प 47
युद्धोत्तर, 15
विस्थापितों का, 109
पूर्वी बंगाल—
और पाकिस्तानी नीतियां 32
के—
अल्पसंख्यक 35, 39, 84, 145
अल्पसंख्यकों पर सम्मेलन 108
विस्थापितों की समस्या 40, 46, 108
हिन्दुओं —
के प्रति भारत का दायित्व 50
को बचाओ 103
की मांग, स्वाधीन 141
द्वारा पाक सांप्रदायिकता का विरोध 32
में—
पश्चिमी पाकिस्तान का उपनिवेश 102
स्वतंत्रता आंदोलन 131
व पख्तूनिस्तान, स्वाधीन 10

से भारी निष्क्रमण 22, 37, 40
पूर्वी व पश्चिमी बंगालों के बीच पारपत्र प्रणाली 23
पंच—
मांगी 89
शील (1954) समझौता 63

फ्रांसीसी बस्तियों की मुक्ति 34

बर्मा—
पर नये व पुराने ऋण 112
में राष्ट्रीयकरण 39
सरकार का रवैया 39
बहुध्रुवीय विश्व 93
बानवेल आयोग की शरारत 131
बालीद्वीप में ज्वालामुखी पीड़ित 94
बंगलादेश—
की अविलम्ब सहायता 151
को मान्यता, स्वाधीन 12, 148
जय, 158
नहीं, पाकिस्तान के अन्तर्गत 154
युद्ध 15

भारत—
का अपमान 59
की प्रभुसत्ता के प्रतिकूल 91
के लिए अपशकुन 57
चीन—
अधिकारी वार्ता 77
वार्ता की असफलता 80
संबंधों पर श्वेतपत्र 65
तिब्बत सीमा 65
नेपाल संबंध 85
पाक—
परस्परावलम्बन की मान्यता 80
युद्ध 124
वार्ता 25, 89
संयुक्त सुरक्षा 108,
संबंध 25, 54, 68, 130
समस्याएं 25
शिखर वार्ता 159
रूस संधि 152
विरोधी अभियान 54

भारतवंशी—
ब्रिटिश पारपत्रधारी, 136
राज्यविहीन, 49
—समुद्रपार 61
श्रीलंका,—
व बर्मा में 49, 111
स्थित 39, 56, 115
भारतवंशियों—
की संपत्ति, बर्मा-स्थित 128
की दुर्दशा—
बर्मा में, 100
समुद्रपार, 21, 101, 111
भारतीय
बर्मा से उजड़े, 114
भूभागों का भूदान 69, 75
मताधिकार से वंचित, 61
भारतीयकरण, भारतीय दूतावासों का 119
भारतीयों से भेदभाव 115
भुट्टो —
का आवाहन, मुक्ति संग्राम के लिए 163
के तीन उद्देश्य 161

म्यूनिख नहीं, और 73
माउण्टबैटन प्रस्ताव, गैरकानूनी 105
मॉरीशस का स्वतंत्रता संग्राम 131
मैत्री नहीं, असमान देशों में 138

यथार्थ की भूमिका का अभाव 90
युद्ध—
अपराधियों पर मुकद्दमा 160
लक्ष्य 5
व युद्ध विराम 5
वीर 5, 8
सिद्धता 6
योजना का पुर्ननिर्धारण, तृतीय 89

राष्ट्र—
प्रेम और एकता का ज्वार 94
मंडल, भानमती का कुनबा 142
राष्ट्रों का उदय, नव स्वतंत्र 70
राष्ट्रीय—
प्रतिरक्षा कार्यक्रम 28, 30

सुरक्षा 12
रूस—
की घिरती छाया 148
के साथ बढ़ता हुआ व्यामोह 139
चीन संघर्ष 140
रूसी —
रवैया 137
हथियार, पाकिस्तान को 137
हमला, चेकोस्लोवाकिया पर 138
रंगभेद नीति, दक्षिणी अफ्रीका की 22

विदेश नीति 21, 33, 52
— अयथार्थवादी 51
का—
पुनर्निर्धारण 142
पुनर्मूल्यांकन, 125
पुनरेक्षण व पुनर्निर्धारण 90, 98, 140
लक्ष्य 21
की सफलता 34
के सार व स्तर में गिरावट 147
न तो राष्ट्रसंगत न युक्तिसंगत 150
पर वक्तव्य 116
में आवश्यक बदल 117
विदेश मंत्रियों की बैठक स्थगित 123
विदेशी—
गुप्तचर 166
गुप्तचरी के लिए जांच आयोग 166
बस्तियां 21, 22, 24, 28, 31, 32
लॉबियों का सफाया 166
विदेशों में प्रचार 126
विभाजन—
का आधार 46
से कोई समस्या नहीं सुलझी 101
वियतनाम में अनुभव 141
विस्थापितों की कठिनाइयां, बर्मा से आये 128

शक्ति—
गुट 52, 71
गुटों के कूटचक्र 53
संतुलन, दक्षिणी-पूर्वी एशिया में 12
शिखर सम्मेलन—
की असफलता 77

वांछनीय, 70
शिमला—
में शर्मनाक समर्पण 161, 164
समझौते—
की अन्त्येष्टि 165
के बाद 164
श्रीलंका में —
जातिवादी दंगे 58
तमिल भाषा 43

स्थायी व न्यायपूर्ण शांति 52
स्वायत्त निर्णय अधिकार 53
स्वेज—
के पूर्व से पश्चिमी शक्तियों को हटना 141
में नौवहन 44
व हंगरी के संकट 44
संकट 43

समग्र—
समझौता —
कहां है 162
समुचित व अंतिम, 159
समझौते का आग्रह 90, 157
समझौते का उल्लंघन 116
समर्पण, लज्जाजनक 121
सर्वदलीय सहयोग 89
साम्प्रदायिकता के सामने समर्पण 41
साम्यवाद व नाजीवाद में अन्तर नहीं 138
सांस्कृतिक बंधन 118
सिंधी विस्थापित 165
सिलहट जिले के बारह थाने 60
सीमा पर उत्तेजनात्मक कार्यवाहियां 55
सुरक्षा—
खतरे में, भारतीय 64
परिषद की विफलता 124
सेना की वापसी 156
सैन्य बल 87
सैनिक—
उपकरण 88
प्रशिक्षण, आम 28, 30
संघर्ष के नये केन्द्र 116

संधि—
अनन्तकालीन, 152
दूसरों के साथ, ऐसी ही 153
संधियां, घिनौनी 73
संयुक्त राष्ट्रसंघ —
अधिक प्रभावी, 71, 82
का स्वार्थपूर्ण उपयोग 83
संसद का संघर्ष-प्रण, भारतीय 104

हमलावरों के झुंड, संभावित 86

भारतीय जनसंघ घोषणाएं व प्रस्ताव 1951-72 3

भारतीय जनसंघ
घोषणाएं व प्रस्ताव
1951-72

भाग 3

प्रतिरक्षा व वैदेशिक मामलों
पर
प्रस्ताव

12C/2068